

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182535

UNIVERSAL
LIBRARY

JUP—43—30 1-71—5,000

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H83
Accession No. P. G.
Author - 45K
य. वि. वि. स. ज. वि. वि. H4460
Title
कि. वि. वि. वि. 1963

This book should be returned on or before the date last marked below.

परिषद् ग्रन्थमालाका पन्द्रहवाँ ग्रन्थ

मध्ययुगीन संस्कृतिके ध्वंसावशेषोंमें अनुप्राणित रोमांचकारी घटनाओं
एवं अत्यन्त आकर्षक कथा-प्रसंगोंसे युक्त ऐतिहासिक उपन्यास

किरणप्रभा

(संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण)

मत्तदेव चतुर्वेदी



प्रकाशिका—
प्रमीला चतुर्वेदी
प्रभारी अध्यक्ष—
हिन्दी-साहित्य-सृजन-परिषद्
रासमण्डल, जौनपुर, उत्तर प्रदेश; भारत

लेखक—
सत्यदेव चतुर्वेदी
अधिष्ठाता एवं नियन्ता—
हिन्दी-साहित्य-सृजन-परिषद्
रासमण्डल, जौनपुर, उत्तर प्रदेश; भारत

संस्करण
प्रथम—१९६२
द्वितीय—१९६६

मूल्य
छः रुपए
६.००

सर्वाधिकार लेखक द्वारा स्वरक्षित

मुद्रक
काशीनाथ गुप्त
श्री सीताराम प्रेस, वाराणसी-१



प्रस्तुत संस्करण—

प्रिय पुत्र श्रीहरिहरप्रसाद चतुर्वेदी 'राजीव'

को,

जिनके सुसंस्कृत जीवनका उद्घाटन

मेरा

एक अमूल्य साहित्यिक संस्करण है;

हृदयकी समस्त शुभकामनाओंके साथ—

सस्नेह समर्पित

—लेखक

कृतिके सम्बन्धमें

भारतके अनेक विश्वविद्यालयोंके बी. ए. एवं एम. ए. की परीक्षा-के लिए स्वीकृत शोध-ग्रंथ—‘हिन्दी-उपन्यास एवं यथार्थवाद’ में डा० त्रिभुवनमिहने प्रस्तुत कृतिके संबंधमें अपना मत इस प्रकार व्यक्त किया है—“× × × ‘किरणप्रभा’ × × एक ऐतिहासिक उपन्यास है। यह महाराज छत्रसाल एवं उनकी दृढ़ चरित्र रानी किरणप्रभाके जीवन की उत्कृष्ट एवं उत्प्रेरकघटनाओंपर आधारित है। यह अनेक मर्मस्पर्शी, रोमांचकारी एवं आकर्षक कथा-प्रसंगोंसे परिपूर्ण रचना है।”

—पृष्ठ-६५६ ।

प्रस्तुत रचनाकी औपन्यासिक सम्बेदना ऐतिहासिकनाके ध्वंसा-वशिष्ट खण्डहरोंमें प्रस्फुटित होकर जीवन्त वर्तमानके बृहत्तर वाता-यनमें आनुभूतिक चेतनाकी उर्वर धरतीसे पोषण-तत्व लेते हुए अपने साहित्यिक व्यक्तित्वकी इकाइयोंका संगठन करती है। वासनाकी स्मशान-स्थलीपर उम सम्बेदना-लोकके महनीय चैतन्यका अवतरण होता है, जो उपन्यासके कथानकोंकी भाव-दशाओंको सामंतिक शिविरों-में लेजाकर भी उन्हें लोक-जीवनके समतल प्रवहमाण भी कर डलता है।

मैं समझती हूँ, प्रस्तुत कृतिके शास्त्रीय अनुशीलनमें लेखककी एक अन्य रचना—‘रानी तिष्यरक्षिता’ का वस्तु-विन्यास अनुप्रेक्ष्य हो जाता है, क्योंकि सम्भवतः उसके इत्तवृत्तकी प्रतिक्रिया ही ‘किरणप्रभा’ है। दोनों ही करुणरससिक्त ऐतिहासिक उपन्यास हैं। दोनोंकी मूल नायिकाएँ—तिष्यरक्षिता एवं किरणप्रभा—जीवन-दर्शनके दो पृथक अध्यायोंकी मार्मिक अभिव्यक्तियाँ हैं। तात्त्विक सौन्दर्यके भौतिक पैमानेमें तिष्य-

रक्षिताके आकारगत रूपनिरंजनाके सत्य एवं शिव-विहीन सीमा-रेखा-में आनेवाली विकृतिमयी भाव-यात्रा करनेवाले बौद्धपरिव्राजक सम्राट् अशोक जहाँ एक ओर धर्म-च्युत हो जाते हैं, वहीं दूसरी ओर रानी किरणप्रभाके सौन्दर्य-संगठनके अन्तर्गत 'सत्य' एवं 'शिव' की ज्योतिर्गमयी इकाइयाँ भी समन्वित होकर तत्त्व-दर्शनके विभिन्न सोपानों—'प्रेटी', 'ग्रेस', एण्ड 'व्यूटी'—की ओर बढ़ चलती हैं। महाराज छत्र-साल भी 'मेग्नीफिसेण्ट' की उच्च सौन्दर्य-भूमिपर धीरे-धीरे पहुँच जाते हैं, जब वे किरणप्रभाके सौंदर्यकी परिभाषा में उद्भ्रान्त हो जाते हैं। नवाब रूहेलाका रोमाञ्चकारी षड्यंत्र इसी सिद्धान्तिक पृष्ठभूमिका एक गहन निदर्शन है। हाँ, किरणप्रभाका 'मेग्नीफिसेण्ट' सौन्दर्य 'सब्लाइम' नहीं हो पाता कि तभी कथा समाप्त हो जाती है और इस प्रकार पाश्चात्य-सौन्दर्य-सिद्धान्तके पञ्चसूत्र—'प्रेटी', 'ग्रेस', 'व्यूटी', 'मेग्नीफिसेण्ट' और 'सब्लाइम'—मेंसे लेखकका भावादरोहण प्रारम्भिक चतुर्धा मानदण्डोंमें पर्यवसित हो जाता है। मूलतः रानी तिष्यरक्षिता यदि सौन्दर्यकी वेगवती नदी है, जिसकी लहर-लहरपर उन्मत्तताका वासनामय नर्तन है, तो महारानी किरण भी 'सत्य' 'शिव' एवं 'सुन्दर' की एक ऐसी प्रशान्त त्रिपथगा है, जो बाधाओंकी पार्वत्य शृंखलाओंको विजितकर जीवनकी व्यापकताको अपने आदर्शोंसे वन्दनीय बना देती है।

जहाँ तक द्वन्द्वोंका प्रश्न है, अभी तक के उपन्यासोंमें कुछ को छोड़ अधिकांशतः 'काँशस' (चेतन-खण्ड) एवं 'अनकाँशस' (अचेतन-खण्ड) के बीच चलनेवाले संघर्ष ही चित्रणमें प्रमुखता पाए हैं, किन्तु लेखकने सिद्धान्तकी नयी भूमिमें आकर 'अनकाँशस' एवं 'सबकाँशस' के चेतन-स्तरपर संघर्षोंके प्रतिपादन करनेका नितान्त संस्तुत्य प्रयास किया है। चैतन्यके इस द्विकोटिक खण्डमें चलनेवाले संघर्षमें लेखक सफलतापूर्वक स्पष्ट कर देता है कि वेदनाके मञ्चपर जीवनके अभिनयमें सुख एक आकस्मिक यवनिकाका पतन है। प्रस्तुतकृतिका यह संदेश

उपन्यासकारके यथार्थवादी जीवन-दर्शनका अनूदित संस्करण भी है। 'प्रोजेक्टिव टेक्नीक' (प्रक्षेपण पद्धति) के सिद्धान्तपर यदि प्राप्त विवरणोंका विश्लेषण किया जाय, तो यह तथ्य पूर्णतः स्पष्ट हो जाता है, "उपन्यासकारकी अभिनय-धारा भी कृतिके वस्तु-विन्यासमें व्यंग्यवत् संश्लिष्ट है।" इसीसे अनेक कटुसत्यां एवं विश्वासघातोंकी आनुभूतिक ऊष्मा अन्तस्पर्शिनी हो उठी है।

जहाँ तक रस-निष्पत्तिका प्रश्न है, भयानक, अद्भुत एवं करुणाकी त्रिवेणी पूरे उपन्यासकी धरतीपर—'आलम्बन', 'उद्दीपन', 'अनुभाव' एवं 'संचारियों'में बँटकर—बही है। शृंगारके कुछ तत्व-स्मृति, गुण-कथन, चित्र-दर्शन आदि तथा हास्य एवं वीर रस भी आते गए हैं। लेखककी दृष्टिमें प्रेम एवं सौन्दर्य जीवनके शाश्वत एवं सनातन आकर्षण हैं। प्रणय मानव-जीवनकी एक रचनात्मक शक्ति है, जिसकी उपेक्षा आदर्शवाद नहीं, प्रवञ्चनावादके समानान्तर कोई मानसिक वृत्ति ही है।

'यत्र तु रतिः प्रकृष्टा नाभीष्टमुपैति विप्रलम्भोऽसौ' का सिद्धान्त-सूत्र ही रानी किरणप्रभाके मार्मिक आख्यानका पटाक्षेप करता है, जहाँसे शाश्वत करुणाका जन्म होता है। इस प्रकार उपन्यासका उद्घाटन भयानक रस द्वारा कराकर करुणारस द्वारा समावर्त्तन समापन करा लेखक पाठककी हृदयस्थलीमें एक व्यथा छोड़ देता है, जिसका कोई विकल्प नहीं है; एक ऐसी व्यथा जो करुणाके उस क्षितिजको पार कर जाती है, जहाँसे अश्रुकी वर्षा प्रारम्भ होती है। हृदय-ताप वायव्य हो जाता है।

'पोयटिक जॅस्टिस्' भी साहित्यकी एक गणमान्य विशेषता है। विचारकोंने न्यायके पाँच भेद किए हैं—'डिवाइन जॅस्टिस्' (दैवी न्यायदण्ड), 'सोशल जॅस्टिस्' 'नेचुरल जॅस्टिस्', 'पोलोटिकल जॅस्टिस्' और 'पोयटिक' जॅस्टिस्' के प्रारम्भिक चतुर्धा न्याय दोषग्रस्त न्याय है। लेखक इन चार न्यायदण्डोंसे ऊपर उठकर 'पोयटिक जॅस्टिस्'

के धरातलपर आगे बढ़ता है, किन्तु उपन्यासके अन्तिम परिच्छेदमें 'पोलोटिकल जॅस्टिस्' सशक्त हो उठता है। लेखक बाध्य है; इतिहास साक्षी है—अन्तिम परिच्छेदकी घटनाओंका। औरंगजेबके 'पोलोटिकल जॅस्टिस्'का स्वरूप भी इतिहास-सिद्ध है। शाहजहाँ बार-बार मुस्लिम-संगठनको 'काव्य-दण्ड' देता है। लेखक 'पोलोटिकल जॅस्टिस्' के प्रति क्षोभ प्रकट करता दिखायी देता है। औरंगजेब, शाहजहाँ एवं महाराज छत्रसालको जो दण्ड देता है, वह 'काव्य-दण्ड' नहीं, 'राज-दण्ड' है। महाराज इस योजना-सूत्रको छिन्न-भिन्न करनेका जो प्रयास करते हैं, वह 'पोयटिक-जॅस्टिस्'की प्राप्ति का ही अन्तिम प्रयास है। 'राज-दण्ड' को सिद्धान्तः 'डाकुइज्म' (दस्युवाद) में विप्लेष्टित किया जाता है। इस सैद्धान्तिक दस्युवादको गतिशील कर देता है। इस सक्रिय दस्युवादको खण्ड-खण्ड करनेके लिए ही शाहजहाँ एवं दाराशिकोहकी सद्भावनामें महाराज छत्रसाल अपने जीवनका बलिदान करते हैं। पूरे परिवारकी इस रोमांचकारी जीवनाहुतिके महामंत्रके बीच ही उपन्यासकी यवनिका का अन्तिम पतन होता है, जो बड़ा ही हृदयविदारक है।

पूरे उपन्यासमें लेखककी भाव-तंत्री इतनी सधी है कि मानव-जीवनके भाव-प्रकृतिका हर स्पन्दन उसे स्पंदित कर देता है और उसकी अभिव्यक्ति बिम्ब-प्रतिबिम्ब रूपमें आयोजित है।

इस प्रकार प्रस्तुत कृति भाव-विधा, चरित्र-विन्यास, इत्तवृत्त-निरूपण आदि औपन्यासिक तत्वोंकी दृष्टिसे पूर्ण उत्कृष्ट प्रमाणित होती है।

—प्रमीला चतुर्वेदी

प्रभारी अध्यक्ष—

हिन्दी-साहित्य-सृजन-परिषद

जौनपुर

‘हाज़िर करो ।’ ध्वनिमें तीव्रता लाते हुए, दृष्टि घुमाकर आज्ञा प्रदान की गयी ।

‘हुज़ूरका मतलब किमके हाज़िर करनेके लिए है ?’ प्रतिहारीकी समझमें न आया । सम्मान अभिवादन करते हुए उसने निवेदन किया—‘जो जहाँपनाहका हुक्म !’

‘हाँ; हाकिमसे जाकर कहो, उस रहज़नको हाज़िर करे । उसका इन्साफ होगा ।’ शासन-सूत्रमें शिथिलता आ जानेके भयसे आतंकित होकर सम्राट शाहजहाँ न्यायकी उपेक्षा नहीं करना चाहते थे ।

प्रतिहारी कक्षसे बाहर चला गया । उसने शाहंशाहकी आज्ञा बन्दी-गृहके उच्चाधिकारीके पास पहुँचा दी । चार सैनिकोंके साथ अधिकारी महोदय अपराधीको लिए पहुँचे । राज-सभामें पहुँचकर उसने सम्राटको अभिवादन किया । सम्राट शाहजहाँने क्रमशः उन सर्वोंपर दृष्टिपात किया ।

सम्राट शाहजहाँ स्वर्ण सिंहासनपर और उनकी सभामें सभी सदस्य अपने-अपने उपयुक्त स्थानोंपर बैठे थे । सबकी दृष्टि एक बार सम्राटकी ओर झुक गयी । इसके बाद क्रमशः सबकी निगाह अधिकारी, सैनिक एवं बन्दीकी ओर गयी । अधिकारी बन्दीको सम्राटके समक्ष खड़ाकर स्वयं सतर्क सैनिकोंके पार्श्वमें खड़ा हो गया ।

‘यही पिण्डारी दलपति शेरजङ्ग है ?’ सम्राट शाहजहाँने पूछा ।
उपस्थित सभासद शेरजङ्गकी ओर देखने लगे ।

‘जी हाँ; जहाँपनाह ! हुजूरके सामने डाकू शेरजङ्ग ही खड़ा है।’
अधिकारीने निवेदन किया।

‘निरीह निरपराध रिआयाको लूटनेवाला हमारे राज्यमें खलबली मचा रखनेवाला शेरजङ्ग यही है ?’ सिर हिलाकर सम्राटने फिर दूसरी बार भी पूछा और थोड़ा रुककर फिर कहा—‘ठीक है। इसके बाद की कार्यवाही हाज़िर करो।’

‘जो आज्ञा जहाँपनाह ! कहते हुए वाद-अधिकारीने निवेदन किया।

कार्यवाही प्रारम्भकी गयी। अभियोग पढ़कर सभामें सुनवाया गया। सम्राटने शेरजङ्गकी ओर दृष्टि धुमाकर पूछा—‘इस संबंधमें तुम्हें कुछ कहना है ?’

‘हुजूर मैंने किसी गरीब जनताको कभी नहीं लूटा है। मैंने हमेशा बड़े-बड़े धनियोंसे ही धन छीना है। किसी निरीहको मैंने कभी नहीं सताया है जहाँपनाह !’ शेरजङ्गने निवेदन किया।

‘शाही सेनाका मुकाबला भी तुमने यही सोचकर किया है कि मैं किसी गरीबके साथ नहीं लड़ रहा हूँ, क्यों, है न यही बात ?’

शेरजङ्ग मौन हो गया। उसकी दृष्टि नीचे हो गयी।

‘किन्तु किसी धनीको लूट लेनेसे राज्यमें शान्ति नहीं भंग होती ?’
सम्राटने पुनः शेरजङ्ग से पूछा।

शेरजङ्ग मौन था।

सम्राटने कहा—‘हमारे राजमें रिआयाको तुमने बड़ी तकलीफ दी है। तुम्हें माफ नहीं किया जा सकता। सभासदों ! शेरजङ्गने बहुत बड़ा जुर्म किया है; लिहाज़ा आपलोगोंका भी मैं विचार जानना चाहता हूँ।’ सभासदोंकी ओर देखकर सम्राट शाहजहाँने पूछा।

‘मैं तो जहाँपनाहके विचारोंसे ही सहमत हूँ। यदि किसी अपराधीको दण्ड दिए बिना ही छोड़ दिया गया, तो राज्यमें बड़ी अव्यवस्था उत्पन्न

हो जायगी और प्रजामण्डलमें मुगलशासनके प्रति जो आदर है, उसके बदले घोर नफरत पैदा हो जायगी । अतः अपने साम्राज्यमें शान्ति और सुव्यवस्था कायम रखनेके लिए ही दण्ड और पुरस्कार दोनोंकी ही व्यवस्था एक सफल शासकको, आवश्यकानुसार अपराधी और योग्य व्यक्तिके लिए रखनी चाहिये ।' दृढ़ चरित्र महाराज छत्रसालने गम्भीरतापूर्वक निवेदन किया ।

‘और यदि शेरजंग आपकी ही खिदमतके लिए भावी जीवनको बनाए रखना चाहे और फिर कभी प्रजामंडलको किसी प्रकारकी पीड़ा न पहुँचानेकी प्रतिज्ञा करे, तो राजभक्त व्यक्तिको क्षमा भी कर देनी चाहिए ।’ सर्वोच्च सप्तहजारी मन्सबदार एवं सम्राट् शाहजहाँकी मुसाहिबी इत्यादिकके प्रमुख सम्मानित व्यक्ति महाराज मानसिंहके पुत्र महाराज जगतसिंहने सम्राटकी ओर देखकर निवेदन किया ।

महाराज छत्रसाल एवं जगतसिंहकी विरोधी वार्त्ताओंने सम्राट् शाहजहाँके विचारोंमें अस्थिरता उत्पन्न कर दी । दृढ़ चरित्र गम्भीर व्यक्तित्व महाराज छत्रसालकी वार्त्ते अस्वीकृतकर सम्राट् न तो उनका अपमान करना चाहते थे और न सभामदोंमें सबसे अधिक सम्मान प्राप्त महाराजा जगतसिंहके विचारोंकी ही उपेक्षा करना चाहते थे । स्वयं ही उन्होंने पुनः विचार करना प्रारम्भ किया । सम्राटने दोनों सम्मानित सभासदोंका आदर करते हुए कहा—‘छत्रसालजी; जगतसिंहके विचारने आपको फिरसे सोचनेके लिए मजबूरकर दिया है, लिहाजा एक बार फिरसे सोचकर अपना विचार जाहिर करें ।’

‘जहाँपनाह ! अभी आपके समक्ष जगतसिंहने जो निवेदन किया है, यदि अपराधी शेरजंग क्षमा-याचना और आगे कोई अपराध न करने एवं आपके शासनके प्रति श्रद्धा रखनेकी प्रतिज्ञा करता है, तो उसे क्षमा कर दिया जाय । मैं भी इसी शर्त पर सहमत हूँ ।’

शाहजहाँके आन्दोलित चित्तमें कुछ स्थिरता आ गयी । उनका चित्त

कुछ हल्का हो गया। उन्होंने शेरजंगसे कहा—‘जो तुमने अपराध किया है, उसके बदले तुम्हें फाँसीकी सजा दी जा रही है।’

शेरजंगका हृदय काँप गया। उसके नेत्रोंके सामने मृत्युकी छाया घूम गयी।

सम्राटने पुनः कहा—‘मगर यदि तुम आगे कभी कोई इस प्रकारका जुर्म न करने और शाही हुक्मतके प्रति अदब रखने और किए गए जुर्मके लिए माफी माँगनेकी वादा करोगे, तो छोड़ दिए जाओगे।’

शेरजंग शाहजहाँकी ओर देखने लगा। उसने जैसे नया जन्म पाया। सबसे अधिक उसके हृदयमें जगतसिंहके प्रति अनुराग पैदा हुआ। उसने सोचा—सम्राटको विचार बदलनेके लिए जगतसिंहने ही वाध्य किया था और छत्रमाल ! छत्रमालसे तो बिना बदला लिए न छोड़ूँगा। उसने ही तो शाहंशाहको उकसाया था। यदि जगतसिंह न रहे होते, तो निश्चय ही वह मुझे फाँसी दिलवा देता।

‘बोलो शेरजंग ! मृत्यु वरण करते हो, अथवा क्षमा माँगकर प्रतिज्ञा करते हो—कि कभी इस प्रकारका अपराध न कर शासनके प्रति श्रद्धा रखेंगे?’ महाराज छत्रमालने शेरजंगकी ओर दृष्टि फेर कर पूछा।

‘ठीक है। मुझे अपराधके लिए क्षमा किया जाय। मैं ऐसा जुर्म कभी न करूँगा, जिससे हुक्मतकी आबरूको चोट पहुँचे। मैं प्रतिज्ञा पूर्वक अर्ज करता हूँ—इस हुक्मतके प्रति वफादारी रखूँगा और कभी भी कोई जुर्म न करूँगा।’

‘बन्दीगृह-अधिकारी !’

‘आज्ञा जहाँपनाह !’ हाथ जोड़कर अधिकारीने निवेदन किया।

‘कैदी रिहा किया जाय।’ बोले सम्राट।

‘जो हुक्म जहाँपनाह !’ निवेदन किया अधिकारीने और बन्दीको उन्मुक्त भी कर दिया। बन्दीने प्रणिपात अभिवादन किया। सारी राज-सभाको मस्तक झुकाकर वह कक्षके बाहर जाने लगा।

‘शेरेजंग ! सुनो, सुनो ।’ सम्राट बोले ।

शेरेजंगका पुनः प्राण सूख गया । भयभीत होकर पुनः लड़खड़ाते कदमोंसे वह वापस लौटा और सम्राटके समक्ष शंकाकुलित हृदयसे कर-वद्ध खड़े होकर बोला — ‘हुकुम जहाँपनाह !’

‘हाँ, देखो ! हम लोग उधर दौरे पर आनेवाले हैं ।’

‘तब तो हमें भी सेवा करनेका मौका मिलेगा जहाँपनाह ! आपकी सवारी कब तक आ रही है ?’ बड़ी उत्सुकतासे सम्राटकी ओर पूछकर वह देखने लगा ।

‘अभी कुछ मुकर्रर नहीं । हाँ, इन्तज़ारी करते रहना ।’

‘यह तो होगा ही परवरदिगार !’

‘जाओ ।’

पुनः शेरेजंगने सम्राटको सम्मान प्रदर्शित करते हुए अभिवादन किया और सभी सभासदोंको मस्तक नवाया । थोड़ी देरमें वह कक्षके बाहर चला गया ।

सभाकी कार्यवाही समाप्त हो गयी ।



जिस दिनसे भारत-सम्राट शाहजहाँके दरबारमें महाराज छत्रसाल को सम्मान मिला और अचानक राजमहिषी मुमताजकी दृष्टि उनके गम्भीर व्यक्तित्व और हृष्टपुष्ट शरीर पर पड़ी, उसके चित्तमें छत्रसाल के प्रति विशेष आकर्षण उत्पन्न हो गया । वह महाराज छत्रसालकी

खूबसूरत रोबीली आकृति, विशाल रतनारे नेत्र एवं मादक यौवनको भुला न सकी। वह सदैव उनकी स्मृतिमें पागल रहने लगी। 'यदि एक बार भी वह मुझे हृदयसे लगाकर मेरा चित्त शान्त कर देता, तो मैं उसके नाम पर ताजो-तख्त खुशीसे कुरबान कर सकती हूँ। मेरे मनको आज तक किसी भी मर्दकी सुन्दरता न भायी। आज केवल मैं उमीके लिए वावली हो रही हूँ। विचित्र जादू है इस मर्दमें।' राजमहिषी छत्र-सालके अनुपम सौन्दर्यपर कामाहत हो, बार-बार एकान्तमें सोचा करती।

महाराज छत्रसाल बड़े दृढ़चरित्र थे, धीर एवं गम्भीर थे। वीरतामें अद्वितीय एवं बड़े नीति-धर्मपरायण व्यक्ति थे। यद्यपि अपने प्रति राज-महिषीके अनुरागका उन्होंने अनुभव किया था, किन्तु उसका कारण अपने ऊपर आसक्तिका न समझकर उन्होंने उसे वासनारहित विशुद्ध प्रेम मान लिया था, जिस प्रकार सम्राट शाहजहाँने उनका सम्मान सहज स्वाभाविक ढंगसे किया था, उसी प्रकार राजमहिषीका भी प्रेम वैसे ही छत्रसालने मान लिया।

महाराज छत्रसाल सम्राटके बड़े कृपा-पात्र थे। अतः प्रायः वे उन्हें अपनी राजसभामें रखते और कहीं भी दौरे पर जाते समय साथ रखा करते थे।

छोटी रियासतोंमें जो सम्राज्यसे संबंधित थीं, भ्रमणका कार्यक्रम बना। सभी रियासतोंमें सम्राटके आगमनकी सूचना भेज दी गयी। अपनी-अपनी शक्तिके अनुसार सभी राजाओंने सम्राटके स्वागतकी तैयारी प्रारम्भ कर दी। अनेक रियासतोंमें भ्रमण करने हुए सम्राट शाहजहाँ साम्राज्ञी एवं दरवारियोंके साथ रूपनगर पहुँचे। महाराज रूपनगरने सम्राटका बहुत बड़ा सम्मान किया। उनके साथ महाराज छत्रसाल, जगतसिंह और अन्य अनेक वीरोंको, जो सम्राट द्वारा राजसभामें सम्मान प्राप्त कर चुके थे, देखकर महाराज रूपनगर बड़े ही प्रसन्न हुए।

महाराज छत्रसालको देखकर रूपनगरके महाराज धन्य हो गए थे,

उन्होंने अपनी रानीसे जाकर कहा—‘प्रिये, सम्राट शाहजहाँके साथ छत्रसाल भी आ गए हैं।’

‘क्या वे ही छत्रसाल; जिन्हें आपने आमंत्रित किया था?’

‘हाँ, हाँ। छत्रसाल जिनके सम्बन्धमें तुम अनेक वीरतायुक्त कथाएँ सुन चुकी हो। आजकल भारत-सम्राट शाहजहाँकी छत्रसालपर बड़ी कृपा रहती है। सभासदोंमें इनका बहुत अधिक सम्मान है।’

‘तभी तो साथ लेकर सम्राट दोरेपर निकले हैं।’

‘सम्राटके साथ मानसिंहके पुत्र जगतसिंह भी तो हैं। इन दोनों व्यक्तियोंमें मेल नहीं है।’

‘इसका कारण?’

‘मेरी समझसे तो शाही खानदानमें मानसिंहसे ही इस परिवारकी बड़ी प्रतिष्ठा रही है और इस समय तक उसी प्रकार इनका भी सर्वोच्च मनसबदारी पद सुरक्षित रहा है; किन्तु धीरे-धीरे अधिकारके मदमें चूर्ण जगतसिंहके परम्परागत सम्मानमें कुछ शिथिलता आने लगी और उसका स्थान अपने पराक्रम, चरित्रकी दृढ़ता और योग्यतासे छत्रसाल ग्रहण करने लगे। शाही दम्पति धीरे-धीरे छत्रसालकी ओर झुकता जा रहा है। इसी ईर्ष्यासे जगतसिंह छत्रसालसे जला करते हैं। जगतसिंहको भय है—थोड़े ही दिनोंमें छत्रसाल सर्वश्रेष्ठ पदपर सम्मानित हो जायेंगे।’

‘किन्तु ऐसा करनेसे कोई किसीकी उन्नति नहीं रोक सकता।

‘बात तो ठीक है प्रिये ! किन्तु अपनी उन्नति या भलाई कैसे होगी, जानते हुए भी मानव उसपर आचरण नहीं करता। किसीको ऐसा नहीं देखा गया, जो ईर्ष्यासे रहित होकर उत्कर्षकी उच्च सीमापर पहुँच अपने प्रतिद्वन्दीकी उन्नतिसे आगे बढ़ जाय, जैसे किसी बड़ी रेखाको कुछ मिटाकर छोटी न करनेसे अधिक अच्छा हो, यदि उससे बड़ी रेखा खींचकर उसे छोटी कर दी जाय। ईर्ष्यासे मानव न अपना भला कर

सका है और न दूसरोंका ही । जानते हुए भी सभी ईर्ष्या-द्वेषके वशीभूत हो संघर्षको जन्म दे, अपनी और दूसरोंकी भलाईको होम देते हैं । मानवके हृदयमें हिंसाकी स्वतः उत्पत्ति होती है, उसपर नियंत्रण रखना महनीयताका प्रतीक है एवं उससे प्रभावित होकर आचरण करना ही क्षुद्रता तथा संस्कृतिविहीनताका उज्ज्वल प्रमाण है । जान-बूझकर भी जो पतनके मार्गपर चल रहा है, उसे कौन समझा सकता है ।’

‘महाराज मुझे तो छत्रसालके प्रति बड़ा स्नेह है, मैं उन्हें देखना चाहती हूँ । यदि कुमारी किरणका विवाह छत्रसालसे हो जाता, तो मेरे मनकी बहुत बड़ी साध पूरी हो जाती । जिस प्रकार किरणका गुण और सौन्दर्य चतुर्दिक् बढ़ता जा रहा है, उसी प्रकार छत्रसालकी कीर्ति भी दिगन्तव्यापिनी होती जा रही है; अतः महाराज ! यह विवाह बहुत ही उपयुक्त होगा ।’

‘सोचता तो यही मैं भी हूँ प्रिये ! किन्तु...।’

‘किन्तु क्या महाराज ! कहिए-कहिए, मौन क्यों हो गए ?’

‘यही कि एक बार प्रयत्न तो करना ही है, यदि भाग्यने साथ दिया, तो इस सम्बन्धमें कोई आश्चर्य नहीं ।’

रानी थोड़ी देर तक मौन रहकर पुनः बोली—‘छत्रसालको राज-भवनमें साथ लाइए, यदि उन्होंने एक बार भी किरणको देख लिया, तो निश्चय ही ने इस विवाहसे सहमत हो जायेंगे ।’

‘किन्तु प्रिये; दृढ़चरित्र व्यक्ति किसी रूपपर जल्दी आकृष्ट नहीं हो जाया करते ।’

‘प्रयत्न एक बार तो कर देखिए महाराज !’

‘वह तो करूँगा ही प्रिये ।’

‘तो मैं सारा प्रबन्ध करती हूँ, आपसे इस सम्बन्धमें पूछ लेना आवश्यक था महाराज ! अब आप वहाँ सम्राटकी सभामें जाइए और प्रबन्ध देखिए ।’

महाराज रूपनगर सम्राट शाहजहाँकी सभामें चले गए। वहाँ वे सबसे मिले। महाराज छत्रसालने उन्हें आदर देते हुए अभिवादन किया। सम्राटने महाराज रूपनगरसे कहा—‘राजन् ! सम्राज्जी आपके अंतःपुरमें रात्रियोंमें मिलना चाहती है। यद्यपि इनकी यह इच्छा कलसे ही है, किंतु कल प्रवार नहीं था, यात्राणी शकावटमें बस कलही न जा सकी।’

‘बोके हे जहाँपनाह ! मैं सब प्रबन्ध अभी किए दे रहा हूँ।’ मस्तक झुकाकर महाराज रूपनगरने निवेदन किया।

सम्राटके निकटमें लौटते समय महाराज रूपनगर छत्रसालके निकट पुनः गए। छत्रसाल उनके पुनरागम से बर-बढ़ होकर खड़े हो गए और बड़ी विस्मय वाणीमें बोले—‘राजन् ! मेरे लिए आपका कोई आदेश ?’

महाराजने छत्रसालको हृदयसे लगा लिया और वे बोले—‘राजन् ! चाहे आदेश समझिए या प्रार्थना; आपके ऊपर महारानी बड़ा स्नेह रखती है, उन्होंने आपको बुलाया है, वे आपके दर्शनकी इच्छा रखती है। यदि आपको कोई आपत्ति—’

‘मुझे कोई आपत्ति नहीं है महाराज ! यहाँ आकर अवश्य ही मैं उनके चरणोंका दर्शन करूँगा।’ गम्भीरतासे बोले छत्रसाल।

‘मैं अभी आपको साथ लानेके लिए पुत्र विक्रमकुमारको भेज रहा हूँ।’

‘जैसी महाराजकी आज्ञा।’ कहकर छत्रसालने मस्तक नवाकर अभिवादन किया। महाराज रूपनगर छत्रसालसे विदा होकर लौट आए।

+

+

+

‘यह मेरी माताजी हैं और यह मेरी मुझसे छोटी बहन।’ अंतःपुरमें छत्रसालको पहुँचाकर परिचय देते हुए कुमारविक्रमने निवेदन किया।

छत्रसाल श्रद्धासे विनत हो गए। राजमाताको सम्मान प्रदर्शित करते हुए उन्होंने अभिवादन किया। राजमाताने छत्रसालको बैठनेका आसन दिखाते हुए बड़े ही स्नेहका परिचय दिया। आसन ग्रहण करने

के पूर्व ही छत्रसालकी दृष्टि राजकुमारी किरणपर पड़ी, जो शालीनता के बोझसे दबी हुई उन्हीं की ओर चंचल दृष्टिसे देख रही थी। कुमारी किरणने हाथ जोड़कर छत्रमालको प्रणाम किया और लज्जासे उसकी दृष्टि नत हो गयी।

कुमारी किरणका रूप अपूर्व था, उसके अंग-प्रत्यंगसे सौन्दर्यकी किरणें फूट रही थी। उसके कपोलोंपर उतरी हुई स्वाभाविक लालिमा, शुभ्र दन्तपंक्ति, विशालनेत्र, सिरपर कुटिल, काले बालोंकी वेणी, मुन्दर नासिका, हीरेके कर्णोंसे संयुक्त स्वर्णके हिलते हुए आभूषणोंसे सुशोभित कान उस वयस्क राजकुमारीके सौंदर्यमें मादकता उभार रहे थे। संयम-नियमकी पवित्रता उम युवनीमें एक विशेष आकर्षण पैदा कर रही थी। शालीनता उसके गंभीर व्यक्तित्वमें गुरुता प्रदान कर रही थी। उस रमणीके कोमल कलेवरमें उभरे हुए क्षत्राणियोंके तेज और पुष्ट शरीरके सौन्दर्यमें जो स्वाभाविक आकर्षण पैदा हो गया था, कौन व्यक्ति न उलझ जाता ?

कुमारी किरणपर छत्रसालकी दृष्टि केन्द्रित हो गयी। अस्पष्ट था रूप उस बाला का।

‘यह आपमें बड़ी भक्ति रखती है।’ छत्रसालका ध्यान भंग करते हुए राजमाताने कहा।

कुमारी किरणकी दृष्टि नीचे हो गयी; वह लजा गयी। छत्रसाल की जैसे निद्रा भंग हो उठी, उन्होंने शीघ्रतासे दृष्टि फेरकर राजमाताकी ओर देखा। उन्हें महाराणीकी बातें सुनकर कुछ लज्जाका अनुभव हुआ।

‘आओ राजबाला ! जिसकी प्रशंसा बार-बार कर चुकी हो, वह आज यहाँ उपस्थित है।’ राजमाताने कहा।

मुस्कराती हुई राजबालाने छत्रसालसे नमस्कार किया।

‘मेरा परिचय इन्हें कैसे प्राप्त हो गया।’ आश्चर्य व्यक्त करते हुए छत्रमालने पूछा।

राजबाला बोली—‘मैं ननिहाल गयी थी; मुझसे आपकी भेंट

हो गयी थी, सहभोजके अवसर पर । है न स्मृति ?'

'कहाँ भेंट हुई थी ? तुम्हारा ननिहाल कहाँ है ?'

'करीलीमें । है ध्यान ?'

'हाँ, हाँ ? ठीक कहा तुमने । यह बात तो दो साल पहलेकी है । मेरी स्मृतिमें बात आ रही है । मैं तो भूल ही गया था ।'

'किन्तु मुझे तो यह बात जैसे कलकी लगती है ।

'तो ये भी आपकी बहत हैं ।' छत्रसालने राजबालाकी ओर संकेत कर विक्रमसिंहसे पूछा ।

'यह मेरी चचेरी बहन है । क्षमा कीजिएगा, मैं तो इसका परिचय देना ही भूल गया ।

'इतकी स्मृति बड़ी तीव्र है । मुझे भूल ही गया ।'

'हम लोगोंको कहीं यहाँसे लौटकर न भुला दें । मैं तो यही प्रोत्साहन निवेदन करना चाहती हूँ ।' राजबाला बोली ।

'नहीं, नहीं अब ऐसा न होगा ।'

'मुझे तो भय है - हम लोगोंको चित्तसे उधारते आपको देर न लगेगी ।' सब लोग हँस पड़े ।

'निर्भय रहो राजबाले; अब दूसरी भूलोंकी आकृति न होने पाएगी ?' छत्रसाल मुस्कराते हुए बोले ।

'केवल इतना कह देनेसे ही आपकी वाणीमें दृढ़ता न मान ली जायगी महाराज ! क्षमा करेंगे ।' राजबालाने निवेदन किया ।

'यह बड़ी वाचाल लड़की है, अतः इसकी धृष्टतापर ध्यान न दीजिएगा ।' राजमाताने मुस्कराकर कहा ।

'वाणीमें दृढ़ता और स्थायित्व तो तुम्हारी वात्तानि ही आ जायगी राजबाले ! मुझे तो कुछ करना भी न होगा ।'

'यदि आप कुछ करना ही चाहें, तो मैं कुछ सुझाव देनेके लिए प्रस्तुत भी हूँ ।' हँसकर राजबाला बोली ।

‘रहने दे, अपना सुभाव अपने पास ही रख; ज्यादा न बोल ।’
हँसकर राजमाता ने कहा ।

‘ठीक है । मैं बोलकर नहीं; मूक भाषामें भावाभिव्यंजनाके लिए प्रस्तुत हूँ ।’ राजबाला बोली ।

कुमारी किरण, विक्रमसिंह, राजमाता एवं महाराज छत्रसालकी आकृतिपर मुस्कराहट छा गयी; सब लोग राजबालाकी ओर देखने लगे ।

‘संभव है, महाराजकी जिज्ञासा मेरे सुभावों के लिए हो उठी हो; अतः यदि आज्ञा प्रदान की जाय, तो मैं निवेदन कर ही डालूँ ।’

‘कहो, कहो भद्रे; तुम्हें जो कहना हो वह सुना दो ।’

‘यदि महाराज सुनना ही चाहते हैं, तो कभी शीघ्र ही फिर आकर दर्शन देनेकी अनुकम्पा करेंगे । महाराजके द्वार-द्वारके आगमनसे हम लोगोंका सम्बन्ध भी गाढ़ा होता जायगा और महाराजके भूलनेका भय भी न रहेगा ।’

‘बात तो ठीक कह रही है । मैं तो डर गया थी कि कहीं यह हँसते-हँसते महाराजका अपमान न कर बैठे । राजमाता बोली ।

‘माताजी आपने तो महाराजके जलपानके लिए अभी तक कोई प्रबंध ही नहीं किया । क्या भूल हो गयी है ?’ विक्रमसिंहने निवेदन किया ।

‘हाँ ठीक है, अब तो जलपानकी ही बारी है । महाराज अब आपको इसके लिए तैयार हो जाना चाहिए ।’ राजबाला हँसकर बोली ।

परिचारिका कक्षमें खाद्य-सामग्री लेकर उपस्थित हुई । राजमाता ने कहा—‘राजबाला और किरणप्रभा ! चलो महाराजकी सेवाके लिए तुम लोग स्वयं काम करो ।’

कुमारी किरण जो अभी तक महाराज छत्रसालकी ओर दृष्टि बचा-बचाकर देखती रही, उठी और माताके आदेशानुसार छत्रसालकी सेवामें कुछ लज्जा कुछ श्रद्धा भावना से संपृक्त हो, प्रस्तुत हो गयी । राजबाला पहलेसे ही इसकी प्रतीक्षा कर रही थी । दोनों राजपुत्रियाँ महाराज

छत्रमालका सम्मान करनेके उद्देश्यसे सेवामें संलग्न हो गयीं ।

उत्तमकोटिका बना मिष्टान्न महाराजको बड़ा प्रिय लगा, उसे वे बड़े चावसे खा रहे थे । राजमाताने कहा किरण ! थोड़ा इसे और दे महाराजको ।

‘नहीं, नहीं; यही पर्वाप्त है ।’ छत्रमाल बोले ।

कुमारी किरणने श्रद्धा भक्ति दिखाने हुए बड़े आदर से मना करने पर भी महाराजके समक्ष थोड़ा मिष्टान्न और रख दिया । उसकी आकृतिपर मुस्कराहट छा गयी ।

‘आपको अभी यह भी खाना पड़ेगा और मेरी दागी तो अभी बाकी ही है, मुझे इस आनन्दसे आप वंचित नहीं कर सकते ।’ मुस्कराकर बोली राजवाला ।

‘अधिक-अधिक खिलाकर मुझे भयभीत मत कर दो राजवाले; दूसरी बार आने का कहीं मेरा नाहस ही न कम हो जाय ।’

‘यह भय केवल आपही कर सकते हैं महाराज ! मुझे तो यही सूझता है—जितना अधिकसे अधिक आपको खिलाया जायगा, उतनी ही हम लोगोंकी श्रद्धा आपके प्रति पुष्ट होती जायगी, फिर रागात्मक सम्बन्धका आप विच्छेद न कर पाएँगे, बाध्य होकर आपको दर्शन देना ही होगा ।

‘अच्छी बात है, यही मान लो, अब दूसरी दागकी यात्रामें तुम्हें पुनः अवसर प्रदान किया जायगा । इस बार तो तुम्हें क्षमा ही करना होगा ।

‘अच्छा महाराज ! मैं क्षमा कर दूँगी; किन्तु किरण नहीं क्षमा कर सकती ।’ हँसकर राजवालाने कहा ।

इसपर किरणप्रभाको हँसी आ गयी ।

‘क्यों ?’

‘आपने इससे क्षमा-याचना तो की नहीं ।’

‘किन्तु टोली-नायकसे क्षमा-याचनाकर लेनेपर उसके अन्य सदस्यों-से इसकी आवश्यकता नहीं रह जाती ।’

‘अब बोलो राजबाले ।’ हँसकर राजमाताने कहा । सबको हँसी आ गयी ।

‘यदि टोलीके अन्य सदस्योंसे व्यक्तिगत प्रश्नका सम्बन्ध हो, तब भी नहीं ?’

महाराज छत्रसाल हारे नहीं, हारना चाहते थे, वे हँसकर बोले—
‘भाई व्यक्तिगत प्रश्नकी दशा ही और है ।’

‘अब जानेकी आज्ञा दी जाय राजमाता ।’ जलपान समाप्त हो जानेपर महाराज छत्रसालने निवेदन किया ।

‘आज्ञा देनेके प्रथम वरदान चाहती हूँ महाराज !’

‘मेरे योग्य जो मेवा हो, उसे निःसंकोच व्यक्त करें माताजी !’

‘यही अब कब तक आपके दर्शन होंगे ?’

‘निश्चयपूर्वक तो नहीं कह सकता, किन्तु आपके दर्शन शीघ्र आकर करनेकी बात सोच रहा हूँ, स्नेह बनाए रखिए ।’ छत्रसालने निवेदन किया और राजमातासे छुट्टी लेकर वे विदा हुए । किरण एवं राजबालाने भी महाराज छत्रसालको अभिवादन किया । कुमार विक्रमके साथ सम्राटके खेमेकी ओर उन दोनोंने प्रस्थान किया ।

महाराज छत्रसाल राजमातासे बिदा होकर चले गए, उनके हृदयमें कुमारी किरणप्रभाके गंभीर व्यक्तित्वकी गहरी छाप पड़ गयी, वे बड़े प्रभावित हो गए । उस सौन्दर्यकी प्रतिभाको वे कभी चित्तसे नहीं उतार सकते थे; विचित्र आकर्षणका अनुभव उन्होंने किया ।

संध्याका समय हो आया । कुमारी किरणप्रभा अपनी चचेरी बहन एवं सखी राजबालाके साथ राज्योद्यानमें घूमने निकली । राजबाला ने कहा—‘जिन महाराज छत्रसालका यश मैं तुम्हें सुनाया करती थी, देखा तुमने ! कितना पुष्ट शरीर है, कितनी सुन्दरता सारे शरीरमें छायी है !’

‘देखनेसे ही उनके अतुलनीय पराक्रमका आभास मिल जाता है । सचमुच इतने दृढ़ चरित्रका व्यक्ति मैंने आज तक नहीं देखा । मेरे हृदय-

में तो इनके प्रति बड़ी श्रद्धा उत्पन्न हो गयी है ।’

‘यदि इनसे तुम्हारा विवाह हो जाय, तो कितना उत्तम हो; मैं सोच नहीं सकती ।’

‘और यदि तुम्हारे साथ हो जाय, तो क्या खराबी होगी ? मुस्कराकर किरणप्रभाने कहा ।

‘यदि हमारे साथ विवाह हो जाय, तो अवश्य ही खराबी होगी ।’ मुस्कराकर राजबाला बोली ।

‘मैं भी मुनू उस खराबी को ।’

‘बता ही दे रही हूँ, सुनो; यदि मेरे साथ इन महानुभावका विवाह हो गया, तब तुम ईर्ष्यासे जलने लगोगी, मैं ऐसा कोई कार्य नहीं होने देना चाहती, जिससे तुम्हें कोई मानसिक पीड़ा हो ।’ कहकर राजबालाने हँस दिया ।

‘और मेरे साथ विवाह होनेसे तुम्हें ईर्ष्या न होगी ?’

‘यदि थोड़ी-बहुत हो भी जाय, तो उसे मैं सहन कर लूँगी, किन्तु तुम सहन नहीं कर पाओगी ।’ मुस्कराकर राजबाला बोली ।

‘सहन करना और बात है, उत्पन्न होना और बात ।’

‘अधिक बखेड़की बात न कहो, यदि हमारे तुम्हारे दोनोंके साथ इन महाशयका विवाह हो जाय, तब तो ठीक होगा ? तब तो किसीको ईर्ष्या-द्वेष न होगा ?’

‘तब तो महाराजके अत्यधिक निकटमें आनेकी होड़ उत्पन्न हो जायगी ।’ इसपर दोनों हँस पड़ीं ।

धूमते-धूमते दोनोंकी दृष्टि राजपुत्र जगतसिंह पर जा पड़ी, जो इधर ही टहलते हुए देख रहे थे । किरणप्रभाकी ओर उनकी दृष्टि लगी हुई थी; वे बड़ी देरसे उसकी रूपमाधुरीका पान कर रहे थे । ये दोनों राजकुमारियाँ उन्हें न देख पायी थी; वे तो एक दूसरेका उत्तर देनेमें ही तल्लीन थीं ।

जगतसिंह कुमारी किरणके रूपपर आसक्त हो गए। उन्होंने अपने मित्र जेरेजंगसे कहा—‘इस अनुपम युवतीके समान मैंने दूसरी कोई तरुणी नहीं देखी।’

‘महाराज ! वह आदमी धन्य है, जिसके साथ इसका विवाह होगा। यदि आप बुरा न मानें, तो मैं तो यही कहूँगा—यह श्रीमान्के अन्त पुरमे यदि पहुँच जाय, तो क्या कहना; वहाँकी रौनक चौगुनी बढ़ जायगी। आपके काविल यह सुन्दरी है भी !’ जेरेजंग जगतसिंहके अन्तरकी आह लेते हुए बोला।

‘इसमें सन्देह भी नहीं है, मेरा मन भी इसके ऊपर लग गया है। मैं तो इसी समय इसका हरणकर लेता और महाराज रूपनगर देखते रह जाते, किन्तु सम्राटके साथ रहनेसे इस समय मैं ऐसा नहीं कर सकता।’

‘यदि यह श्रीमान्को पसंद लड़की है, तो इसकी चिन्ता न करें। यह श्रीमान्के यहाँ पहुँचा दी जायगी।’

‘वह कैसे ?’ उत्सुक होकर जेरेजंगकी ओर तिरछी दृष्टि कर जगतसिंहने पूछा।

‘श्रीमान् जानते ही है—पहले मैं यही सब कार्य किया करता था, वे सब चालाकियाँ कहीं लुप्त नहीं हो गयी हैं। अवसर आने पर वे हृदयमें फिर जग जाती हैं।’

‘किन्तु मैं भी मुनू ?’

‘इस समय आप शांत रहें, राजधानी पहुँचकर वहाँसे एक खत दूतके जरिये श्रीमान् महाराजको भेजें और उसमें लिख दें—महारानीके साथ महाराज अवश्य पधारें। इस पत्रके अनुसार यदि इस कन्याके माता-पिता राजधानी जाने लगे, तो उन्हें लूटकर बन्दी बना लेना मेरा साधारण काम है। उन दोनोंको इस शर्तपर ही मैं अपने बंदीगृहसे मुक्त करूँगा; जब रूपनगरका राजकुमार अपनी इस बहनको काफी धनके साथ हमारे यहाँ छोड़ देगा।’

‘हाँ भाई: कहा तो तुमने ठीक, यह तो तुम्हारा मुभाव बहुत उत्तम जँचता है।’

‘और महाराज ! यह कार्य तो मैं अभी ही कर डालता, किन्तु यहाँ छत्रसालके कारण संभव नहीं है।’

‘क्यों इसमें छत्रसाल क्या करेगा ? क्या उसका भी कोई संबंध है ?’

‘आप नहीं जानते महाराज !’

‘नहीं, नहीं। मुझे तो कुछ भी ज्ञात नहीं है। इसका भी यदि कोई रहस्य जानने हो, तो निवेदन करो।’

‘हाँ महाराज ! मुझे जो ज्ञान है, आपके सामने मैं स्वयं निवेदन करना चाहता था। आपके सामने ही छत्रसालको महाराज रूतनगरने बुलाया और अन्तःपुरमें आनेके लिए आमंत्रित किया था। है न याद ? यदि कोई संबंध न रहा होता, तो ये क्यों बुलाये जाते ?’

‘अच्छा ! यही बात थी ?’ आश्चर्य व्यक्त करते हुए महाराज जगतसिंहने कहा।

‘हो सकता है, महाराज ! छत्रसालके साथ ही इस लड़कीका विवाह होनेवाला हो, इसीलिए इनकी भीतर बुलाहट हुई हो।’

जगतसिंहकी आकृति म्लान पड़ गई। थोड़ी देरमें वे बोले—‘जहाँ देखो, वही छत्रसाल-छत्रमाल, यह व्यक्ति मेरे पीछे पड़ा रहता है। यह मेरा बहुत बड़ा प्रतिद्वन्दी उत्पन्न हो गया !’

‘किन्तु प्रतिद्वन्द्वितासे काम करनेवाले व्यक्तियों की बड़ी उन्नति हुआ करती है। इससे आपको घबरानेकी जरूरत नहीं महाराज ! सच पूछिए तो अपना पराक्रम प्रदर्शित करनेका अवसर तो प्रतिद्वन्दीके ही समक्ष मिलता है। अतः आपको निश्चित रहना चाहिए। छत्रसाल आपका क्या बिगाड़ सकता है ?’ शेरजंग बोला।

‘नहीं धीरे-धीरे मैं देख रहा हूँ, जबसे सम्राटके दरबारमें इसकी कुछ इज्जत बढ़ने लगी है, तभीसे मुझे यह बड़ी उपेक्षाकी दृष्टिसे देखने

लगा है। वास्तवमें यह ढोंग बना-बनाकर सम्राटको अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। सम्राट समझ पाते नहीं। इसे बड़ा गम्भीर, धीर और वीर मान बैठे हैं। सच है—राजाओंमें दृष्टिको क्षमता कम और कानकी अधिक होती है।' विषाद व्यक्त करते हुए जगतसिंहने कहा।

‘हाँ महाराज ! यदि ऐसा न होता, तो शाही दरबारमें एक साधारण आदमीकी इतनी इज्जत क्यों बढ़ जाती।’

‘ठीक है बढ़ने दो, समय पाकर मैं ऐसे उखाड़ फेकूँगा कि फिर रंग न जम पायेगा। अभी तो जब तक चलाचल रहा है चलने दो।’

‘उस दिन सभामें महाराज ! आप न रहे होते, तो मुझे तो वह सूली दिलवा ही चुका था। क्या यह भी भूलनेकी बात है।’

‘हाँ, हाँ देखा तुमने ? राज-काजकी शिक्षा दे रहा था सम्राट को। क्या करना चाहिये और क्या नहीं; जैसे सम्राट बेवकूफ हैं, उन्हें कुछ भी अक्ल नहीं है।’

‘लेकिन आपकी बातोंका बादशाह पर बड़ा गहरा असर पड़ा। उन्हें लाचार होकर आपके सुझाव पर भी सोचना पड़ा। महाराज ! आपने मेरा प्राण बचाया है, मैं तो इसे लेकर आपके लिए हर हालतमें तैयार रहूँगा। यदि मेरा सुझाव इस कन्याके लिए श्रीमान् मान लेते हैं, तो मैं इसमें हाथ लगाऊँगा।’

‘ठीक है, सोचकर तुम्हें इसकी सूचना दी जायगी। यदि इस कार्यमें तुम सफल हो गए, तो तुम्हें पुरस्कृत करूँगा।’

‘पुरस्कार-उरस्कारकी जरूरत नहीं है, महाराज ! मैं तो सिर्फ श्रीमान्का हुक्म चाहता हूँ। आपने इस शरीरकी रक्षाकी है। कुछ भी तो कार्य आपका करूँ।’

‘मुझे विश्वास है, शेरजंग ! तुम्हारे ऊपर। आजकी दुनियाँमें तुम्हारे जैसे ही मित्रोंकी आवश्यकता है। सहस्रों दिखावटी मित्र मिलकर जो कार्य नहीं कर पाते, उसे अकेले ही एक निःस्वार्थी मित्र कर दिखाता है।’

‘कार्यकी सफाई करनेवालेकी क्षमतापर भी आधारित है । महाराज ! यदि लापरवाहीसे कोई काम किया ही गया, तो उसका कोई भी फल नहीं होता ।’ शेरजंग जगतसिंहका उत्साह बढ़ते हुए बोला ।

‘नहीं लापरवाहीसे कार्य नहीं करना है । अपना सर्वस्व हथेली पर लेकर इस राजकुमारीको प्राप्त करनेमें मैं दृढ़ संकल्प करता हूँ । सहायताकी आवश्यकता थी, उसके लिए तुम स्वयं तैयार ही हो ।’

‘हाँ इसके लिए तो मैं पहले ही निवेदन कर चुका हूँ महाराज ! मुझे श्रीमान्का हुक्म ही चाहिए ।’

×

×

×

‘और अब आगे न बढ़ो बहन ! देखो वह पुरुष हम लोगोंकी ओर धूर-धूरकर देखता बढ़ता आ रहा है । इसका आचरण ठीक नहीं लग रहा है ।’ कुमारी किरणने कहा ।

‘तुम्हारी दृष्टिमें तो केवल एक महाराज छत्रसाल ही निर्दोष एवं गुणज्ञ हैं, वही चरित्रवान् है, वही सब कुछ हैं, बाकीसे तुमसे कोई काम नहीं । बिना विवाह हुए ही उनकी ओर तुम्हारा झुकाव बढ़ता जा रहा है ।’ हँसकर राजबालाने कहा ।

‘देखो, मैं तुमसे न बोलूँगी; हाँ ! तुम मेरी हँसी उड़ाया करती हो । जब देखो तब महाराजका नाम ले-लेकर मेरे ऊपर छीटें कसती रहती हो ।’ किरणने आंतरिक भाव छिपाकर कहा ।

‘क्या झूठ कहती हैं !’ हँसकर राजबाला बोली ।

‘चाहे झूठ कहो, चाहे सच । जाओ मैं अब तुमसे न बोलूँगी हाँ ।’ कहते हुए घूमकर किरण लौट पड़ी । उसके पीछे-पीछे राजबाला भी मुड़ गई ।



३ .

भारत सम्राट शाहजहाँको यात्रासे राजधानी लौटे एक महीनेसे अधिक हो गया ? रूानगरसे लौटकर जगतसिंह अपने सहयोगियोंसे मिलना चाहते थे । जब जब किरणप्रभाकी स्मृति उन्हें होती, तब तब वे कामसे पीड़ित हो उठते । वे लाख प्रयत्न करके भी उस सुन्दरी राज-पुत्रीको न भुला पाए । रातों-दिन उनकी स्मृतिमें वे पागल रहने लगे ।

संध्या समय था । महाराज जगतसिंहके डेरे पर पिण्डारी दलपति शेरजंग आ पहुँचा । उसने प्रतिहारीसे अपने आगमनकी सूचना भेज दी । जगतसिंहको शेरजंगका आगमन जानकर बड़ी प्रसन्नता हुई, वे उठकर अपने सभा-भवनमें चले आए । प्रतिहारीसे वे बोले—‘आगंतुकको सभा-भवनमें उपस्थित करो ।’ प्रतिहारी कक्षके बाहर चला गया । महाराज प्रतीक्षा करने लगे ।

जगतसिंहको सभाभवनमें प्रविष्ट होकर जे रेजंगने बड़े आदरसे अभिवादन किया । महाराज जगतसिंह जेरेजंगको अपने व्यवहारसे सन्तुष्ट करते हुए बोल उठे—‘आओ, आओ जेरेजंग ! तुम्हारी याद मुझे हो रही थी, तुम भले आए । कहो अच्छी तरह तो थे ? मैंने तो सोचा था—संभवतः तुम्हें मेरे कार्यकी स्मृति ही नहीं रह गयी होगी ।’

‘ऐसा कदापि नहीं हो सकता महाराज ! आपने मुझे प्राणदान दिया है । मैं आपको भूल जाऊँ ? आपके कार्यको भूल जाऊँ ? भला यह भी कहीं हो सकता है ?’ जेरेजंगने कृतज्ञता प्रदर्शित करते हुए निवेदन किया ।

‘तुमसे ऐसी ही आशा है । मैं तुम्हें यहाँ शीघ्र न आनेके कारण यों ही सोचने लगा था ।

‘किन्तु महाराज ! आपको निराश नहीं होना चाहिए था ।’ जेरेजंगने कहा ।

‘हाँ यह तो ठीक ही है ।’ जगतसिंहने शेरजंगकी बातोंका ही समर्थन किया ।

हुजूर रूपनगरकी राजकुमारीके संबंधमें अभी तक आपन कुछ निश्चय नहीं किया ?’ जगतसिंहकी ओर देखते हुए शेरजंगने निवेदन किया ।

‘अभी तक तो मैंने कुछ भी निश्चय नहीं किया । अकेले मेरे ही निश्चय करनेसे तो कुछ होता-जाता नहीं । हाँ, अब तुम आ गए उन ओर प्रवृत्त होनेकी अब प्रेरणा भी मिल रही है । बैठो मैं अपने सहायकों—‘नवाब रुहेला शेरशाह एवं अजमेरके सूबेदार कासिम खाँको बुलवाता हूँ ।’

‘क्या ये लोग यही आए है ?’

‘हाँ इस समय कार्य विशेष से ये लोग भी आ गए है । अभी-अभी इन्हें बुलाकर सारी योजना बनाता हूँ ।’

‘जो आज्ञा श्रीमान् !’ कहकर शेरजंग मौन हो गया ।

‘भूरसिंह ?’ आवाज दी जगतसिंहने ।

‘आज्ञा महाराज !’ दौड़कर एक सरदार कक्षमें प्रविष्ट होते हुए बोला ।

‘हाँ, देखो ! इनके लिए शीघ्र ही जलपानका प्रबन्ध करो । भोजन तो यहाँ ही ये करेगे । पहले जलपानकी ही व्यवस्था होनी चाहिए ।’ शेरजंगकी ओर संकेत करते हुए जगतसिंहने कहा ।

‘जो आज्ञा देव ! भूरसिंह बोला ।

सरदार प्रतिहारी चला गया । शेरजंग पुनः जगतसिंहसे बातें करने लगा । उसने कहा—‘महाराजकी यह इच्छा पूरी करनेमें एक बार मैं अपने प्राणोंकी बाजी लगा दूँगा । यदि उसकी इच्छा हुई तो निश्चय ही सफलता मिलेगी ।’ आकाशकी ओर संकेत करते हुए शेरजंगने कहा ।

‘हाँ, बात तो ठीक है ; कार्य करनेका अधिकार मनुष्यको है, उसके

फलाफल-दाता तो वही है।' शेरजंगकी बातोंका ही अनुमोदन करते हुए जगतसिंहने भी कह दिया।

'महाराज ! द्वार पर नवाब रुहेला एवं अजमेरके सूबेदार उपस्थित हैं।' प्रतिहारीने निवेदन किया।

बुलाओ, बुलाओ। उन्हींकी इन्तजारीमें हमलोग यहाँ बैठे हैं।' जगतसिंहने कहा।

'जो आज्ञा महाराज !' मस्तक नवाकर प्रतिहारी कहते हुए बाहर चला गया। दूसरे ही क्षण दोनों व्यक्तियोंको साथ लेकर वह कक्षमें प्रविष्ट हुआ। शेरजंगने रुहेला नवाब शेरशाह एवं सूबेदार कासिम खाँका सम्मान करते हुए प्रणाम किया और अपने आमनसे उठकर वह खड़ा हो गया। दोनों आगन्तुकोंने महाराज जगतसिंहको आदरपूर्वक अभिवादन किया। उन पर अपना स्नेह दिखाते हुए जगतसिंहने कहा—'आओ नवाब महोदय एवं सूबेदार साहब आप लोगोंका स्वागत है।'

'हमलोगोंकी स्मृति श्रीमान्को कैसे हो आयी, यह जाननेकी बड़ी उत्सुकता है।' नवाब बोला।

'अब कोई विशेष प्रतिक्षा न करनी पड़ेगी नवाब साहब ! पहले आप लोग अपना कुशल-मंगल तो बतावें, कुछ जलपान भी कर लें, तब क्रमशः आपकी उपस्थितके कारणोंपर भी प्रकाश डालनेका नम्बर आवेगा।' ठहाका लगाकर महाराज जगतसिंहने कहा। उपस्थित अन्य लोगोंने भी उस हँसीमें योग दिया। सारा कक्ष प्रसन्नताकी ध्वनिसे गूँज उठा। हाथ मिलाकर स्नेहपूर्वक महाराज जगतसिंहने सबको आसन पर बैठाया।

प्रतिहारीने जलपान सामग्रीके साथ कक्षमें प्रवेश किया। महाराजने पूछा—'यह तो एक ही आदमीके लिए सामग्री है, जाओ दो आदमीके लिए और भी लाओ।'।

'जो आज्ञा महाराज !' कहकर प्रतिहारी जाने लगा।

‘सुनो प्रतिहारी !’ पुनः आज्ञा हुई ।

‘जी महाराज !’ प्रतिहारी पुनः लौटकर आज्ञा सुननेकी प्रतीक्षा करने लगा ।

‘थोड़ी शीघ्रता करना, वहीं जाकर बैठे मत रहना ।’

‘अभी-अभी उपस्थित हो जाऊँगा देव !’ प्रतिहारीने निवेदन किया ।

‘हाँ, जाओ, शीघ्रता करो !’

प्रतिहारी द्रुतगतिसे चला गया । थोड़ी ही देरमें ससामग्री महाराजके समक्ष उपस्थित हुआ । सभी लोग जलपान करने लगे । जलपान इत्यादि से निवृत्त होकर नवाबने निवेदन किया—‘महाराज ! अब तो शायद कामकी बातोंका नम्बर आ ही गया है । अतः आज्ञा प्रदान कीजिए ।’ मुस्क-राहटके साथ उत्सुकता प्रकट करते हुए नवाबने अपना भाव व्यक्त किया ।

‘हाँ महाराज ! हम लोगोंके लिए यदि श्रीमान्का कोई आदेश हो, तो उसे प्रदान करें । हम लोग सेवाके लिए हाज़िर हैं ।’ सूबेदारने भी निवेदन किया ।

‘रूपनगरकी बड़ी राजकुमारी, जो इस समय दुनियामें सभी स्त्रियोंमें सबसे अधिक सुन्दरी है; मैं उससे विवाह करना चाहता हूँ ।’

‘तो हम लोगोंको निमंत्रण देनेके लिए श्रीमान्ने याद किया है ! है न यही बात ?’

‘हाँ यह बात भी है और दूसरी बात यह भी है कि रूपनगरके महाराज रूपसिंहका उस युवतीका विवाह छत्रसालसे करनेका है, क्योंकि उनका भुकाव उस ओर अधिक है और मेरे प्रति उनका उतना आकर्षण नहीं जान पड़ता, जितना छत्रसालके प्रति है ।’

‘यह तो रूपनगरके महाराजकी बुद्धिमानी कदापि न मानी जायगी । सभी रजवाड़ोंमें सबसे अधिक सम्मान श्रीमान्का ही है, फिर भी यदि वे आपकी उपेक्षा करते हैं, तो यह हम उनकी दूरदर्शिता माननेको तैयार नहीं ।’ नवाब रूहेला शेरशाहने निवेदन किया ।

‘यदि राजा रूपसिंह श्रीमान्की उपेक्षा ही करना चाहते हों और आपके चाहनेपर भी अपनी पुत्रीका संबंध आपके साथ स्वीकार नहीं करना चाहने, तब तो हम लोगोंको बल प्रदर्शनकी जरूरत पड़ेगी। सूबेदार कासिमखाने निवेदन किया।

वास्तवमें यही तो जगतसिंह भी कहना चाहते थे, किन्तु अपने मुँहसे कहकर सूबेदारने अच्छा ही किया। उसे प्रेरणा देते हुए जगतसिंहने कहा— ‘आप लोग चाहे जो भी करें, किन्तु जहाँ तक मैंने रूपनगरके महाराजकी मानसिक स्थितिका अध्ययन किया है, वे प्रायः नश्रसालको ही अधिक महत्व प्रदानकर रहे हैं। क्यों? है न यह बात शेरजंग; बोलो?’

‘हाँ श्रीमान् ! मैंने तो उसी दिन आपसे निवेदन किया था, जिस दिन उम बगीचेमें हम आप टहलने गए थे और दोनों राजपुत्रियाँ भी उसमें घूमते-घामते आ पहुँची थीं।’

‘हाँ उस दिन तो तुमने कहा था। तभी तो मुझे रूपनगरके राजा रूपसिंहके ऊपर विश्वास नहीं हो रहा है कि इस संबंधको स्वतः अपनी इच्छासे वे स्वीकार करेंगे।’

‘उस दिन कौन-सी बातें हुई थीं, हम लोगोंको भी बताओ शेरजंग !’ नवाब रहेला बोला।

‘उस दिन नवाब साहब ! मैंने स्वयं महाराज रूपनगर द्वारा छत्रसालको अंतःपुरमें बुलाये जानेके लिए आमंत्रित किए जाते देखा और सुना। बड़ी राजकुमारीका विवाह-संबंध भी वे उन्हींसे स्थापित करना चाहते हैं, इसकी अफवाह भी मैं सुन चुका हूँ।’ शेरजंग बोला।

‘और उस अफवाहको आप सच मान बैठे; क्यों?’ कहकर नवाब ठहाका मारकर हँस पड़ा।

‘नहीं नवाब साहब ! सभी अफवाहें सही न भी हों, किन्तु सभी भूठ भी नहीं हो सकतीं।’ गम्भीरतापूर्वक शेरजंगने निवेदन किया।

‘मानता हूँ, सभी अफवाहें भूठ ही नहीं हुआ करतीं; किन्तु किसी

खास निर्णय पर पहुँचनेके लिए अफवाहोंकी सचाई, झुठाईकी जाँच भी नहीं करना चाहिए ? आपने कुछ जाँच-पड़ताल की ?'

‘मैंने तो इसकी जाँच नहीं की नवाब साहब !’

‘नब ?’ नवाब रूहेला बोला ।

‘नब क्या ? ऐसी हालत में यह जरूरी है कि पहले अफवाहकी जाँच ही कर लेनी चाहिए । पता चल जानेपरही हम लोगोंको अपना कार्यक्रम निश्चित करना चाहिए । बिना वस्तुस्थितिके ज्ञानके केवल शक्ति ही नष्ट नहीं होती; उलटे बेवकूफ भी बनना पड़ता है । सूबेदारने गर्भीरवासे निवेदन किया ।

‘हम लोग महाराजकी आज्ञाका पालन करना चाहते हैं । यदि महाराज इन बातोंसे सहमत हों, तो पहले इस अफवाहकी जाँच होनी आवश्यक है । आवश्यकता पड़नेपर बलका प्रयोग होगा, छलसे काम होगा किन्तु यदि साधारण ढंगसे ही काम हो जाय, तो शक्तिका अप-व्यय करनेसे क्या फायदा ?

‘हाँ बात तो ठीक है । मैं भी सोचता यही हूँ । जो काम करना है, वह कैसे होगा ? इसपर विचार करना आवश्यक है, बल प्रयोगसे ही सभी काम नहीं हुआ करते ।’ जगजिसिंहने कहा ।

‘तो इसकी जाँच कैसे होगी ?’ रूहेला नवाब बोला ।

‘रूपनगरमें दाँत मुरादनका पुत्र दुकान करता है, इस कार्यके लिए उसे ही भेज दिया जाय । वह बड़ी होशियार भी है, इस कार्यको भली-भाँति गुप्त रीतिसे मुरादन कर सकती है ।’

‘ठीक है, उसे अवश्य भेजिए । जैसी स्थिति हो; हम लोगोंको सूचित करें । सारी परिस्थितिका ज्ञान हो जानेपर हमलोग प्रधानमंत्री तहव्वरखाँसे मिलेंगे और जैसे भी होगा, आपकी इच्छाके मुताबिक रूपनगरकी उस सुन्दरीको श्रीमानके अन्तःपुरमें ला बैठाएँगे । क्यों सूबेदार साहब, हमारी बातोंसे शायद आप भी सहमत होंगे ।’ नवाब

रुहेलाने एक बार जगतसिंहकी ओर और दूसरी बार सूबेदार कासिमखाँकी ओर देखकर कहा ।

‘इसमें क्या शक ?’ मिर हिलाते हुए सूबेदारने नवाब रुहेला शेर-शाहकी बातोंका समर्थन कि किया ।

‘ठीक है । मैं भी इसे स्वीकार करता हूँ । अब भोजनका समय आ गया है, आपलोग खा लें ।’

‘हमलोग तो श्रीमान् के विवाह अवसरपर दिए गए प्रीतिभोजमें खास तैयारीके साथ खाना चाहते थे, कही उसीमे इसकी कटौती न हो जाय ।’ हँसते हुए नवाब रुहेला बोला ।

‘नहीं, नहीं । मेरे विवाहमें आप लोगोंको जो प्रसन्नता होगी, उसके उपलक्षमें आप लोग जो प्रीतिभोजका आयोजन करेंगे, उसमें मैं भी सम्मिलित हो जाऊँगा । अतः प्रीतिभोजका तो कोई प्रश्न ही हमारी ओर से नहीं उठना । आज हमारी ओरसे भोजनका कार्यक्रम सफल बनावें ।’ हँसते हुए जगतसिंहने कहा ।

‘तब तो श्रीमान् ! हम लोग खुद खर्चीले बखेड़ेमें आ फँसे ।’ हँसकर नवाब रुहेला बोला ।

सबको हँसी छूट गया । जगतसिंहने कहा—‘भाई मित्रता एवं प्रसन्नता खर्चीली होती ही है; अतः प्रीतिभोजका उत्तरदायित्व आप लोगोंको सँभालना ही पड़ेगा ।’ मुस्कराकर जगतसिंहने कहा ।

भोजनोपरान्त महाराज जगतसिंह कक्षके बाहर होकर उन लोगोंको पहुँचाये और भावी कार्यक्रमके लिए उन लोगोंको सचेतकर वापस लौट आए ।

४

‘भूरसिंह !’ जगतसिंहने तीव्रध्वनिमें पुकारा ।

‘उपस्थित हूँ महाराज !’ दौड़कर भूरसिंह कक्षमें प्रविष्ट हुआ ।

‘आज बीस दिन व्यतीत हो गए, किन्तु राजमहलकी दासी मुरादन अभी तक रूपनगरसे नहीं लौटी । जाकर उसके यहाँ देख आओ, लौटी कि नहीं ।’ महाराज जगतसिंहने कहा ।

‘महाराजकी जो आज्ञा ।’ निवेदन किया भूरसिंहने ।

‘उसका घर देखा है तुमने !’

‘जी हाँ महाराज !’

‘जाओ जल्दी सूचना दो ।’

‘अभी पता लगाकर उपस्थित होता हूँ महाराज !’

‘केवल पता लगाकर ही मत लौट आना, नमझे ! यदि लौट आई हो, तो उससे बोलना—‘महाराजने तुम्हें याद किया है, सेवामें शीघ्र मेरे साथ चलकर उपस्थित हो जाओ ।’

‘ऐसा ही होगा महाराज ! निवेदन किया भूरसिंहने । जगतसिंहके समक्ष उमने मस्तक झुकाकर मुरादनके यहाँ प्रस्थान किया । अपने कक्षमें विचार-मग्न महाराज जगतसिंह मुरादनकी प्रतीक्षामें बैठ गए । उन्हें किरणप्रभाकी स्मृति ताजी हो आयी : उसके ध्यानमें वे लीन हो गए । थोड़ी ही देरमें वे मुरादनकी प्रतीक्षा करते-करते ऊबसे गए । भूरसिंह नहीं लौटा, वे रुक-रुककर कभी कक्षके बाहर घूम आते और कभी-कभी सोचते यदि मुरादनको साथ लेकर भूरसिंह आता ही होगा, तो कहीं रुक थोड़े ही जायगा ? मेरे ऊबनेसे वह जल्दी नहीं आ जायगी । चलो, चलकर बैठें । कक्षमें लौटकर वे यही सोचते-विचारते बैठे थे, उनके कान द्वार पर लगे थे । थोड़ी देर तक बैठे रहनेके पश्चात्, वे पुनः कक्षके बाहर चले गए और दूर तक दृष्टि दौड़ाकर देखने लगे । कहीं न तो

मुरादनका पता और न भूरसिंहका। टकटकी लगा-लगाकर, दूर तक जगतसिंह देखने लग। देखते-देखते एक व्यक्ति अकेले राजमार्गसे आता दिखायी पड़ा। उसे वे दृष्टि जमाकर देखने-पहचानने लग। सोचे—‘यह आता हुआ व्यक्ति भूरसिंह ही तो है, किन्तु मुरादन साथ तो नहीं है। सारा उत्साह जगतसिंहका ठड़ा पड़ गया। आकृति खिन्न हो गयी। लौटकर जगतसिंह दरबारमे जा बैठे। भूरसिंहने थोड़ी देरमें प्रवेश किया।

‘क्या हुआ उससे भेंट नहीं हुई?’

‘नहीं महाराज ! भेंट तो नहीं हुई, किन्तु रूपनगरसे वह लौट आई है।’ भूरसिंहने निवेदन किया।

‘रूपनगरसे कब लौटी वह ? इसका भी कुछ पता चला?’

‘दो दिन बीत गए हैं, उसे लौटे महाराज !’

‘दो दिन?’ मस्तक पर आँखें चढ़ाकर जगतसिंहने पूछा।

‘हाँ देव ! दो दिन उसके घरका एक आदमी बता रहा था !’

‘वह कहाँ गयी थी?’

‘शाही दरबारमे। वह बता रहा था, महाराज !’

‘तुमने उसके आदमीसे पूछा नहीं, वह कब तक लौटेगी?’

‘यह तो पूछा था, महाराज ! किन्तु उसने इसके उत्तरमें कहा—
‘उम्मे लौटनेकी बात हम कैसे बता सकते हैं ? जब शाही दरबारसे छुट्टी पाएगी, तब तो आएगी !’

‘और तुमने यहाँ आनेका उससे सन्देश नहीं कह दिया?’

‘कह दिया था महाराज !’

‘हँ !’ सिर नीचेकी ओर हिलाकर जगतसिंहने कहा।

‘शामको फिर देख आऊँगा महाराज !’ भूरसिंहने कहा।

‘चले जाना।’ भूरसिंहकी बातोंका समर्थन किया जगतसिंहने।

सन्ध्या-समय भूरसिंह मुरादनके यहाँ गया। इस बार उससे भेंट हो

गयी। भूरसिंह बोला—‘महाराज जगतसिंहने तुम्हें याद किया है मुरादन ! मैं दोपहरमें भी तुम्हें बुलाने आया था ।’

‘मुझे याद भी था और संदेश भी महाराजाका मिला । शामको मैं खुद आनेवाली थी; खैर आप आ गए; अच्छा हुआ । थोड़ी देरमें साथ ही चली चलती हूँ ।’

भूरसिंह रुक गया । मुरादनने चारपाई बिछाकर उसे बैठनेका आसन दिया । भूरसिंह प्रतीक्षा करते हुए बैठ गया । मुरादन जल्दी-जल्दी तैयार होने लगी । वह तैयार होकर बोली—‘चलिए ठाकुर साहब; अब मैं तैयार हो गयी ।’

आगे-आगे भूरसिंह और उनके पीछे मुरादन । दोनों चले आ रहे थे । मुरादनके मनमें कुछ प्रसन्नता थी । उसने आदेशानुसार महाराजका कार्य पूर्ण किया था । वह सोचने लगी—‘महाराजके सामने उस खूब-सूरत लडकीका ऐसा बड़ा-चढ़ाकर बखान करूँगी कि महाराज उसी नज़रमें भूमने लगेंगे और खुश होकर मुझे काफी पुरस्कार भी देंगे । पहले तो हमारे ऊपर वे बहुत नाराज होंगे; लेकिन ऐसे कितनोंको ठीक रास्तेपर लाना हमारे बाएँ हाथका खेल है ।’

महाराज जगतसिंहके चित्तमें स्थिरता नहीं थी । आज दिन भर उसका चित्त बड़ा आन्दोलित रहा । वे पुनः अपने कक्षमें बैठे भूरसिंह और मुरादनकी प्रतीक्षा करने लगें । भूरसिंहके लौटनेमें बड़ी देर हो गयी थी । महाराज कक्षके बाहर जाकर देवे, इन द्वार मुरादन आती दिखायी पड़ी । क्रोधमें वे लौटकर पुनः अपने कक्षमें जा बैठे ।

‘आ सकना हूँ महाराज !’ भूरसिंहने पूछा ।

‘आओ !’ तीव्र ध्वनिमें जगतसिंहने कहा ।

मुरादनने अनुभव किया—महाराजका मानसिक संतुलन ठीक नहीं है, इस समय वे रोषके आवेगमें हैं । भयसे वह काँप उठी । उसका पैर आगे चलनेसे रुक गया । फिर भी वह भूरसिंहके साथ कक्षमें प्रविष्ट हो

हो गयी। दूसरा चारा ही क्या था ? उसने अपने सामने क्रुद्ध जगत-सिंहको बैठे देखा। सम्मान प्रदर्शित करते हुए उसने अभिवादन किया।

‘क्यों, तुम्हें पता है मुरादन ! यहाँ कबसे तुम्हारी प्रतीक्षा हो रही है ? तुम्हें इसका खयाल नहीं है कि जरासे इशारे पर तुम्हें प्राणोंसे हाथ धोने पड़ेंगे ? यदि जानती हो, तो तुमने क्यों इतनी उपेक्षा की है ?’ रोषमें उत्तेजित होकर जगतसिंह बोले; एक साथ ही उन्होंने अश्वनोंकी झड़ी लगा दी।

‘हाँ महाराज ! आपको इन्तजारीमें जरूर कष्ट हुआ होगा। महाराज ! क्षमा करें। मुझे शाही दरबारमें चले जाना पड़ा था; फिर भी मैं अवकाश पाते ही तुरन्त खिदमतमें हाजिर हुई हूँ। मैं अच्छी तरह जानती हूँ महाराज ! मेरा जीवित रहना श्रीमान्की कृपा पर ही है।’ बड़ी विनम्र वाणीमें सम्मान प्रकट करते हुए मुरादनने निवेदन किया।

‘तुम यहाँ कब लौटी हो रूपनगरसे ?’ उसी तीव्र ध्वनिमें जगत-सिंहने मुरादनकी ओर तीक्ष्ण दृष्टिसे देखकर पूछा।

‘आज दो दिन हुए महाराज !’

‘तो आज तुम्हें शाही दरबारमें जाना पड़ा था, किन्तु कल तुम्हारा आगमन क्यों नहीं हुआ ?’

‘इसका मुझे बड़ा अफसोस है सरकार ! मैं तुरन्त आपकी खिदमतमें हाजिर होनेवाली थी; किन्तु क्या करूँ महाराज ! ज्योंही मैं यहाँ आनेके लिए तैयार हुई, त्योंही शाही दरबारका हुक्म आ गया। उसी वजहसे मैं हुजूरकी सेवामें न आ सकी।’

‘पाँच मिनटका भी तुम्हें अवसर न मिला ?’

‘बहुत-सी बातें बतानी है महाराज ! आपका काम अच्छी तरह कर आई हूँ। वह केवल पाँच मिनटमें ही सब न कहा जाता, इसलिए सोचा मैंने हुजूरके दरबारमें चलनेके लिए देर भले ही हो जाय; किन्तु इत्मीजानसे सब बातें करनी है, जो पाँच-दस मिनटमें न पूरी होती।

बंटा भर तो आने-जानेमें ही लग जाता हुआ ! मैं जानती हूँ; सरकार-को बड़ी इन्तजारी करनी पड़ी है, जिससे हुआ का नाराज होना ठीक ही है। लेकिन सभी बातें समझकर सरकार ! हमें माफी मिले। भूमिपर सिर रखकर विनम्र वाणीमें क्षमा मांगते हुए मुरादनने निवेदन किया।

महाराज जगतसिंहका रोष कम हुआ, उनके हृदयमें कुमारी किरण-प्रभाका समाचार सुननेकी प्रबल उत्कण्ठा थी और रोष मुद्रामें अपनी प्रेयसीकी बातें कैसे सुनते ! अतः अपने मनकी धारा उन्हें मोड़ती थी, वे मुस्कराते हुए मुरादनकी ओर तिरछी दृष्टिसे देखकर बोले—‘तुम्हें दण्ड दिया जायगा, तुमने मुझे बड़ी पीड़ा पहुँचायी है। शैतानकी बच्ची कहीकी।’

‘नहीं हुआ ! मैं झूठ नहीं बोलती, आप खुद जाँचकर लें।’ जगतसिंहकी मुस्कराहट और मुद्रा-परिवर्तन देखकर मुरादनने पुनः कहा हुआ, मैंने तो आपको हमेशा खुश रखनेकी कोशिशकी है और आपकी खिदमतमें हाज़िर रहकर कई बार इनाम हासिल किया है। मुझे माफ़ करें सरकार !’

‘अच्छा बता वहाँका क्या समाचार है ? अब बहुत-सी निरर्थक बातें करनेसे क्या फ़ायदा ?’ जगतसिंहने पूछा।

‘सरकार ! मैंने तो दुनियाके परदेमें इतनी खूबसूरत औरत कभी नहीं देखी।’

जगतसिंहका सारा ध्यान आकृष्ट हो गया। वे एकाग्र मनसे दासीकी बातें सुनने लगे।

मुरादन कहती गयी—‘सरकार ! यदि खुदावन्दकी दुआसे उसका विवाह हुआके साथ हो जाता, तो गज़बकी जोड़ी होती और दुनिया भी कहती क्या खूब ! जैसे महाराज ; वैसे ही रानी पा गए।’

‘यह दुआ-बुआकी बात रहने दो; जो पूछना चाहता हूँ, उसे बताओ।’

‘हाँ, हाँ महाराज ! उसे तो बताऊँगी ही, साथ ही हुज़ूरको दुआ भी दूँगी ।’

‘क्या तुम्हें रूपनगरके अन्तःपुरमें जानेका अवसर मिला था ?’

‘जी हाँ, सरकार !’

‘कैसे ?’

‘मैं मनिहारिन बनकर गयी थी । राजभवनमें चूड़ियाँ पहनाने ।’

‘तब क्या हुआ ?’

‘उस समय हमारे पास सभी राजकुमारियाँ आ गयी । कोई चुट्टी पहनने लगी, कोई हमारे पान क्या-क्या सामान है, जाननेके लिए तलाशी लेने लगी । थोड़ी देरमें सबसे बादमें एक लड़की आयी, उसकी गम्भीरता और अदब देखकर मेरी तबियत उसके ऊपर बढ़ी गुश हुई । हुज़ूर क्या कहें गजबकी लड़की है वह । उसके समान शाही रत्नवासमें भी न तो मुमताज बेगम खूबसूरत हैं और न उनकी शाहजादी रौशनआरा ही । एक लड़कीने हमारा सब सामान देखते-देखते हुज़ूरकी तस्वीर उठा ली, दूसरी लड़कीने दो-तीन और तीसरीने बाकी सभी तस्वीरें उठाकर देखी । उनमें जितनी तस्वीरें मुसलमान राजा-रईसोंकी थी, उन्हें तो हँसी उड़ा-उड़ाकर नीचे रख दिया, हिन्दू राजाओंकी तस्वीरें लेकर वे सब खरीदनेके लिए आपसमें कहने लगीं । सबसे बादमें बड़ी राजकुमारी किरणप्रभा शायद नाम है, आई । उसने एक-एककर सभी तस्वीरें चुप होकर देखा, उनमेंसे केवल तीन तस्वीरोंका ही दाम उन्ने पूछा । बाकी सब रख दिया ।

‘वे तीन तस्वीरें किन राजाओंकी थीं ?’

‘वे ? एक तो खुद हुज़ूरकी थी और दूसरी महाराणा कर्णसिंह मेवाड़की थी ।’

‘और तीसरी ?’

‘तीसरी थी, बूँदीनरेज महाराज छत्रसाल की ।’

‘हूँ ।’ मिर नीचेकी ओर हिलाकर जगतसिंहने कहा ।

मुरादन पुनः बोली—‘मैंने दाम पूछे जाने पर कह दिया—इनका दाम नहीं लिया जाता; आप सबके यहाँ इनको देनेपर इनाम मिलता है, जो कुछ मुनासिब समझिए आप भी दे दीजिए ।’

‘इसके बाद ?’ जगतसिंहने पूछा ।

‘इसके बाद सरकार ! उसकी हम उम्र एक सखीने एक तस्वीरको हाथमें लेकर उसके सामने इशाराकर कहा—‘लो देखलो, देखो, पसन्द है न यह चित्र ? तुम्हारे प्रेमीका चित्र है, बस केवल इसे ही खरीदो बेकार सब लौटा दो ।’

‘तब क्या हुआ ।’

‘उसके यह कहने पर उस लड़कीका चेहरा तमतमा आया; वह लजा गयी सरकार !’

‘जगतसिंहकी उत्सुकता बढ़ गयी । शीघ्रतासे वे बोले—‘वह कौन सा चित्र था मुरादन ?’

‘वह तो हुज़ूर बूँदी-नरेश महाराज छत्रसालका था ।’

‘छत्रसालका ?’

‘हाँ हुज़ूर ।’

‘और मेरा ?’

‘वह तस्वीर भी तो वह खरीदना चाहती थी ।’

‘खरीदना चाहती थी, यह तो तुम पहले भी कह चुकी हो, दोहरानेसे क्या फायदा ? मैं पूछना चाहता हूँ—जब उसने मेरी तस्वीर देखी, तब उसका हाव-भाव कैसा था ?’ झुंझलाकर जगतसिंहने पूछा ।

‘समझ गयी सरकार ! आपकी तस्वीरको देखकर तो वह कुछ भी हाव-भाव न परगट करने पायी, उसकी सखीने तो जोर देकर छत्रसालकी ही तस्वीरकी बावत मोचने-विचारनेको मजबूर कर दिया था ।’ मुरादनने कहा ।

जगतसिंहकी भावनाको कुछ धक्का लगा । चालाक मुरादनने

सँभालकर स्थितिपर प्रकाश डाला था; अतः किरणप्रभाकी मनःस्थिति-की अभिव्यक्तिपर उसने परदा डालनेका प्रयत्न किया था; किन्तु सूक्ष्मदर्शी महाराजजगतसिंहकी पैनी दृष्टि और कल्पनाने किरणप्रभाके अन्तस्तलगत सूक्ष्मसे भी सूक्ष्म विचारोंको हृदयंगम कर लिया। वे बड़े खिन्न हो गए। जगतसिंहके इस प्रकार बदलते हुए मनोविकारपर मुराद-नने दृष्टिपात किया। उसने उनके हृदयमें अंकुरित होकर मुझति हुए रागात्मक संबंधको संरक्षण प्रदान करनेकी कामनासे पुनः उनका ध्यान उस ओर आकृष्ट किया। वह बोली—‘सरकार ! किरणपरभाने पहले आपकी ही तस्वीरको मुझे दिखाकर पूछा था, बकिया दोनों तस्वीरोंके बारेमें उसने वादमें पूछा।’

‘साफ़-साफ़ कहो। तुम्हारी बात मेरी समझमें नहीं आ रही है।’ कुछ रोव व्यक्त करते हुए जगतसिंह बोले। ‘एक बार तो कहती है, छत्रसालकी तस्वीर पर उसका झुकाव हुआ, दूसरी बार बताती है मेरी तस्वीर पर। अपनी इशर-उधरकी बातोंमें ही जो तथ्य है, उसे छिपा रखती है।’

साफ़-साफ़ ही कहती हूँ हुआ ! वह सरकारकी तस्वीर देखकर पहले ही रीझ गयी थी। हो सकता है, उसकी सहेलीने उसे चिढ़ानेके वास्ते दूसरी तस्वीर दिखाकर मजाक किया हो।’

‘और यह भी तो हो सकता है, उसने पहलेसे वूँदी-नरेश छत्रसाल-से प्रेम किया हो।’

‘किन्तु आपकी तस्वीर खरीदनेके लिए तैयार हो जानेकी भी तो कोई वजह हो सकती है।’

‘हो सकती है, किन्तु उसका अर्थ केवल प्रेमके ही कारण मान लिया जाय, यह मूर्खता न होगी?’

‘इसीलिए तो सरकार साफ़-साफ़ मैं यह नहीं कह पा रही हूँ, कि वह आपसे ज्यादा प्रेम करती है या महाराज छत्रसालसे।’

‘हाँ, तुम्हें यही माफ-माफ कह देना चाहिए। दुविधामें डालनेसे क्या फायदा?’ कुछ रुष्ट होकर जगतसिंह बोले।

मुरादन चुप हो गयी। दृष्टि नीचे स्थिरकर जगतसिंह आगेके लिए कर्तव्य निश्चित करने लगे। थोड़ी देरमें वे बोले—‘ठीक है; अब तुम जा सकती हो। जरूरत पड़नेपर तुम्हें फिर याद किया जायगा। यह लो अपना इनाम।’ हाथ आगे बढ़ाकर एक स्वर्ण मुद्रिका मुरादनको जगतसिंहने दे दी।

‘मरकारका जो हुक्म!’ कहते हुए दासीने पुरस्कार थाम लिया। डाट-फटकारसे छुट्टी पानेकी प्रसन्नतामें अभिवादनकर मुरादन चली गयी।

५

५

‘महाराज; अब तो हमलोग शत्रुओंसे घिर चुके हैं, अब क्या करना होगा?’ अङ्गरक्षकने निवेदन किया।

शत्रुओंकी बात सुनकर महाराज रूपनगर चिन्ताग्रस्त हो गए। निर्जन स्थान, इस समय माथमें सैनिक शक्ति दुर्बल, माथमें महारानी रूपनगर भी। क्या किया जाय? इसपर गम्भीरतापूर्वक मौन होकर महाराज सोचने लगे। उनका ध्यान भंग किया शत्रु पक्षके एक दक्ष सेनानीने उपस्थित होकर। उसने निवेदन किया—‘श्रीमान्! मैं इस समय आक्रमणकारी, शत्रुपक्षसे आपका ध्यान आकृष्ट करनेके लिए उपस्थित हुआ हूँ!’

‘मेरे ऊपर इस समय आक्रमण करनेवाला कौन शत्रु है; मैं पहले यही समझ लेना चाहूँगा।’ महाराज रूपनगर बोले।

‘समय पर आपको विदित ही हो जायगा श्रीमान्!’

‘फिर भी नाम तो सुन लूँ।’

ठीक है, श्रीमान्की यही इच्छा है, तो सुन लें । पिण्डारी मेना-पति शेरजंगका तो नाम श्रीमान्ने सुना ही होगा ?'

'हाँ; वे क्यों हमारे ऊपर आक्रमण करना चाहते हैं ?' उन्हें तो मैं अपना मित्र ही समझता था ।'

'ठीक है, यह तो आप अपना काम निकालनेके लिए समझ रहे हैं, और ऐसे ही समझता भी चाहिए ।'

'तो क्यों वे हमारे ऊपर आक्रमण करना चाहते हैं ? धनके लिए ।'

'हाँ श्रीमान् ! एक कारण यह भी है । इसकी अपेक्षा दूसरा कारण भी है ।'

'वह क्या ? उसे भी बताओ ।' महाराज रूपनगर और उसकी महारानी उस व्यक्तिकी मुखमुद्रा देखने लगीं ।

वह बोला—'श्रीमान् ! आपकी पुत्रीकी सुन्दरताका बखान भी दूर-दूर तक जहाँ तहाँ फैल चुका है; अतः मेनापति महोदयकी माँगोंमें एक प्रमुख वस्तु यह भी है—वे उस लड़कीकी सौन्दर्य कथा सुनकर बहुत प्रभावित हो गए हैं श्रीमान् ! मुझे आपकी सेवामें उन्होंने इसी कारण भेजा है—मैं पता लगा लूँ यदि आप अपनी पुत्री उन्हें धनके साथ सौंप दें, तो युद्ध न किया जाय ।'

शेरजंगकी कड़ुवी बातें सुनकर महाराज रूपनगरका सारा शरीर जल उठा । आँखोंसे चिनगाणियाँ प्रस्फुटित होने लगीं, वे ध्वनिमें तीव्रता लाते हुए बोले—'जहाँ तक धनका प्रश्न था, वह तो ठीक था, किन्तु अब राजकुमारी तक माँग पहुँच गयी; यह तो घोर अपमान है; इसे सहन नहीं किया जा सकता । युद्धमें प्राण भले ही दे दिए जायँ, किन्तु ये बातें सहनशक्तिके बाहरकी हैं । जाओ अपने स्वामीसे कह दो, मैं युद्धके लिए तत्पर हूँ । युद्धसे 'क्षत्रिय विमुख नहीं हो सकते, जाओ ।'

शेरजंगका प्रतिनिधि लौट गया । उसने महाराज रूपनगरका उत्तर सुना दिया ।

‘ठीक है, युद्ध यदि वे चाहते हैं, तो युद्ध ही होगा। हाँ सरदारोको यह समझा देना है कि रूपनगरके महाराज और महारानीको बन्दी बनाता है, उनके प्राणोंको युद्धमें नहीं ले लेना है। उन्हें बन्दी बनाकर अधिक काम निकाला जा सकता है।’ जेरेजंगने कहा।

‘जो हुकुम सरकार !’

‘हाँ यही ठीक होगा। इसीलिए तो उन्हें बादशाहके नामसे बुलाने-का जाली पत्र लिखाकर भेजा था—महाराज जगतसिंहने।’

‘तो ठीक है, हुजूर ! हमको जो हुक्म होगा, उसे हम करनेके लिए तैयार हैं।’

‘जाओ। सभी वीर बहादुर सिपाहियोंको साथ लेकर शत्रुकी छोटी सैनिक टुकड़ीको खतम कर महाराज और महारानीको बन्दी बनाकर हमारे नामने हाजिर करो।’

‘मेरा ही होगा हुजूर !’

जेरेजंगके बहादुर सैनिक रूपनगरके सैनिकोंमें युद्धकी कामनासे जा भिड़े। भयंकर युद्ध प्रारंभ हो गया। यद्यपि रूपनगरके क्षत्रिय सैनिक अपने-अपने भयंकर युद्ध-कौशलका प्रदर्शनकर शत्रुओंका हृदय दहला दे रहे थे; किन्तु संख्यामें कम होने और अनजान स्थानमें युद्ध होने आदि कारणोंमें असफल होने लग रहे थे। युद्ध काफी समय तक होता रहा, जिसमें रूपनगरके योद्धा लड़कर वीर गति प्राप्त करने लगे। शत्रु सैन्यको काफी प्रभावित कर अन्तमें रूपनगरके सैनिक पराजित हो गए और महाराज महारानीके साथ पिण्डारियोंके द्वारा बन्दी बना लिए गए।

पिण्डारी सेनापति जेरेजंगने अपनी विजयकी घोषणा की। महारानी और महाराजको बन्दी बना घायल सैनिकोंकी मरहम-पट्टी करा उसने एक पत्र लिखकर रूपनगरके उत्तराधिकारी राजकुमार विक्रमकुमारको सूचना देनेके लिए रूपनगरके ही एक सिपाहीको भेज दिया।

अनेक दिनोंकी यात्रा समाप्तकर दूत रूपनगर पहुँचा। तत्कालीन शासक विक्रमकुमारका दरवार लगा था। दूतने दरबारमें प्रवेश किया।

उसकी ओर सबकी दृष्टि केन्द्रित हो गयी। दूत थकावटसे शिथिल था, भूख-प्याससे व्याकुल था और उस दुःखद घटनासे आक्रान्त था। उसकी आकृतिपर विषादकी छाया देखकर कुमार विक्रमने पूछा—‘महाराज-का साथ छोड़कर खिन्नमनसे उदास हो तुम कैसे लौट आए ? कुशल तो है ? तुम्हारे अशान्त मनका कारण क्या है ? शीघ्रातिशीघ्र बताओ ।’ सबकी जिज्ञासा तीव्र हो उठी।

दूतने व्यथित मनसे जेरेजंगका दिया पत्र कुमार विक्रमके समक्ष प्रस्तुत कर दिया। सारी सभाकी दृष्टि पत्रकी ओर मुड़ गयी। कुमार विक्रम पत्र पढ़ने लगे—श्रीमान् कुमार विक्रमविहजी; आपके माता-पिता मेरे बन्दीगृहमें अतिथि हैं। हम आपसे सम्बन्ध रखना चाहते हैं, जिसके लिए आपको अपनी दोनों बहनोंके डोले, एक हजार घोड़े और एक लाख रुपये भेजने होंगे। आपके माता-पिताको वाञ्छित वस्तुएँ प्राप्त होते ही बन्दीगृहसे मुक्त कर दिया जायगा। यदि निश्चित अवधि (कृष्ण जन्माष्टमी) तक आपने पत्रके अनुसार कार्य न किया, तो आपके ऊपर आक्रमण करके सब वस्तुएँ तो प्राप्त कर ही ली जायँगी, किन्तु आपके माता-पिताको फाँसी दे दी जायगी। इस समय आपके माता-पिता और राजकुमारियाँ पिएडारी दलके सेनापति जेरेजंगकी दयापर हैं। पिएडारियोंका कोई निश्चित स्थान अथवा किला नहीं है, अतः वे सब पर्वतोंके अन्तर्गत रहते हैं। आप पत्रके अनुसार जो माँग की गयी है, उसे योजनानुसार इसी पहाड़ी पर पहुँचा दें ।’

पत्र पढ़नेके पश्चात् कुमार विक्रमकी आकृति म्लान हो गयी। उनके हृदयको बड़ा आघात पहुँचा। उनकी दशा देखकर सारी सभामें विषाद छा गया। राजमहलमें शोककी लहरें तरंगित हो उठी। शोकसे राजके झण्डे झुका दिए गए। चतुर्दिक् शोककी छाया मड़राने लगी।

दूसरे दिन राज्यके शुभचिन्तकों, सम्मानित व्यक्तियों, सभामदों और अधिकारियोंको आमन्त्रितकर सभा की गयी। आगेका कार्यक्रम निश्चित

किया जाने लगा । बहुत विचार-विमर्शके पश्चात् एक व्यक्ति उठकर बोला —‘श्रीमानो; मेरी समझसे किसी ऐसे कार्यका आरम्भ, जिसमें प्रतिकारस्वरूप दूसरे भी कुछ करें; न किया जाय, क्योंकि यह प्रश्न रूपनगरके शासन-सम्मानसे सम्बन्धित है।’

कुमार विक्रम बड़ी ओजस्वी वाणीमें बोले—‘बन्धुओ ! एक ओर डाकुओंका दल एक राज्यको चुनौती दे, उससे धन माँगे, राजकुमारियोंके अपहरणका प्रस्ताव रखे, वीर राजपूत इन शृणित प्रस्तावका प्राण रहते समर्थन नहीं कर सकते । राज्य एवं अपनी प्रतिष्ठाका प्रश्न है; किन्तु दूसरी ओर सबसे बड़ी बात है, माता एवं पिताकी शत्रुओंके पंजेसे मुक्ति । अतः कोई साधारण समस्या नहीं सामने आई है । इसके लिए गम्भीरतापूर्वक विचार करना है । शासनको न तो अपमानित होना पड़े और न मेरे माता-पिताके प्राणोंकी हानि हो; अतः ऐसा कोई मध्यमार्ग आप लोग सोच-विचारकर अपनाएँ, जिससे किसी मर्यादाको अपात पहुँचे बिना सब कार्य ठीक हों ।’

उस दिन विचार-विमर्श तो बहुत हुआ, किन्तु किसी निश्चित कार्यक्रमपर सब लोग सहमत न हुए । जब इस बातका पता राजकुमारियोंको चला, तब वे बहुत दुखी हुईं । दूसरे दिन जब सभा विचार करनेके लिए पुनः संगठित हुई, तब उस दिन उसमें राजकुमारियाँ भी सम्मिलित हुईं । राजकुमारी किरणप्रभा बोली—‘मेरे विचारसे कुछ समयके लिए पिण्डारियोंसे सब प्रबन्ध करनेके बहाने मुहलत माँग ली जाय, जिससे मेरे माता-पिता तो सुरक्षित रहें और इससे दूसरा लाभ यह भी होगा कि शत्रु हमारे विपरीत जो कार्य करना चाहते हैं, आश्वासन पाकर कुछ शिथिल भी हो जायेंगे और इस अवधिमें जो कुछ भी आपलोग करना चाहेंगे उसके लिए पूर्ण अवसर भी प्राप्त हो जायगा । इस अवधिमें किसी और भी सशक्त राजाका मित्र बनाकर उससे सहायता भी ली जा सकती है ।’

राजबाला जो कुमारी किरणप्रभाकी सहेली एवं चचेरी बहन थी; प्रसन्न होकर बोली—‘मैं इस प्रस्तावका समर्थन करती हूँ हमें भी अपने जो आत्मीय हैं, उनकी परीक्षाका अवसर प्राप्त होगा।’

कार्यक्रम सफल होनेकी क्षमता कहाँ तक राजबालाके सुभावमें है इसे आजमानेकी दृष्टिसे महामंत्री महोदयने पूछा—‘बेटी; तुमने अभी जो प्रस्ताव रखा है। उस सम्बन्धमें हम विस्तृत जानकारी प्राप्त करना चाहते हैं।’

राजबाला बोली—‘जिस समय मैं ननिहाल करौली गयी थी; उस समय वहाँ एक भोजके अवसर इन्द्रगढ़-नरेश सरदार मौकमसिंहसे भेंट हुई थी। वहाँ राजवंशके अनेक स्त्री-पुरुष उपस्थित थे और ‘इकहाड़ा बूँदी धनी इक राणा मेवार। उन हिन्दुबनकी पति रखी, इन राखी तलवार ॥’ इस दोहेकी सत्यता पर विचार हो रहा था। उस समय मेरे मुँहसे निकल पड़ा था—‘अभी तक कभी हाड़ाकी तलवारका पराक्रम प्रदर्शित तो नहीं हुआ। मैंने तो कहीं देखा-सुना नहीं, भला इसे कैसे स्वीकार किया जा सकता है?’

उत्तेजित होकर इन्द्रगढ़ नरेश मौकमसिंहने उत्तर दिया—‘मेरी वीरताका समय पर प्रदर्शन होता है, इसकी परीक्षा किसी भी समय ली जा सकती है।’

‘वास्तवमें इसे मैं उपयुक्त अवसर मानती हूँ। मेरी इधर सहायता भी होगी और उधर मौकमसिंहके तलवारकी परीक्षा भी।’

राजबालाके इस सुभावका सभी उपस्थित जनोंने एक स्वरसे अनुमोदन किया। राजबाला इन्द्रगढ़-नरेशको पत्र लिखनेके लिए प्रेरितकी गयी। पत्रमें रूपनगरकी सभी दयनीय दशाओंका उल्लेख किया गया और प्रार्थनाकी गयी—‘यदि आपकी तलवारमें शक्ति हो, तो हमारी रक्षा कर अपनी कीर्ति प्रतिष्ठित करें।’

पत्र लेकर मंत्री महोदय स्वयं इन्द्रगढ़ गए। उन्होंने मौकमसिंहसे

भेंट की। मौकमसिंहने मंत्रीके साथ बूँदी-नरेश छत्रसाल एवं कोटाके महाराज माधोसिंह आदिसे विचार-विमर्श किया। रूपनगरकी अस-हायावस्था पर प्रकाश डालकर सहायताके लिए उपर्युक्त व्यक्तियोंको मंत्री महोदयने उत्साहित किया।

महाराज छत्रसालने कहा—‘जब हमारी तलवारकी परीक्षाकी जा रही हो और यदि कोई शरणागत होकर अपनी रक्षाकी याचना कर रहा हो, तो हमें अवश्यकी पराक्रमक प्रदर्शित कर उसकी रक्षा करनी चाहिये। मैं आशा करता हूँ, आप सब भी मेरे विचारोंसे सहमत होंगे।’

‘मैं तो कुछ और भी सोच रहा हूँ, जिसे संभवतः तुम भी उचित समझोगे।’ महाराज माधोसिंह बोले।

सब उत्सुक होकर उनकी ओर देखने लगे।

माधोसिंह बोले—‘बेटा छत्रसाल ! मैं तो सोच रहा हूँ—इस कार्यमें जो भी सहायताकी जाय रूपनगरका न तो एक भी पैसा खर्च हो और न किसी व्यक्ति अथवा सैनिककी सहायता ही ली जाय। रूपनगरके महाराज को बन्दीगृहसे उन्मुक्त करा, उन्हें शकुसल रूपनगर पहुँचा दिया जाय।’

‘मैं भी इसे स्वीकार करता हूँ। हमारी तलवारकी उत्तम ढंगसे परीक्षामें उत्तीर्ण होनेकी प्रणाली इससे बढ़कर और क्या हो सकती है?’ मौकमसिंहने माधोसिंहसे निवेदन किया।

सर्व सम्मतिसे यह विचार मान्य हो गया। रूपनगरके उत्तराधिकारी कुमार विक्रमको एक पत्र लिखाया गया—‘आपके माता-पिता को बन्धन-मुक्तकर हमलोग जो अवधि आपने पिण्डारी दलपतिसे निश्चितकी है, व्यतीत होनेके पूर्व ही रूपनगर पहुँचा देंगे। आपलोगोंको शान्त होकर चुपचाप बैठना चाहिए और किसी भी प्रकारकी उत्सुकता तथा उत्तेजना प्रदर्शित करनेकी आवश्यकता नहीं। इस संबंधमें कि इस कार्यके लिए हमारी क्या योजना होगी; इसे समयसे पूर्व व्यक्त न किया जायगा।’

हाड़ा-नरेशका पत्र लेकर मंत्री महोदय रूपनगर लौट आए। उधर

पिण्डारीदलके सेनापति शेरजंगने रूपनगरके शासक कुमार विक्रमको वह अवधि प्रदानकर दी, जिसका उल्लेख पत्रमें प्रबन्धके लिए किया गया था ।

शेरजंगने कुमार विक्रमको आश्वासन देकर एक पत्र यों लिखा था—‘आपने सब सामानोंके प्रबन्ध एवं शुभ मुहूर्त्तमें राजकुमारियोंके डोले देनेका जो निश्चय किया है, उसके कारण हम आपसे बहुत प्रभावित हैं, हमारा आपका संबंध बहुत हो गया है । हम आपके माता-पिता को बन्दीगृहमें किसी प्रकारका कष्ट न होने देंगे । उनके साथ विनम्रता एवं सद्भावका व्यवहार रखेंगे । हमारे किसी भी आचरणसे उन्हें कटुताका अनुभव न होने पावेगा । भोजन आदिका प्रबन्ध उनके लिए विश्वसनीय व्यक्ति द्वारा उनकी इच्छानुसार ही होगा ।’

इस प्रकार हाड़ा एवं पिण्डारी दलपति शेरजंगसे आश्वासन पाकर रूपनगरके उत्तराधिकारी कुमार विक्रम, वहाँका राजवंश एवं नागरिक चिन्तासे मुक्त हो, उस दिनकी प्रतीक्षा करने लगे; जब महाराज और महारानीके सकुशल नगर लौटनेसे वहाँकी जनताकी अशान्ति दूर होगी ।

राजकुमारी किरणप्रभा तो चिन्तामें गली जा रही थी, शेरजंगका नाम सुनकर, उसके द्वारा माता-पिताके बन्दी बनाए जाने और उसकी घृणित माँ सुनकर अपार विषादको प्राप्त हो प्रतिकारकी ज्वालासे जली जा रही थी, कुछ शान्त हुई । उसका हृदय महाराज छत्रसालकी उदारता एवं कर्त्तव्यपरायणतापर मुग्ध हो गया, उसके मनमें छत्रसालके प्रति बड़ी श्रद्धा उत्पन्न हो गयी । उसकी दृष्टिके सामने एक धीरोदात्त, महापराक्रमी, उच्चविचारशील, महनीय व्यक्तित्व मूर्त्त हो उठा । वह महाराज छत्रसालपर आसक्त हो गयी । उसके मनमें उनके प्रति रागाल्मक सम्बन्धकी भावना उत्पन्न हो गयी । उसका विषाद दूर हो गया; क्योंकि उसके संरक्षणका उनसे आश्वासन मिल चुका था ।



६

‘नदीके किनारे हुज़ूर एक जोगिन आकर बैठी है, वैसी खूबसूरत औरत तो कभी नहीं देखी गयी। खूबसूरती तक ही खूबी उसमें नहीं है सरकार ! उसमें तो बह विद्या भी है, जिस किसीका हाथ देखकर बह जो कुछ भी कह दे, भला वह कभी भूठ हो सकता है ? चलकर देखिए, वहाँ बहुत-सा मजमा एकट्ठा हो गया है।’ अभिवादन करके शेरजंगसे एक संतरीने निवेदन किया।

शेरजंग संतरीकी प्रभावोत्पादक वार्त्तासे बड़ा प्रभावित हुआ। उसने कहा—‘उसे बुला लाओ।’

‘जो आज्ञा हुज़ूर ! लेकिन सरकार ! कहीं वह सरकारका हुक्म सुनकर नाखुश न हो जाए; क्योंकि वह किसीसे कुछ लेती नहीं। उसका आदर तो सभी लोग वैसे ही किया करते हैं।’

‘जा-जा देख तो, यदि न आवेगी, तो मैं खुद चलोंगा। पहले जाकर देख तो आ।’ शेरजंग बोला।

‘जो सरकारका हुक्म।’ कहकर सन्तरी नदी तट पर जहाँ जन-समूह कौतूहलसे एकत्र हो उठा था, जा पहुँचा। उसे उस योगिनसे वार्त्ता करनेकी बड़ी उत्सुकता थी; वह मस्तक झुकाकर बोला—‘देवी-जी; आप अपने दर्शनोंसे पिण्डारीदलके सेनापति शेरजंगको कृतार्थ कर सकती हैं ? उन्होंने बड़े आदरसे आपको बुलवाया है, वे आपकी महिला सुनकर बड़े प्रभावित हैं।’

योगिन कुछ देर तक सौम्य दृष्टिसे सन्तरीकी ओर देखती रही। कुछ सोचने-विचारनेके पश्चात् बोली—‘चलना तो मैं नहीं चाहती; क्योंकि मैं तो यहाँ तक आ ही चुकी हूँ, इस पर भी यदि शेरजंग खुद न आ सके और मुझे ही बुला भेजे हैं, तब मैं नहीं समझती, कि मेरी प्रतिष्ठाका उनके मनमें कुछ महत्व है। यों तो मैं किसीसे भी कुछ नहीं

चाहती, मुझे सांसारिक क्रिया-कलापोंमें कोई आसक्ति नहीं है, तब मैं किसीकी इच्छा-आकांक्षाका अनुवर्तन कैसे कर सकती हूँ।' थोड़ी विरतिका योगिनने प्रदर्शन किया।

‘तो देवि ! मैं उनसे जाकर क्या निवेदन करूँ ?’

‘जो भी इच्छा हो, जाकर निवेदन कर दो।' उदासीन भाव व्यक्त करते हुए वह बोली।

संतरी चला गया। उसने शेरजंगसे निवेदन किया—‘हुजूर ! मैंने तो आपसे पहले ही कह दिया था।’

‘तो क्या नहीं आना चाहती ? मुझे ही चलना चाहिए ? क्या कहा उसने ?’

‘हुजूर वह तो कह रही थी—‘मुझे कुछ नहीं चाहिए। मैं किसीकी इच्छाकी अनुगामिनी नहीं हो सकती।' बड़ी तपस्विनी है, वह सरकार ! आपको चलनेके लिए तो मैं नहीं कह सकता, किन्तु यहाँ आनेपर उसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती। वैसे सरकार ! जैसी जरूरत समझें, करें।'।

‘ठीक है; मैं खुद चलूँगा। तुम्हारे कहनेमें ही अधिक जोर है या कुछ है भी। मैं इसे देखना चाहता हूँ !’

‘हुजूरकी जो मरजी।'।

‘चलो मेरे साथ।' कहकर शेरजंग खुद चल पड़ा। उसके पीछे-पीछे संतरी भी चलने लगा। दोनों सरिता तटपर योगिनके निकट पहुँच गए। शेरजंगने देखा, वहाँ मृगचर्म बिछाकर एक अत्यन्त सुंदर रमणी सौम्यमुद्रामें बैठी है। उसके अंग प्रत्यंगसे सुन्दरताकी आभा फूट रही है। देखनेमें वह कुछ गम्भीर लगती है। उसके विशालनेत्र, काली बालकी लटें एव शरीरकी गठन बहुत ही आकर्षक हैं। कितने ही चंचल-मति पुरुष उसके रूप और यौवनकी ओर आकृष्ट हो आत्मविभोर हो चुके होंगे, नहीं कहा जा सकता। शेरजंगके हृदयमें उसे देखते ही वासना जागृत हो गयी। अपना प्रभाव व्यक्त करते हुए शेरजंग बोला—‘देवी !

मैं पिएडारी दलका सेनापति शेरजंग आपकी खिदमतमें हाज़िर हुआ हूँ। आपकी ख़ुबियाँ सुन-सुनकर यहाँ आनेके लिए लाचार हो उठा था। सचमुच इस जमीन पर उतरी हुई आप कोई देवी हैं। बोलिए मैं आपकी क्या खिदमत करूँ ?'

‘खिदमत ?’ देवीने दोहराया।

शेरजंगकी दृष्टि देवीकी अनुपम रूपा-माधुरीका पान करने लगी थी, अतः दिखावटी विनम्रतासे वह बोला—‘हाँ, यह आपकी हमारे ऊपर बड़ी मेहरबानी होगी। यदि आपने मुझे खिदमतके लिए कुछ भी मौका दिया।’

‘खिदमत तो मैं कुछ भी नहीं चाहती।’

‘मगर यदि आपने मुझे खिदमतके लिए कोई मौका न दिया तो यह आपकी बड़ी बेरहमी मानी जायगी।’ कुछ मुस्कराहटके साथ शेरजंगने निवेदन करते हुए अपना प्रभाव डालनेका प्रयत्न किया।

‘यदि रहमदिलीसे मेरे नियममें रुकावट पड़े तब भी ? मीठी मुस्कानसे उत्तर दिया योमिनने।

‘शेरजंगके हृदयमें देवीकी मधुरवाणी एवं अत्यन्त प्रिय मीठी मुस्कानका भारी प्रभाव पड़ा। उसका हृदय आन्दोलित हो उठा। उसने पुनः अपना प्रभाव जमानेके उद्देश्यसे निवेदन किया—‘देवीजी ! रहमदिलीसे कितनोंकी भलाई हुआ करती है, दूसरोंकी भलाई करना ही आपलोगोंका काम है। मैं आपको नसीहत नहीं दे रहा हूँ, बल्कि आपका ख्याल इधर ले आ रहा हूँ।’ मुस्कराहटसे अपनी विजयका गर्व करते हुए शेरजंग बोला।

योगिन तटस्थता, और विरतिकी नीति दिखा चुकी थी और शेरजंगकी मनःस्थितिका अध्ययन भी कर चुकी थी; अतः तर्क अधिक न बढ़ाना ही उसने उत्तम समझा। उसने सोचा—शेरजंग मेरे द्वारा पर्याप्त प्रभावित हो चुका है, अतः अपनी पराजयमें ही विजय है। थोड़ी देर

मौन रहकर उसने कहा—‘अच्छा भाई बोलिए; मेरी खिदमत करना चाहते हैं?’

‘इसके लिए तो आपको सोचना और हुक्म देना चाहिए।’

‘मैं सोचकर ही क्या कर सकती हूँ, जब आपकी ही आज्ञाका पालन करना है। हँसकर देवीने उत्तर दिया।

‘नहीं-नहीं। लज्जित न करें देवि ! इसके लिए मैं आपकी ही इजाजत की इन्तजारी करूँगा।’

‘मैं तो पहले ही कह चुकी हूँ—‘मुझे किसी भी वस्तुकी इच्छा नहीं है। अतः आप अपनी इच्छासे मेरी जो कुछ भी खिदमत करना चाहें, मैं उसे ही मान लूँगी।’

‘अगर आपकी इतनी मिहरबानी है, तो मैं तो यही चाहता हूँ हमारे यहाँ चलकर मन्दिरमें ही रहें। हिन्दुओंके लिए हमारे यहाँ पूजा-पाठका भी इन्तजाम है। आपको यहाँ कोई तकलीफ नहीं उठानी पड़ेगी।’ डरते हुए शेरजंग (कि कहीं मेरे आचरण पर इस देवीको सन्देह न उत्पन्न हो जाय, नहीं तो अब तकका सारा प्रयत्न व्यर्थ हो जायगा) ने निवेदन किया।

यही योगिन भी चाहती थी, किन्तु फिर भी उसने कहा—‘सेनापति महोदय ! बहते पानी और रमते योगीको बन्धनमें रखना चाहते हैं?’ मुस्कराकर शेरजंगकी ओर दृष्टिनिक्षेपण करते हुए वह रमणी विरति-प्रदर्शित करने लगी।

कटाक्षसे शेरजंग कामाहत हो गया। उसने मादकताका अनुभव किया। बातें बनाकर वह बोला—‘नहीं-नहीं देवि ! ऐसा आप कदापि न सोचें। मैं आपको बन्धनमें नहीं रखना चाहता। केवल आपको अपना सुभाव दिया है। आपके ऐसा करने पर मुझे भी आपकी खिदमतके लिए मौका मिलेगा और मेरी भी भलाई होगी। मैंने केवल अपनी भलाई और आपकी खिदमतके लिए ऐसा कहा है।’

‘भाई; मैं तो बड़ी दुविधामें पड़ गयी, मुझसे न तो हाँ और न तो नहीं; कुछ भी नहीं कहते बन रहा है।’

‘दुविधा छोड़िए; अब तो आप बात दे चुकी हैं। चलिए अपना आसन किलेके भीतर मन्दिरमें जमाइए ?’

‘किंतु मेरी एक शर्त है सेनापति महोदय !’

‘मैं उसे सुननेकी इन्तजारीमें हूँ देवि !’

‘मैं आपके यहाँ तभी रह सकती हूँ, जब मेरी आजादीमें कोई रुकावट न पड़े।

‘कह तो दिया, आपकी मर्जी के खिलाफ कभी कुछ न होने पाएगा बस ?’

‘यदि हुआ तो उसी दिन मैं चली जाऊँगी।’

‘ठीक है, मैं इसे मानता हूँ।’ शेरजंगने निवेदन किया।

‘संतरी ?’ वह बोला।

‘जी हज़ूर !’

‘चलो; यह मृगचर्म और कमंडक वगैरह ले चलो। हाँ, एक होशियार दायी जो जरा भगत हो हिंदू भी हो, देवीके लिए तैनात कर दो। जो कायदेसे इनकी खिदमत करती रहे।’ शेरजंग बोला।

‘जो हुकुम सरकार !’ संतरीने निवेदन कर देवीके कमंडलकी ओर हाथ बढ़ाया। देवी मृगचर्मसे उठ खड़ी हुई। संतरीने उसे भी लपेट कर बगलमें दाब लिया। आगे-आगे देवी, जिसके पीछे शेरजंग और सबसे पीछे संतरी चलने लगा। देवीने उस सुदृढ़ दुर्गमें प्रवेश किया। मंदिर तक शेरजंगने देवीको स्वयं पहुँचाया, वहाँ कमंडल और तुगचर्म रखवा कर वह बोला—यदि आपकी किरपा हो, तो हमारे आमदरवार को भी चलकर देख लें। हालां कि कभी-न-कभी आपको वहाँ चलना ही होगा, लेकिन फिर भी आज ही चलकर उसे भी देख लें। मैं तो आपके ही हुक्मसे सब काम करना चाहता हूँ।’

‘ठीक है । मुझे आपका जो-जो हुक्म होगा, सब देख लूँगी ।’

शेरेजंगकी प्रसन्नताका ठिकाना न रहा । उसने अनुभव किया—
‘अनायास ही मेरे भाग्यने इस स्त्री-रत्नको यहाँ पहुँचा दिया । खोजने पर भी ऐसी स्त्री नहीं मिल सकती थी । ओहो मैं इसे पाकर धन्य हो गया । आज नहीं कल, कल नहीं तो परसों, किसी न किसी दिन यह अवश्य ही मेरी अनुगामिनी होकर रहेगी । अब हमारे फन्देसे यह जा भी कहाँ सकती है । स्त्रियाँ जिसके सम्पर्कमें रहती हैं, अवश्य ही उसकी हो जाती हैं । शेरेजंगने आगमकी साँस ली । वह बेहद प्रसन्न हो गया ।

योगिनने तो प्रथम अपनी विरक्ति-भावनाका प्रदर्शन किया; किंतु ज्यों-ज्यों वह शेरेजंगके निकट आने लगी, त्यों-त्यों अपना विशेष प्रभाव जमाने लगी । शेरेजंग थोड़े ही समयमें सम्पर्क बढ़ाते बढ़ाते उसके अधीन हो गया ।

संध्या समय जब शेरेजंगका दरबार समाप्त हो जाता, तब वह योगिनके निकट पहुँच जाता । योगिन उसके साथ बातें करते-करते घूमती और उसके वैभवकी ओर यत्र-तत्र दृष्टि घुमाकर अध्ययन करती । मन-ही-मन कुछ सोच-विचार कर वह रह जाती । शेरेजंगने एक दिन उसे बनाया—देखिए देवीजी ! यह सुरंग नदीके किनारे जाती है । आप इसी रास्तेसे जाकर नदीमें नहा सकती हैं; राजपुरुषोंके लिए ही यह घाट और यह राह (सुरंग) बनी है । बोलिए यह कैसा है ?

‘बहुत सुन्दर है । ठीक है । मैं इसी रास्तेसे नहान जाया करूँगी ।’

‘देखिए यह सुरंगकी सीढ़ियाँ हैं । नीचे इन्हींके द्वारा उतरा जाता है । वह देखिए सामने एक दरवाजा है, जो दुर्गमें आने-जानेके लिए बना है । सुरंगके द्वार पर एक मजबूत किवाड़ लगी है ।

‘यह तो बहुत अच्छा है । इससे तो हमारा बड़ा मनोरंजन होता रहेगा, सेनापति महोदय !’

‘यह जानकर मुझे बड़ी खुशी हुई कि यह आपको बहुत अच्छा

लगा। यहाँ आपको कोई तकलीफ तो नहीं है ? मेरी स्वाहिश है कि मैं इसका ख्याल रखा करूँ; जिससे आपको कोई तकलीफ न हो।'

'इसकी कुछ भी फिक्र न किया कीजिए सेनापति महोदय ! मुझे आपके यहाँ कोई तकलीफ नहीं है।'

अगर हो तो जरूर कह दिया कीजिए।'

'पहले कुछ हो भी तो ? यहाँ इतना अधिक मेरी खिंतमतका ख्याल रखा जाता है कि वही मेरे लिए तकलीफकी वजह हो जाता है।' कहकर योगिन मुस्करा पड़ी।

'नहीं, नहीं ! ऐसा बिलकुल न सोचें। आपके लिए जितनी भी सहूलियत दी जाय, वह थोड़ी है।' शेरजंग बोला।

लेकिन आपकी थोड़ी भी सहूलियत मैं ज्यादा समझती हूँ।'

'यही तो आपमें खूबी है। मैं आपके ऊपर क्यों मर मिटता हूँ, क्या आपको मालूम है ?'

'कहिए-कहिए; बताइए वह कौन-सी बात है, जिसके लिए आपको यह सब करना पड़ता है ?'

'वह यही बात है कि आपकी तरह कोई भी औरत इस दुनियाँमें नहीं मिल सकती। आपकी इज्जत हमें करनी चाहिए।'

'वाह ! आप तो ऐसी बातें करने लगते हैं सेनापति महोदय ! कि मैं सिकुड़कर छोटी हो जाती हूँ। यह सब सुनकर मुझे बड़ी लज्जा आ जाती है।' शेरजंगकी उन्मत्तताका उसे पूर्ण आभास होने लगा था।

'नहीं, नही देवी ! इसमें लज्जाकी बात नहीं, यह सब सच कहता हूँ, यकीन कीजिए।'

'शामको आज मैं आपको एक भजन सुनाऊँगी। आप...।'

'इसके लिए पहले ही कहना चाहता था, लेकिन हमारे कहनेके पहले ही आपने कह दिया। ठीक है मैं जरूर सुनूँगा !'



७

संध्या समय जब योगिन सरिता-तटपर पहुँची तो उसके समक्ष एक घुड़सवार उपस्थित हो गया। दोनोंमें कुछ गुप्त बातें हुईं; इसके पश्चात् घुड़सवार तत्काल घोड़ेपर आरुढ़ हो, सबकी निगाह बचाकर चला गया।

दूसरे दिन शेरजंग देवीके निकट जा पहुँचा।

आइए सेनापति महोदय !' स्वागत है।' योगिनि बोली और बैठनेके लिए वह आसन देने लगी।

'नहीं, नहीं तकलीफ न कीजिए। मैं बैठ लूँगा।'।

'तकलीफ नहीं है यह। यह तो हरएकका कर्तव्य है, सेनापति ! बोलिए क्या सेवा की जाय ?'

'इस समय भजन सुननेके लिए ही खिदमतमें हाजिर हुआ हूँ; आपने कहा भी था।'।

'कहा तो मैंने अवश्य ही था; किन्तु यह समय तो इसके लिए उप-युक्त नहीं है; इसके लिए क्षमा करें।'।

'किस वक्त यह मेहरबानी होगी ?'

'एकान्तमें लगभग दस-ग्यारह बजे रातको यह भजन-भाव जब आदमीके सोनेका समय होता है, तब अधिक जमता है।

'तब तो मुझसे भूल हुई। मैं भी तो उसी समय अच्छा समझता था, लेकिन यही सोचकर कि आपको कहीं एतराज न हो..।

'एतराज होनेकी कोई बात ही नहीं है। भजन-भाव-संगीत-साधना आदि एकान्तमें आनन्द देते हैं, और संगीत तां सबके सामने और जभी किसीने सुननेकी इच्छा प्रकट कर दी, तभी रोकने लगना, वह आनन्द नहीं देता।'।

'यही तो शेरजंग चाहता था, उसे भजन-भावसे उतना प्रेम न था, जितना उस रमणीरत्न पर वह मुग्ध था। एकान्तमें ही वह वातावरण मादक बनाकर उस रमणीसे वासना तृप्ति करना चाहता था। जबसे वह

किलेके भीतर उसके संरक्षणमें प्रविष्ट हुई, तबसे आजतक वह इसी प्रयत्नमें था भी । जब स्वेच्छासे उस नारीने एकान्तमें उसे भजन सुनाना स्वीकार कर लिया, तब क्या था ? आज निश्चय ही वह अपने परितप्त और आन्दोलित हृदयको उस नारीके द्वारा शीतल एवं शान्त करेगा । वह बोला—'ठीक है; मैं सब इन्तजाम खुद करूँगा और आज आपका भजन सुनूँगा । अच्छा अब इजाजत चाहता हूँ, आपको अब मैं यहाँ बैठकर तकलीफ नहीं देना चाहता ।'

'मुझे तो आपसे तकलीफ नहीं होती ।'

'ऐसा सोचना ही आप लोगोंका बड़प्पन है ।'

'चाहे जो भी हो सेनापति महोदय ! मैं तो जिसके ऊपर कुछ प्रेम करती हूँ, उसके लिए उठायी गयी तकलीफ़को मैं कष्ट नहीं मानती । मैं तो उसे प्रेमकी सीढ़ी समझती हूँ ।' अपने प्रति आकर्षण पैदा करते हुए वह बोली ।

'आपके विचार बहुत ऊँचे हैं । इसीलिए आपमें ये सब बातें आयी हैं और इसीलिए मैं आपकी इज्जत भी करता हूँ ।' अपना प्रभाव जमाने के लिए उसने देवीकी प्रशंसा की ।

'तो मैं आपकी इन्तजारी करूँगा ?' उठकर जाते हुए शेरजंग बोला ।

'हाँ, हाँ । बेशक इन्तजारी कीजिए । आपको बुलाना न पड़ेगा । ठीक वक्त पर मैं खुद आ जाऊँगी ।'

अपना खूब प्रभाव जमा हुआ देखकर शेरजंग बड़ा प्रसन्न होते हुए लौट गया ।

नौ-दस बजते-वजते उसने अपना कक्ष भलीभाँति सजवाया । भोजन आदिसे निवृत्त होकर वह देवीकी प्रतीक्षा करने लगा । उत्तमकोटिकी मदिरा परिचारिका लेकर उपस्थित हुई । उसने उसे अपने समीप रखवा लिया तथा उसे जानेका आदेश दे दिया ।

परिचारिका चली गयी । शेरजंग अकेले रह गया । पहले उसने

थोड़ी मदिराका सेवन किया और मादकताका अनुभव करते हुए देवीके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगा । प्रतीक्षा करते-करते साढ़े दस बज गया, किन्तु वह देवी न आई । शेरजंग उठा, कक्षके बाहर दृष्टि दौड़ाकर देखने लगा । उसे ध्यान आया अभी आध घंटा और वक्त लगेगा । पुनः कक्षमें लौट आया । थोड़ी मदिरा उसने और ली । पुनः बाहर उमकी दृष्टि दौड़ने लगी । देवीका आगमन फिर भी नहीं हो रहा था; उसकी बेचैनी बढ़ने लगी । मादकता बढ़ानेके उद्देश्यसे उसने थोड़ी मदिराका और सेवन किया । ज्यों-ज्यों उसकी मादकता बढ़ रही थी, त्यों-त्यों वह कामासक्त होता जा रहा था । उसने पुनः बाहर देखा योगिन चली आ रही थी. उसकी चालमें उसने विशेषताका अनुभव किया । उसके रूप, यौवन, मधुर मुस्कान, गति, एकान्त और पवित्रता आदिसे शेरजंग अपने आपमें नहीं रह गया, उसका हृदय कामपीड़ासे व्याकुल हो गया । अपने कक्षमें प्रवेश करते ही युवतीको आपादमस्तक उसने पुनः देखा, मदिराके नशेमें और कामोत्तेजनमें उठकर उसने योगिनका हाथ पकड़कर हृदयसे लगानेकी प्रबल इच्छासे पैर आगे बढ़ाया; किन्तु अधिक मदिरा पी लेनेसे वह बीचमें ही शिथिल होकर गिर पड़ा । पुनः उठनेकी उसने चेष्टा की, फिर भी वह निष्फल ही रह गया । उसके निकट आकर योगिन बोली—‘कहिए सेनापति महोदय !’

शेरजंगकी आँखें खुलीं, किन्तु रक्तरंजित नेत्र पुनः ढँकसे गए । वह बड़बड़ाते हुए बोला—‘आओ देवीजी; मैं तो तुम्हारी इन्तजारी कर रहा हूँ; कलेजेसे लगाकर’...

‘हाँ, हाँ मैं तो आ ही गयी । लीजिए थोड़ी शराब और मेरे कहनेसे भी ले लीजिए ।’

‘लाओ तुम्हारे कहनेसे भी पी लूँ, देखना नाराज मत होना । मैं तो तुम्हें बहुत प्यार करता हूँ ।’

‘बेशक । इसमें सन्देह कहाँ । आप पहले थोड़ी शराब तो पी लें फिर मैं तो आ ही गयी हूँ ।’

‘लाओ अब देर न करो ।’

योगिन पात्रमें उड़ेलकर शराब देने लगी । शेरजंगने कसकर उसका हाथ थामकर खींच लेना चाहता था, किन्तु उसका शरीर शिथिल था, शक्तिका लोप हो चुका था । फिर भी युवती बोली—‘लीजिए पहले यह पी तो लीजिए । मैं तो आपके पास आ ही गयी हूँ ।’

‘लाओ लाओ ।’

योगिनने मदिरासे पूर्ण पात्र उसे थमा दिया । उसे भी उसने पी लिया । उसके सभी अंग शिथिल हो गए । अर्द्धरात्रिका समय था, भयानक अन्धकार चारों ओर छाया था । सभी प्रहरी एवं कर्मचारी सुखकी नौदमें खरटि भर रहे थे । निद्रा नहीं थी, तो केवल उस योगिन की ही आँखों पर । जब योगिनने भलीभाँति शेरजंगको नशेमें अभिभूत देखा और उठने-बैठनेमें भी असमर्थ पाया; तब उसने धीरे-धीरे जाकर दुर्गके उस सुरंगद्वारको खोल दिया, जिससे बाहर एवं भीतर गमनागमन हो सकता था । बाहरी द्वारपर खड़ी हो, वह किसीकी प्रतीक्षा कर रही थी, थोड़ी देरमें निकट आकर एक व्यक्ति उसे मिला । योगिन बोली—‘कहो भद्र ! तुम्हारे सभी साथी कहाँ हैं ?’

‘मेरे साथी ?’

‘हाँ, हाँ ।’

‘वे सब यहीं पूर्व योजनानुसार दीवारके समीपवर्ती ऊपर नदी तट-पर झाड़ीमें बैठे हैं ।’

‘ठीक है । आप शीघ्र चार-पाँच आदमियोंके सहित मेरे साथ चलिए । सीटी देते ही उसके दूसरे साथी निकट आ गए । उन सभी आदमियोंको उसने आदेश देकर छिपा दिया और केवल पाँच व्यक्तियोंको साथ लेकर योगिनके पीछे-पीछे चल पड़ा । योगिन बड़ी सावधानीसे

आगे बढ़ती जा रही थी। आगे जाकर उसने उस प्रमुख द्वारको भीतरसे बन्दकर दिया; जिसके द्वारा सभी कर्मचारी एवं सम्भ्रान्त व्यक्ति शेर-जंगके दरबारमें उपस्थित होते थे। थोड़ी देरमें वह चाभियोंका एक गुच्छा निकालकर एक दूसरे दरवाजेके समक्ष पहुँची। द्वार उसने खोलकर देखा; सामने एक तहखाना, जिसके अन्दर दो बन्दी पड़े हैं। अर्द्ध-निशामें एक अनजान स्त्रीके साथ पाँच छः अपरिचित व्यक्तियोंको देखकर बन्दियोंकी चेतनता लुप्तप्राय हो गयी। वे थर-थर काँपने लगे। उनके प्राण जैसे नहींमें समा गए। अत्यन्त दीन वाणीमें वे बोलना चाहते थे, किन्तु बोल न पाए। आज्ञा दी गयी—स्तब्धता की। वे मौन हो गए। केवल दृष्टि फैलाकर वे देख रहे थे। पुनः आदेश हुआ—‘आश्चर्यमें न पड़ें महाराज ! आपको बन्धनमुक्त किया जा रहा है; अतः मोनावलम्बनपूर्वक जो आपसे कहा जाय वह करते चलिए।’

महाराज एवं महारानीके आश्चर्य एवं हर्षका ठिकाना न था। आश्चर्य इस बातका था कि बन्धनमुक्त करनेके लिए प्रयत्नशील व्यक्ति सबके सब अपरिचित हैं। महाराज एवं महारानीका उनसे कोई सम्बन्ध नहीं। अकारण कृपा करनेवाले ये सब लोग आखिर हैं कौन ?

वे बोले—‘अचानक अहैतुकी कृपा करनेवाले आप सभी अपरिचित सम्भ्रान्त व्यक्तियोंको मैं पहचान नहीं पा रहा हूँ भद्र !’

‘महाराज ! कौतूहल शान्त करें। समय पर आपको स्वतः परिचय मिल जायगा। इस समय आपसे जो प्रार्थना की जाय केवल उसी पर ध्यान दें। अधिक वातर्का समय नहीं है। इसके लिए क्षमा करें देव !’ उत्तर मिला।

उन सभी व्यक्तियोंके साथ बन्धनमुक्त हो महाराज रूपनगर महारानी के साथ हो लिए। थोड़ी दूर जाकर योगिनि खड़ी हो गयी। कान पार-पारकर वह अकनने लगी—‘इन सभी क्रिया-कलापोंसे कोई अवगत तो नहीं हो रहा है।’ जब उन सभी लोगोंको विश्वास हो गया कि इस समय

दुर्गमें कोई भी जग नहीं रहा है, तब वे सब आगे बढ़े। दुर्गमें चतुर्दिक स्तब्धता छायी थी। योगिन बोली—‘तहखानेकी कुण्डी मैं खोल रही हूँ, आप सब सावधान हो जायें। आपका प्रबल शत्रु शेरजंग इस पिंजड़ेमें बन्द है। यद्यपि अत्यधिक मात्रामें मदिराका सेवनकर वह चेतनावस्थामें नहीं है, किन्तु फिर भी आगेका कार्यक्रम आप लोगोंको अत्यन्त शीघ्रता एवं सावधानीसे सम्पन्न करना है। यदि इसकी उपेक्षा की गयी, तो निश्चय ही हम लोगोंके लिए प्राण-संकट उपस्थित है।’

‘ठीक है देवि ! हम सभी लोग सतर्क हैं, तुम कुण्डी खोलो।’

योगिनिने कुण्डी खोल दिया; सब लोग भीतर प्रविष्ट होकर देखने लगे—कक्षके मन्द प्रकाशमें एक गद्देपर मसनदके सहारे शेरजंग निद्रा-मग्न है। उसके मुँहसे मदिराकी तीव्रगन्ध निकल रही है। सभी लोगोंके पहुँचनेपर उसकी निद्रा भंग हुई। आँखें फाड़-फाड़ कर वह देखने लगा। उसकी समझमें कुछ भी नहीं आ रहा था। सभी अपरिचित व्यक्ति उसके समक्ष खड़े हैं, वह परिस्थिति समझनेके उद्देश्यसे प्रयत्न करने लगा। देखते-ही-देखते उसने तत्काल अपनी ओर एक महाबलवान् व्यक्तिको उपस्थित पाया। उस व्यक्तिने शेरजंगके निकट पहुँचकर बड़ी सावधानी और दृढ़तासे उसके मुँहको दाब दिया। शेरजंगका शरीर यों ही शिथिल था, दूसरे दृढ़तापूर्वक उसका मुख दाबा भी गया था, अतः न तो वह कुछ बोल सका और न शत्रुका हाथ ही हटा सका। अन्य साथी तत्काल शेरजंगका हाथ-पैर थामकर मुश्किलसे कस दिए। दूसरे आदमीने शेरजंगके मुँहमें कपड़े ठूसकर और कसकर पट्टी बाँध दी।

शेरजंगको बोलने एवं हिलने-डुलनेमें असमर्थकर उन वीरोंने उसे उठा लिया। एकने दीपकका मन्द प्रकाश बुझा दिया। धीरे-धीरे उस गहन अन्धकारमें टटोल-टटोलकर अत्यन्त सावधानीसे सब लोग दुर्गके बाहर जाने लगे। योगिनि एवं उन वीरोंका अग्रणी महाराज रूपनगर एवं उनकी महारानीको सँभालकर ले जा रहा था। शेष सभी लोग

शेरेजंगको लिए जा रहे थे । दुर्गके बाहर होते ही सब लोगोंको सतर्क करनेके उद्देश्यसे एक सीटी बजी । वहाँ सभी सैनिक एकत्र हो गए ।

महाराज रूपनगर एवं उनकी महारानीका संरक्षण करते हुए बन्दीको साथ लेकर वे सबके सब योद्धा जिस मार्गसे आए थे, उसी मार्गसे लौट पड़े । तीन-चार मीलकी यात्रा समाप्तकर जब वे सब अपने कार्यमें सफल हो जानेका और आगे निरापद हो जानेका अनुभव करने लगे; तब उन सबका नायक महाराज रूपनगरके समक्ष खड़ा होकर बोला—‘राजन् ! पैदल यात्रामें आपको एवं महारानीजीको महान् कष्ट होगा; अतः यही थोड़ी ही देरमें आपके समक्ष घोड़े उपस्थित हो रहे हैं, उसी पर महारानीजीके साथ आप सवार हो लें । पहलेसे ही घोड़े यहाँ प्रतीक्षामें खड़े हैं ।’

महाराज अबतक चुपचाप वहाँ खड़े थे । उनकी उत्कण्ठा ज्यों-की-त्यों बनी ही रह गयी थी—कि बन्धन-मुक्त करनेवाले ये लोग आखिर हैं कौन ? किन्तु उन्हें इस सम्बन्धमें कुछ भी पूछनेका साहस न हुआ । घोड़े आए । एक घोड़ेपर महाराज अपनी महारानीके साथ सवार हो गए । एक घोड़े पर उनका नेता और दूसरे पर वह योगिनि-वेशधारी तरुणी सवार हो गयी । अन्तिम बचे हुए घोड़े पर शेरेजंगको लादा गया । वे सब आगे बढ़े । मार्गमें ही उन्हें वाहनों सहित बूंदी-नरेश आते हुए मिले । नेताने उनका सम्मान करते हुए बड़ी भक्ति-भावनासे उन्हें अभिवादन किया । बूंदी-नरेशने उस व्यक्तिको हृदयसे लगाकर उसकी बड़ी प्रशंसा की । वे सब आगे बढ़े । कुछ समयके पश्चात् वे इन्द्रगढ़ जा पहुँचे ।

प्रातःकाल दूसरे दिन बूंदी-नरेश महाराज छत्रसालने एक विराट सभाका आयोजन किया । समयपर सभी लोग उपस्थित हुए । महाराज छत्रसालने रूपनगर-नरेशको महारानीके साथ सभामें उच्च आसनपर बैठा कर उन्हें सम्मान प्रदर्शित किया । सभाकी कार्यवाही प्रारम्भ की गयी ।

बन्दी शेरजंग उपस्थित किया गया । उसे अभियोग पत्र पढ़कर सुनाया गया । मदिराकी नशा उसकी दूर हो चुकी थी, उसे वह किस अवस्थामें पहुँच चुका है, ज्ञान हो गया था । पूछे जाने पर उसने अपराध स्वीकार किया । अपने वक्तव्यमें उसने निवेदन किया—‘महाराज ! मैं मानपुर-का बासिन्दा मुन्नामेव डाकू हूँ । धीरे-धीरे बढ़ते हुए मैं एक दलपति हो गया हूँ । मैं पहाड़ोंमें रहकर बड़े-बड़े कारवाँ और रईसोंको लूटा करता हूँ । मेरे ऊपर मुगल सूबेदार कासिमखाँकी बड़ी किरपा रहती है । इसी वजहसे मैं अलीगढ़का दुर्गपति हूँ । मैंने जो कुछ महाराज और महारानी के साथ जुल्म किया है, वह सब उन्हीं सूबेदारके हुक्मसे किया है । राजकुमारियोंको फिरोतीके रूपमें लेनेकी धमकी उन्हींके हुक्मकी पाबन्दी समझिए ।’

सब लोग चुप हो गए । सूबेदारके प्रति सभी उपस्थित व्यक्तियोंने रोष प्रकट किया ।

‘इस कार्यमें तुम्हें किस प्रकार सफलता प्राप्त हुई वरांगने !’ पूछा महाराज छत्रसालने योगिनसे ।

‘महाराज ! मैं श्रीमान् मौकमसिंहजीके आग्रह पर योगिनके छत्र-वेशमें शेरजंगके दुर्गमें गयी । हस्तसामुद्रिकसे लोगोंके जीवनफलका कथन कर मैंने वहाँ सबको प्रभावित किया । शेरजंग तो मेरे रूपपर ही आसक्त हो गया था । यह बहुत प्रयत्न करके मुझे अपने वशमें करना चाहता था, किन्तु मैं इसके किसी भी प्रलोभनमें न फँसी । अपने कार्यका उत्तर-दायित्व समझकर मुझे तो महाराज रूपनगर और महारानीजीको बन्धनसे मुक्त कराना था और साथ ही उदएड शेरजंगको बंदी बनाना था ! अतः आपकी कृपासे मैं कृतकार्य हुई ।’ बड़े विनीत भावसे महाराज छत्रसालको सम्मान प्रदर्शित करते हुए बूँदीकी प्रसिद्ध वारवनिता-ने निवेदन किया ।’

‘मैं तुम्हारी बुद्धिसे बड़ा प्रभावित हूँ; अतः जो पुरस्कार तुम्हें दिया जानेवाला था, उसके अतिरिक्त तुम्हारी जो इच्छा हो उसे भी माँग सकती हो ।’

‘महाराज ! पुरस्कारके अतिरिक्त मैं आपकी कृपा चाहती हूँ ।’

‘वह तो रहेगी ही, तुम्हें और भी कुछ माँगना चाहिए ।’

‘यदि यही महाराजकी इच्छा है, तो आप अपनी ही इच्छासे जो कुछ प्रदान करेंगे; उसे मैं शिरोधार्य करूँगी ।’

‘ठीक है । तुम्हें राज्यकी ओरसे कुछ विशिष्ट पुरस्कार दिया जायगा ।’

‘जो महाराजकी इच्छा !’

इसके पश्चात् सभाकी कार्यवाही समाप्त हुई । वरांगना चमेली जिसने योगिनि बनकर सब कार्य सम्पन्न किया था, राज्यसे पुरस्कृत हो संतुष्ट हुई और महाराजको अभिवादन कर चली गयी ।



‘हुजूर ! दरवाजेपर एक घुड़सवार खड़ा है ।’ प्रहरीने अजमेरके मुगल सूबेदार कासिमखाँसे सिर झुकाकर निवेदन किया ।

‘हाजिर करो उसे ।’ तीव्र स्वरमें कासिमखाँ बोला ।

प्रहरी द्वारपर चला गया । अश्वारोही नौजवानको साथ लेकर वह कासिमखाँके सभा-कक्षमें प्रविष्ट हुआ । आगंतुकने बड़े विनीत भावसे कासिमखाँको सम्मान प्रदर्शित करते हुए अभिवादन किया ।

कासिमखाँने आगंतुक नवजवानकी ओर आपादमस्तक दृष्टि डालकर पूछा—‘हाँ बेटा बुन्दामेव ! खैरियत तो है ? कैसे आना हुआ ?’

‘हुजूर ! आपने महाराज रूपनगरको बन्दी बनानेका जो हुक्म दिया

था, उसे मेरे वालिदने पूरा तो कर लिया था, मगर एक चालाक औरत ने आकर उनको रिहा कर दिया ।'

'क्या कहा रिहा कर दिया ? और एक औरतने ?'

'रिहा ही नहीं हुआ ! मेरे वालिदको भी वह बन्दी बनाकर लेगयी ।'

'लाहौलविलाकूवत ! क्या कहा ? शेरेजंगको भी बन्दी बना लेगयी ?'

'हाँ हुआ ।'

'कहाँ ले गयी ?'

'बूँदी, हुआ !'

'और तुम लोगोंने कुछ नहीं किया ?'

'इसकी खबर हम लोगोंको नहीं थी हुआ ! बादमें खुफिया पता चला कि रूपनगरके महाराजको वह जेलसे निकाल ले गयी और हमारे वालिदको भी बन्दी बनवाकर ले गयी । इस वक्त हमारे वालिद बूँदी-नरेश छत्रसालके यहाँ बन्दी हैं ।'

सूबेदार कासिमखाँ तिरछी दृष्टिसे शेरेजंगके पुत्र बुन्दामेवकी बातें बड़े ध्यानसे सुन रहा था । सारी घटना सुनकर वह चकित हो उठा ।

'ठीक है । बेटा ! मैं देखूँगा घबरानेकी बात नहीं ।'

बुन्दामेव चुप हो गया । थोड़ी देरके लिए सभामें स्तब्धता छा गयी । सूबेदार कासिमखाँने थोड़ी देरमें सभामें बैठे सरदार मरदानखाँ, दरियाखाँ और अपने पुत्र सहादतखाँकी ओर क्रमशः दृष्टिपात किया और फिर कहा—'बुन्दा बेटा ! मैं तुम्हें अपने दिलके टुकड़े सहादतसे भी अधिक प्यार करता हूँ । हम शाहंशाह आलमके बिना हुक्मके सारी फौज सजाकर अपने दोस्त शेरेजंगको छुड़ानेके वास्ते चलेंगे । हालाँकि भारी बहादुर और नामवर दुश्मनसे मुकाबला करना पड़ेगा ; लेकिन कोई परवाह नहीं ।'

'हुजूर ! हम लोगोंको तो सिर्फ आपका ही आसरा है । हम सब इस एहसानके उम्रभर शुक्रगुजार रहेंगे ।' झुककर निवेदन किया बुन्दामेवने ।

‘जाओ; अपनी जो कुछ भी फौज हो साथ लेकर चले आओ ।’
बुन्दामेवको सम्बोधितकर कासिमखाने कहा ।

‘जो हुकम हुआ !’

बुन्दामेव कासिमखानेको अभिवादन कर अपने दुर्गपर वापस चला गया । थोड़े ही समयमें जो सैनिक उसके पास थे, उनमेंसे कुछको किले-की रखवालीके लिए छोड़कर शेष सभीको साथ लिए कासिमखानेके पास पहुँचा ।

दूसरे दिन कासिमखानेके नेतृत्वमें एक विशाल रणवाहिनी बूँदी-राज्यके भीतर प्रवेश करती हुई, मण्डलगढ़को पीछे छोड़ती देवलीसे लगी हुई, उस पर्वत शृंखलापर जा पहुँची, जिसे बूँदी-राज्यका मेरुदण्ड कहा जा सकता है । पर्वतकी तलहटीमें एक छोटेसे मैदानमें सुविधाके विचारसे उस सेनाने पड़ाव डाल दिया । घोड़े, ऊँट एवं हाथी खोल दिए गए । सैनिक अपने भोजन तैयार करनेमें व्यस्त हो गए । इन सभी लोगोंने तम्बू तान दिया । सभी सैनिक आरामसे स्थिर हो गए । सभी तम्बूओंके मध्य एक विशाल परगडाल बनाया गया, जो विशेष साज सज्जासे आकर्षक था । एक विशेष उत्तम पलंग पर बैठा सूबेदार कासिमखाने अपने सरदारोंके मध्य शोभा पा रहा था । उसने सरदारोंसे कहा—‘क्यों आप लोगोंको यदि जंचे तो यहीसे धीरे-धीरे छिटफुट दुश्मनपर हमले किए जायें; क्योंकि यही एक ऐसी जगह है, जहाँ सिपाहियोंको बहुत आराम मिल सकता है ।’

‘हुजूरका क्याल बहुत दुरुस्त है । यहाँसे लड़ना बड़ा फायदेमन्द होगा ।’ दरियाखाने निवेदन किया ।

‘कल ही चौथाई फौज साथ लेकर मरदानखाने दुश्मनकी रियायामें घुसकर लड़ाईके लिए चला जाय और दरियाखाने पूरबसे ! बुन्दाके साथ हम खुद यहाँसे ही सब कारंवाही शुरू कर देंगे । क्यों ठीक है न ?’

‘हुज़ूरका ख्याल बिल्कुल ठीक हैं। हुज़ूरकी तरकीब बड़ी फायदेमंद जान पड़ती है।’ मरदानख़ाने निवेदन किया।

‘देखो; यह कैसी आवाज आ रही है? कोई चिल्ला रहा है। यह कहाँसे आवाज आ रही है?’

सब लोग स्तब्ध हो गए अन्धकार चीरती हुई, आगत ध्वनिकी ओर सबके कान चले गए। दूसरी बार पुनः ध्वनि हुई।

‘यह किसी औरतकी आवाज है हुज़ूर?’ दरियाख़ाने निवेदन किया।

‘हाँ हुज़ूर! हमें भी यही जान पड़ता है।’ मरदानख़ाने बोला।

‘फौरनसे पेश्तर एक हजार सिपाहियोंको साथ लेकर उस औरत का पता लगाओ और मुमकिन हो, तो जालिम व मजलूम दोनों फरीकों को पकड़कर हाजिर करो। जल्दी जाओ, दरियाख़ाने! अब कुछ भी देर करनेकी जरूरत और इजाजत नहीं।’

दरियाख़ानेका मन बड़ा दुःखी हुआ, वह अभी तक यात्राकी थकान मिटा भी न पाया था कि उसे अकारण ही एक बखेड़ेका सामना करनेके लिए हुक्म हुआ। एक उच्च अफसरका हुक्म? उसे टाला कैसे जाय?

शस्त्रसज्ज एक सहस्र सैनिकोंको साथ लेकर दरियाख़ाने घटनास्थल की ओर वेगसे चल पड़ा। जंगलमें चतुर्दिक भयंकर अन्धकार, गाढ़ी नीरवता, दुराधर्ष मार्ग और दुर्विज्ञेय स्थान! सब प्रकारसे प्राणोंकी बाजी; किंतु साहसी दरियाख़ाने उस चीत्कारको लक्ष्य बनाकर अग्रसर होता जा रहा था। सामने एक खाई पड़ी। उस गहरी एवं भयानक खाईको बड़ी कठिनाईसे उन लोगोंने पार की। वहाँसे थोड़ी ही दूर आगे कुछ लोगोंके लड़ने-भगड़नेकी ध्वनि आ गयी थी; दरियाख़ाने सैनिकोंके साथ आगे बढ़ा। अपनी ओर आकृष्ट करती हुई, वह ध्वनि भी आगे बढ़ती जा रही थी। धीरे-धीरे पता लगाते हुए सैनिकदल घटनास्थलपर पहुँचा। वहाँ उसे एक स्त्री पेड़में बँधी रक्तसे रंजित मिली। उसकी आवाजके सहारे दरियाख़ाने उस वृक्षके निकट पहुँचा। उस स्त्रीका उसे पता लगा; उसने पूछा—‘ओ औरत तू कौन है?’

और किसने तुम्हारी यह हालत कर दी है ? बता, मैं उसे दण्ड दूँगा । मैं सूबेदार कासिमखाँका सिपाही हूँ । डर मत ।' धीरे-धीरे दरियाखाँने उसका बन्धन खोल दिया ।

स्त्री बोली—'मैं आगरेकी बासिन्दा अजीजन नामसे मशहूर तहव्वरखाँकी बेगम हूँ । सूबेदार कासिमखाँकी बीबी हमीदा बेगम, सरदार दरियाखाँकी बीबी मुश्तरी बेगम और मरदानखाँकी बीबी जमीला बेगम, मुमताजकी खास कनीजा मुरादनके साथ अजमेर शरीफ जा रही थी । हमारे काफिलेको राजपूतोंने गिरफ्तारकर बेइज्जत करने के लिए महबूर किया । हम लोगोंके मना करने पर वे सब लोगोंको मार-पीटकर राजी करने लगे । जब उसके फन्देमें हमलोग न आईं, तब सबको कैद कर वे लोग यहाँसे एक मील दूर एक मकानमें बन्द कर दिए हैं । मैं वहाँसे निकलकर भाग रही थी, पता लगनेपर राजपूतोंने मेरा पीछा किया और यहाँ पकड़कर मुझे मार-मारकर पूछने लगे—'तुम कैद की गयी शाही औरतोंमेंसे तो नहीं हो ? इसके बाद आप-लोगोंके आनेका आहट पाकर हमें इस पेड़में बाँधकर भाग खड़े हुए ।'

अजीजनकी बातें सुनकर विशेषकर अपनी और सूबेदार कासिमखाँकी पत्नीकी दुर्गति सुनकर दरियाखाँ क्रोधकी ज्वालासे उत्तप्त हो उठा । उसकी सारी थकावट दूर हो गयी । वह उत्तेजनामें आ गया । उसने पूछा—'जिस जगह तुम्हारे साथ आनेवाली बेगमोंको कैद किया गया है, वह कोई मकान है अथवा किला ? उसमें कितने आदमी हिफाजतके लिए रखे गए हैं ।

'वह एक मामूली मकान है, जो पहाड़की घाटीमें एक घने जंगलके अन्दर बना है । इसके आस-पास दो तीन मील तक कोई बस्ती नहीं है । अन्दाजिया पचास-साठ आदमी उसकी हिफाजतमें तैनात होंगे । अगर आज ही ये कैदी छुड़ाए न गए, तो उन्हें शायद कल तक दूसरी जगह भेज दिया जायगा ।'

बात-चीतमें दरियाखाँ बहुत समय गँवाना नहीं चाहता था । उसे शीघ्रसे शीघ्र अपनी स्त्रीका उद्धार करना था ; अतः बोला—‘सुनिए बेगम साहिबा ! चलकर मुझे उस स्थानको जल्दी ही दिखाइए । उन सबोंको छुड़ाकर कैद करनेवालोंको पूरी सजा देना जरूरी है । देर मत करें !’

‘बात तो सब ठीक है भाई ! मगर हमारी जुरंत नहीं पड़ती कि उधर जाऊँ । हमारा तो कलेष्वा घड़कने लगता है !’

‘मेरे साथ चलनेपर भी आप डर रही हैं ? अब आपको किस बात-का डर है ? वहीं चलकर हमारे बाजुओंकी कृपत देखिएगा । दुश्मनको किस तरह मटियामेट किया जाता है । बस देर है, तो मेरे साथ वहाँ सिर्फ पहुँचनेकी ।’

अजीजन दरियाखाँ और उसकी सेनाके साथ जानेके लिए तत्पर हो गयी । आगे-आगे वह चलने लगी, उसके पीछे-पीछे सैनिक । थोड़ी देरमें उन सबके साथ अजीजन एक पहाड़ी टीलेपर स्थित लगभग सौ-बेड़ सौ फुट ऊँचे चौरस मैदानमें पहुँची । वहाँ उसने सामनेकी ओर एक छोटी-सी कोठरी दिखायी, जो पर्वतकी एक गुफासे मिली थी । वहीं बगलमें खड़ी होकर अजीजन बोली—‘देखो भाई ! इसी कोठरीमें वे सब कैद हैं ।’

अजीजनकी बात पूरी भी न हो पायी थी, कि एक सीटी बजी जिसके अनुसार वह अजीजनको लेकर धरतीमें नीचे खींच ले गयी । वहाँ एक कुएँकी आकृति बन गयी और थोड़ी ही देरमें वहाँ देखते ही देखते कुएँसे फिर एक खासा चबूतरा बन गया । फिर सीटी बजी । सहसा इस बार सीटी बजते ही अग्निकी भयंकर ज्वाला उत्पन्न हो गयी । उसमें जल-जलकर सैनिक मरने लगे । प्राण बचानेके उद्देश्यसे भागनेवाले सैनिक इधर-उधर उछल-कूद करने लगे ; किंतु परिणाम कुछ भी न निकला चारों ओरसे मार्ग बंद था । ऊपरसे ईंट, पत्थर और बालूकी वर्षासे यवन सैनिकोंका भीषण संहार होने लगा । देखते ही

देखते बिना पराक्रम-प्रदर्शनके ही राजपूतोंने मुगल सेनाकी एक बड़ी टुकड़ीको नष्ट कर दिया ।

‘दरियाखाँको गए काफी समय बीत गया । न तो वह खुद लौटा और न उस औरतका पता चला । उसके आनेमें आखिर इतनी देर क्यों ? मरदानखाँ ! बात क्या है ?’ सूबेदार बोला ।

‘कुछ समझमें नहीं आता हुजूर ! जितनी देर वह कर रहा है, इतनी देरका वहाँ काम ही क्या था ? मैं खुद हेंरान हूँ हुजूर ! क्या जवाब दूँ ?’

थोड़ी देरमें एक प्रहरी आकर बोला—‘हुजूर गजब हो गया ।’

‘खैरियत तो है ?’ बरबस कासिमखाँके मुँहसे निकल पड़ा और पुनः प्रहरीकी ओर उत्सुकतासे वह देखने लगा ।

‘नहीं हुजूर ! खैरियत नहीं है । भारी गजब हो गया !’

‘साफ़-साफ़ बता कम्बख्त ! गजब-गजब चिल्ला रहा है, कैसा गजब साफ़-साफ़ बता ।’ तीव्र स्वरमें डाटकर कासिमखाँने पूछा ।

प्रहरी भयभीत हो गया । दबे स्वरमें उसने निवेदन किया — सरकार ! सरदार दरियाखाँ‘‘‘‘‘!’

‘हाँ, हाँ बोलता क्यों नहीं; आगे कहो, दरियाखाँने कुछ कहला भेजा है ?’ उतावलीमें कासिमखाँने ही प्रहरीका वाक्य पूरा कर दिया ।

‘नहीं सरकार ।’

‘तब क्या कहना चाहते हो ? कहो क्या हुआ दरियाखाँका ?’

‘हुजूर ! दुश्मनोंके हाथ पड़कर सारी फौजके साथ दरियाखाँ मार डाले गए ।’

सूबेदार कासिमखाँपर वज्रपात हो गया । वह अवाक् हो उठा । उसका रणोत्साह भंग हो गया । ‘शत्रुओंने एक भी सैनिकको जिन्दा नहीं छोड़ा । इतनी जल्दी सबके सब सैनिक, सेनापति मार डाले गए ! गजब हो गया । मुझसे तो कुछ भी नहीं कहते वन रहा है ।’ लेटे ही लेटे

कासिमखाँ शोकग्रस्त अवस्थामें पड़ा अत्यन्त शिथिल हो गया ।

सहादतखाँ पिताकी दयनीय दशा देखकर बोला—‘अब्बाजान ! इस वक्त अगर दुश्मनोंने धोखा देकर हमें नुकसान पहुँचाया है, तो इसके लिए अफसोस करनेकी कोई जरूरत नहीं । मुझे और बन्दाको दुकम दीजिए, एक बड़ी सेना लेकर हमलोग राजपूतोंसे खुद लड़ेंगे ।’

‘मगर बेटा ! तुमलोग अभी छोटे लड़के हो, राजपूतोंके सामने सिर्फ बहादुरी दिखानेसे ही काम नहीं चल सकता । वहाँ तो पहले होशियारी की जरूरत है; बहादुरीकी बादमें । इसी वजहसे मेरा दिल गवाही नहीं दे रहा है कि तुमलोगोंको राजपूतोंसे लड़नेके लिए भेजूँ ।’

‘इसके लिए डरनेकी जरूरत नहीं अब्बाजान ! मैं एक बार राज-पूतोंसे लड़नेका हौसला मनमें रखता हूँ ।’

‘हुजूरका हुक्म हो, तो मैं भी इनकी मददके वास्ते जा सकता हूँ, मेरे रहते हुए कोई राजपूत किसी तरह इनका बाल बाँका नहीं कर सकता । लड़कोंका दिल तोड़ना नहीं चाहिए सरकार ! जंगमें बहादुरी दिखानेका मौका मिलता है ।’ मरदानखाँने कहा ।

‘हाँ; तुम्हारे साथ जानेमे मुझे कोई एतराज नहीं । मगर जंगमें इनकी हिफाजत करते रहना ।’

‘हुजूर ! आप बेफिक्र रहें । मैं जंगमें इनकी काफी हिफाजत रखूँगा ।’

मरदानखाँके आश्वासनपर कासिमखाँको धैर्य हुआ । वह उन दोनों नवयुवकोंको युद्धमें भेजनेके लिए तैयार हो गया । हाथी-घोड़े सजाए जाने लगे । लगभग पाँच सहस्र योद्धाओंकी प्रबल चतुरंगिनी सेनाके साथ सहादतखाँ, बुन्दामेव तथा मरदानखाँ रणभेरी बजवाते सरिताके किनारे-किनारे पूर्वसे बूँदीपर आक्रमणके लिए आगे बढ़ा । दिनभर दुर्गम मार्ग पारकर गोलाकार बहती हुई, बनास नदीके तटपर वे सब पुनः आ पहुँचे । सन्ध्याके समय सारी सेनाके साथ वे सब एक ऐसे स्थानपर आ पहुँचे, जहाँसे बूँदीकी ओर जानेका एक मात्र मार्ग नदीके भीतरसे ही

है। नदीके दोनों तटपर बड़ी ऊँची पहाड़ियाँ हैं। जब उन लोगोंको बूँदी जानेका और कोई मार्ग नहीं दिखायी पड़ा, तब नदीके भीतर ही प्रविष्ट होकर वे सब आगे बढ़े। थोड़ी दूर जानेपर सैनिकोंको दिखायी पड़ा कि नदीके दोनों तटों पर बहुत ऊँचे-ऊँचे पहाड़ खड़े हैं। नदीकी चौड़ाई इस स्थानपर अत्यन्त कम हो गयी है। पंक्तिवद्ध हो जानेपर इस मार्गसे दस-पन्द्रह व्यक्तियोंके ही जानेमें सुविधा हो सकती थी। इसी स्थलपर मार्गविरोधके लिए नदीमें एक ऊँची दीवाल खड़ी कर दी गयी थी। इस प्रकार मार्गकी रुकावट देखकर सहादतखाने अपने साथियोंके परामर्शसे उस दीवालको ही तोड़वा देना अच्छा समझा।

आज्ञा प्राप्त होते ही सैनिकगण उस दीवालको विध्वस्त करनेके लिए तत्पर हो गए। देखते-देखते नदीका जल बढ़ चला और धीरे-धीरे पानी इतना अधिक बढ़ गया कि महादतखानेकी फौज उस जलमें डूबने लगी। जो लोग तैरना जानते थे, वे तो अपना प्राण बचाने लगे। शेष उस सरिताकी तीव्र धारामें डूबने-मरने लगे। जो लोग वच भी गए थे, उन्हें भी राजपूतों द्वारा प्रहार किए गए ईंट, पत्थर एवं तीरकी वर्षा से मृत्युके मुखमें प्रवेश करनेके लिए बाध्य होना पड़ा। रात्रिका समय था। घोर अन्धकार। शत्रुओंका पता पाना कि वे कितनी संख्यामें हैं और कहाँ हैं, कठिन हो गया। इतना भयानक युद्ध वहाँ प्रारम्भ हो गया कि शत्रुओं का संहार राजपूतों द्वारा महाप्रलयके समान होने लगा। इस युद्धमें अनेक वीरोंके साथ मुन्दामेव भी वीरगतिको प्राप्त हुआ। मरदानखाने एवं सहादतखाने भी घायल हो गए। वे राजपूतोंके समक्ष आत्मसमर्पण करना चाहते थे कि दोनों वन्दी बना लिए गए। थोड़े सैनिकोंको आदेश हुआ कि अपनी घोर पराजयका समाचार सूबेदार कासिमखानेको जाकर दे दो।

दूसरे दिन कासिमखाने सबेरे उठकर शौच आदिसे निवृत्त हो और नहा-धोकर जा बैठा। उसी समय उसके एक सरदारने एक ज्योतिषीको उसके समक्ष उपस्थित किया और कहा—‘हज़ूर! इनकी सबसे बड़ी खूबी

है --आगे होनेवाली सभी बातोंकी जानकारी रखना ।' कासिमखाँ बड़ा उत्सुक हुआ । उसकी इच्छा हुई, अपने पुत्रके युद्धके सम्बन्धमें ज्योतिषीसे पूछे ।

‘हुज़ूर कल आपकी बहुत बड़ी जीत होगी । फिक्र न करें ।’

कासिमखाँ यह सब सुनकर बड़ा प्रसन्न हुआ । ज्योतिषीको पुरस्कृत कर उसने विदा किया ।

थोड़ी देरमें एक प्रहरी सूबेदारके समक्ष खड़ा हुआ और बोला— ‘हुज़ूर ! आपकी सेना राजपूतोंसे फिर हार गयी । बहुतसे सिपाही मारे गए, बहुतसे घायल हो गए । जो बचे, वे सब मरदारखाँ और सहादत-खाँके साथ राजपूतों द्वारा बन्दी बना लिए गए । इस लड़ाईमें बुन्दामेव भी मारा गया ।’

पुत्रका शत्रुओं द्वारा बन्दी बनाया जाना सुनकर सूबेदार कासिमखाँ पागल हो उठा । बुन्दामेवका मारा जाना उसके लिए बड़ा कष्टदायी हुआ । दूसरे योद्धाओंको युद्धके लिए उसने प्रेरित किया । उत्तेजित होकर वह बोला— ‘आज ही दस हजार सैनिकोंके साथ बूँदीपर चढ़ाई करनी चाहिए । इसी वक्त सारी फौज तुरन्त लड़ाईके लिए तैयार हो । अब बिना अपना बहादुरीका हुनर दिखाए काम नहीं चल सकता ।’

आदेश पाते ही फौज तैयार हो गयी । एक विशाल हाथीपर सूबेदार कासिमखाँ खुद चढ़कर युद्धके लिए चतुरंगिनी सनाके साथ बूँदीकी ओर चल पड़ा । वह रणोत्साहसे प्रबल हो बूँदीकी ओर तीव्रतासे आगे बढ़ रहा था । मार्ग अत्यंत संकुचित और दुर्गम । आस-पासकी धरती जन-रवसे शून्य दिखाई पड़ी । कासिमखाँने अनुभव किया—‘हमारे डरसे यहाँकी रियाया भाग गयी है । थोड़ा और आगे बढ़नेपर उसे एक मुसल-मान फकीर मिला, वह चौराहेपर पड़ा सुस्ता रहा था, जो भूख और प्याससे व्याकुल था । कासिमखाँने उसे अपने पास बुलवाया और पूछा— ‘आप कहाँके रहनेवाले हैं और किसलिए पड़े हैं ?’

‘हुजूर मैं अजमेरका वासिन्दा हूँ और बूँदी जा रहा हूँ, चलते-चलते थक गया हूँ। भूख और प्याससे घबरा गया हूँ। अगर आपके पास कुछ खाने-पीनेका सामान हो तो जरूर दिला दें।’ बड़ी दीनतासे फकीर बोला।

‘ठीक है; तुम्हें हम खाना देंगे। हमारे साथ तुम बूँदी भी चले चलना। हमलोगोंको इस चोराहेसे पता नहीं लग रहा है कि बूँदीका रास्ता कौन-सा है?’

‘मरकारकी जो मरजी। मुझे हुजूरके साथ चलनेमें कोई एतराज नहीं है। मुझे बूँदीका रास्ता मालूम है, फिक्र न करें सरकार!’

‘ठीक है, हम तुम्हें एक घोड़ा दे देंगे; उसके ऊपर सवार होकर सेनाके आगे-आगे तुम्हें चलना होगा।’

खा-पीकर फकीर घोड़े पर चढ़कर सेनाके आगे-आगे चलने लगा। सारी फौजको पहाड़ीपर चढ़ना पड़ा। आगे दो पहाड़ियोंको मिलाने-वाला एक छोटा पुल पड़ा, जो एक मील गहरी खाईके ऊपर बना था, उसे पारकर सेना आगे बढ़ नीचे उतरने लगी। यह मार्ग बड़ाही संकीर्ण था। केवल दस-बारह व्यक्तिही पंक्ति बाँधकर इसपरसे चल सकते थे। थोड़ी दूर तक आगे जाकर यह मार्ग एक ऐसी गहरी खाईमें परिसमाप्त हो जाता है, जहाँपर सारी पहाड़ीका जल वर्षा कालमें एकत्र होता रहता है। चतुर्दिक इस भीलके ऊँची-ऊँची पहाड़ियाँ हैं। जिस खाईपर पुल निर्मित है, वह भी इस भीलसे संबंधित है। रणोन्मत्त कासिमखाँकी सेना मार्ग दर्शक फकीरकी सहायतासे बड़ी सरलतासे इस भीलके निकट पहुँच गयी। वहाँ पहुँचकर फकीर पानीकी ओर पहुँचनेके प्रथमही शुष्क खाईमें कूदकर जंगलमें ओझल होगया। सेनाके आगे-आगे चलनेवाला हाथियोंका दल भीलके किनारे अंधकारके कारण दलदलमें जा फँसा। इसमें कासिमखाँ का हाथी भी था। इनके पीछे घोड़े थे और घोड़ोंके पीछे सामान लादे हुए छकड़े। छकड़े और दलदलमें फँसे हाथियोंके बीच घोड़े

भी कैदसे हो गए। उन्हें न आगे बढ़नेका अवसर था और न पीछे हटनेके लिए सुविधा थी। दोनों ओर बड़े-बड़े गहरे गत्त। बड़ी विकट समस्या थी। आगे बढ़नेका जब कोई उपाय न था, तब वे पीछेही लौटनेके लिए तैयार हुए। पीछे लौटकर लोगोंने देखा पुल टूटा है। दोनों पहाड़ियोंके बीच एक मील गहरी और लगभग बीस गज चौड़ी खाई। विचित्र अवस्था थी उनकी। वे सबके सब एक पिंजड़ेमें आकर बन्द हो गए। जब शत्रु निरुपाय हो गए, तब राजपूतोंने अपना पराक्रम प्रदर्शित करना आरम्भ कर दिया। अंधेरी रातमें भयंकर मारसे शत्रुओंके दिल दहलाते हुए राजपूतोंने उन्हें व्याकुल कर डाला। कासिमखाँकी सेना अपना पराक्रम प्रदर्शित भी करे, तो किसपर ? उस घोर अन्धकार में जब शत्रुओंका पता चले, तब तो कुछ किया जाय ! थोड़ी देरमें वीर राजपूत नग्न तलवार एवं भाले लेकर हाथियोंके दलपर दूट पड़े। देखते-देखते हाथियोंके हौदे तलवारकी आघातोंसे कट-कट कर धरतीपर गिरने लगे। वही दशा कासिमखाँके हौदेका भी हुआ, किन्तु संयोगसे वह बच गया, क्रुद्ध होकर वह राजपूती सेनापर दूट पड़ा। उसके समक्ष एक महाबलवान् राजपूत युद्धकी कामनासे आ पहुँचा। दोनोंमें भयंकर युद्ध प्रारम्भ होगया। अन्तमें उस राजपूत वीरके आघातसे कासिमखाँ धराशायी हो गया। शीघ्रही वह बन्दी बना लिया गया। यह दुष्कर कार्य महाराज छत्रसालका था।

सूबेदार कासिमखाँके बन्दी हो जानेपर उसकी सेना नायक-विहीन हो गयी। उसमें बड़ी खलबली पैदा हो गयी। महाराज छत्रसालने उच्च स्वरमें कहा—कासिमखाँके वीर सैनिको ! मैंने कासिमखाँको बन्दी बना लिया है। इस समय हम तुम्हारी हत्या करना चाहें तो कर सकते हैं, किन्तु अकारण हम रक्तपात् नहीं करना चाहते, क्योंकि तुम्हें मार कर हम कोई भी अपना लाभ नहीं देखते हैं। अतः तुम लोग अपना अस्त्र त्यागकर आत्मसमर्पण कर दो। हम तुम्हें बन्धनसे मुक्तकर

इस पिंजड़ेके बाहर कर देंगे। विपक्षियोंने उनकी बातें स्वीकार कर लीं। सारा समान वहीं छोड़कर उन्होंने हाथ उठाकर आत्मसमर्पण कर दिया।

महाराज छत्रसालने उन सिपाहियोंको एक लकड़ीके पुल द्वारा वहाँसे बाहर निकलवा दिया। शेष उनका सारा सामान अपने अधि-कारमें कर लिया।



६

‘जहाँपनाह ! यह खत आपकी खिदमतमें सूबेदार कासिमखाँने भेजा है।’ भूमिमें मस्तक रखकर संदेशवाहकने भारत सम्राट शाहजहाँको अभिवादन और सम्मान प्रदर्शितकर निवेदन किया।

‘खैरियत तो है ?’ प्रश्न करते हुए सम्राटने संदेशवाहककी ओर दृष्टिपात किया।

‘खैरियत क्या जहाँपनाह ! सूबेदार कासिमखाँ और उनके सभी अमले गिरफ्तारकर लिए गए हैं।’

‘गिरफ्तार कर लिए गए ?’ आश्चर्य व्यक्तकर प्रश्न करते हुए हाथमें पत्र ले, सम्राटने पूरी दृष्टिसे संदेश-वाहककी ओर देखा।

संदेश-वाहककी दृष्टि नीची हो गयी। वह सम्राटकी ओर देखते रहनेमें असमर्थ हो गया ! वह चुप था।

‘किसने गिरफ्तार कर लिया है उसे ?’

‘हुजूर ! बूँदीका राजपूत राजा सल्तनतके खिलाफ बागी होगया है, जिसे दबानेके लिए सूबेदार फौज लेकर खुद गए थे और वहाँ राजपूतोंसे

हारकर कैद हो गए। इसकी खबर सूबेदारने शायद जहाँपनाहकी खिदमतमें पहलेही भेज दिया था, मगर उसके इन्तजारमें देर हो जानेसे नतीजा यह हुआ खुदावन्द ! कि उसने जंग छेड़ दिया और सल्तनतको भारी नुकसान पहुँचाया है।

‘हाँ, हाँ कहते जाओ। क्या नुकसान पहुँचाया ? और सूबेदारको किस वजहसे कैद कर लिया ? साफ-साफ कहो। असली वाक्या तुम्हें मालूम है ?’

‘हाँ जहाँपनाह ! बादशाह सलामतकी खिदमतमें नाजायज झूठ न बोलूँगा।’

‘हाँ, हाँ कहो; तुम्हारे ऊपर हमें यकीन है, घबराओ मत।’

‘दरअसल वाक्या तो हुआ यही है कि रूपनगरकी बड़ी राज-कुमारी किरणपरभा बहुतही खूबसूरत है। उसके ऊपर महाराज जगत-सिंह बहुत फिदा हैं, वे उनसे अपनी शादी करना चाहते हैं। लेकिन शेरशाह रुहेला जो महाराजके ऊरी दोस्त बने हैं, उनकी मददका वहाना लेकर खुद उस लड़कीको चाहते हैं। इसी वजहसे उन्होंने ऐसा जाल बिछाया था कि कहते नहीं बनता।’

मौन होकर सम्राट संदेशवाहककी बातें सुनते रहे। थोड़ी देरमें वे फिर बोले—‘तो उस जालमें सूबेदार कैसे जा फँसा ? उससे क्या मतलब था ?’

‘हाँ हुआ ! वजीर आजमके जरिए शेरशाह रुहेलाने पहले रूपनगरके राजाको जहाँपनाहके दरबारमें तलब किया।’

‘वाह, खूब ! तब क्या हुआ ?’

‘तब इसके बाद हुआ ! सूबेदारके जरिए रूपनगर महाराजको, जो अपनी रानीके साथ आपके दरबारमें हाजिर होने आ रहे थे, रास्तेमेंही लुटवा लिया और रूपनगरके राजकुमारको खबर भेजवा दिया कि तुम अपनी बहन कुमारी किरणपरभाको फिरोज़ीमें लाकर हाजिर करो,

तभी तुम्हारी माँ और पिताको रिहा किया जा सकता है। यदि तुम इसके मुताबिक नहीं चलते; तो तुम्हारे माँ बापको न तो रिहा किया जायेगा और न जिन्दाही रहने दिया जायगा।'

'अच्छा ! सूबेदार होकर ऐसा जुल्म किया कासिमखाने ?' आश्चर्य व्यक्त करते हुए सम्राटने कहा।

'नहीं जहाँपनाह ! सूबेदारने ऐसा खुद नहीं किया बल्कि अपने दोस्त मुन्नामेव उर्फ शेरजंगसे कराया।'

'यह शेरजंग कौन है ?'

'यह तो बहुत मशहूर डाकू है जहाँपनाह !'

'कासिमखानेको डाकूसे दोस्ती करनी चाहिए ? खैर, हाँ तो क्या हुआ ?'

'हाँ हुज़ूर ! इसी डाकूसे वह काम कराया गया।'

'हाँ, हाँ। डाकूसे कराया गया या खुद किया गया, बात एक ही है। कानूनकी निगाहमें दोनों बात एक ही है। हाँ आगे कहो।'

'सूबेदारने उसे सजा देनेकी कौन कहे, पहलेसे ही अलीगढ़के किले-का मालिक बना दिया था और मुगल फौजकी मनसबदारी भी उसे दे दी थी, इसी जालिमने मुगल शाहंशाहीकी वफादार रियाया महाराज रूपनगर और उनकी रानीको लूटकर गिरफ्तार करवा लिया और किले में बन्द कर दिया था।'

'यह तो कह चुके आगे क्या हुआ ? जहाँपनाहके पूछनेका मतलब है—महाराज रूपनगरको किलेमें बन्द हो जाने पर क्या हुआ ?' राज-महिषी मुमताज बेगमने कहा, जो वहीं सम्राटके पार्श्वमें उपस्थित थीं।

'हाँ हुज़ूर बता रहा हूँ।'

'यह तो बड़े गहरे राजकी बात है।' मुमताज बेगम सम्राटका ध्यान आकृष्ट करते हुए बोली।'

'बेशक, बेशक ! इसके बाद बोलो जी !'

‘इसके बाद जहाँपनाह ! रूपनगरके राजकुमारने अपने माँ-बापको दुश्मनके पंजेसे निकालनेके लिए बूँदी-नरेशसे मदद माँगी ।’

‘फिर बूँदीवालोंने क्या किया ?’

‘सरकार ! वे खुफिया तरीकेसे पता नहीं कैसे रातको किलेमें घुस गए और महाराज रूपनगर और उनकी रानीको छुड़ा ले गए ।’

‘वाह ! तब क्या हुआ ?’

‘यही नहीं जहाँपनाह ! उन्होंने डाकू शेरजंगको भी गिरफ्तारकर लिया और उसे अपनी राजधानी पकड़ ले गए ।’

‘खुब । यह तो बड़ा कमाल कर दिया बूँदीवालोंने !’

‘हाँ जहाँपनाह !’

‘मगर यह तो बगावत नहीं मानी जायगी बूँदीवालों की ।’

‘हाँ बादशाह सलामत ठीक कह रहे हैं ।’ साम्राज्ञी बोली ।

संदेशवाहक पुनः बोला—‘इसके बाद हुजूर ! शेरजंगके लड़केने सूबेदार कासिमखाँसे फरियाद की । वे उने छुड़ाने और बूँदीको बरबाद करनेके लिए करीब-करीब तीस-पैंतीस हजार सिपाहियोंको साथ लेकर धावा बोल दिए ।’

‘यह तो सरासर कुसूर सूबेदारका ही है, क्योंकि बूँदीपर चढ़ाई करनेकी कोई वजह ही नहीं थी ।’

‘हाँ जहाँपनाह ! ठीक कह रहे हैं ।’ राजमहिषी मुमताजने कहा ।’

‘मगर लड़ाईका वहाना सूबेदारने निकाल लिया हुजूर !’

‘वह क्या ?’

‘यही कि बूँदीके महाराज छत्रसालने ही रूपनगरके राजा और रानीको कैद कराया है और शेरजंगके राजको जान लेनेकी बजहसे उसे भी गिरफ्तार कर अपना कैदी बना लिया है ।’

‘वाह भाई ; सूबेदारकी इतनी हिम्मत कि बादशाह सलामतको भी धोखा दे दिया !’ आश्चर्य व्यक्त करते हुए साम्राज्ञी बोल उठी ।’

‘वैर; आगे बोलो, सूबेदारकी चढ़ाईका नतीजा क्या निकला ?’

बूँदी-नरेशसे दोनों शाही बहादुर हार गए ।’

‘कोन ?’ दृष्टि ऊपर उठाकर सम्राटने पूछा ।’

‘आमेर महाराज जगतसिंह और शेरशाह रुहेला ।’

‘इन लोगोंके हारनेसे तो शाही इज्जत-आबरू पर भी पानी फिर गया । बिना सोचे-समझे जो काम किया जाता है उसका यही नतीजा होता है ।’ साम्राज्ञीने निवेदन किया ।

‘बूँदीके राजपूत बड़े ही बहादुर हैं । इसमे उनकी गलती भी नहीं है । मगर फिर भी सवाल है शाही आबरू की ।’ सम्राट बोले ।

‘बूँदीके बहादुर राजपूतोंसे बिला वजह लड़ाई करके शाही फौज को बर्बाद करना अक्लमन्दी नहीं हो सकती बादशाह सलामत !’ साम्राज्ञीने निवेदन किया ।

‘तुम्हारा मतलब ? क्या बूँदीके राजपूतोंकी बढ़ती हुई ताकतको, जो वक्त पाकर बगावतकी शक्ल हो जायगी; रोका न जाय ?’ सम्राट ने दृष्टि साम्राज्ञीकी ओर मोड़कर पूछा ।

‘नहीं, नहीं बादशाह सलामत मेरी मंशा ऐसी नहीं है ।’

‘तब क्या कहना चाहती हो हम ?’

‘मेरे कहनेका तो सिर्फ इतना ही मतलब है कि उनकी बगावतको रोका जाय और शाही आबरू भी बचायी जाय । मगर...।’

‘मगर क्या ?’

‘यही कि इन्साफका ख्याल रखकर जो भी काम हो, वही अच्छा होगा, क्योंकि गलती बूँदी नरेश और वहाँ की रियाया की नहीं है बल्कि शाही बहादुरोंकी ही है । हमारी निगाहमें बूँदीवालोंने तो कोई बगावत नहीं की, उन्होंने यही किया है, जो उस मौकेपर हर कोई करता है और करना भी चाहिए ।’ साम्राज्ञीने निवेदन किया ।

सम्राट चुप हो गए । भूमि पर उनकी दृष्टि स्थिर हो गयी । वे कुछ

सोचने लगे । थोड़ीही देरके पश्चात् वे संदेश-वाहकसे बोले—‘तो इस खतमें क्या लिखा है ?’

‘उसे तो मैंने नहीं पढ़ा है, जहाँपनाह !’

पत्र खोलकर सम्राट पढ़ने लगे । उसे पढ़कर उन्होंने संदेश-वाहकसे कहा—‘तुम जा सकते हो !’

‘जो हुक्म जहाँपनाह !’ कहते हुए भूमिमें मस्तक स्पर्शकर उसने सम्राटको अभिवादन किया और वह कक्षके बाहर चला गया ।

भारत-सम्राज्ञी मुमताज बेगम बूँदी नरेश महाराज छत्रसालसे बहुत प्रेम करती थी । वह उनके रूपपर आसक्त थी । अतः वह हृदयसे उनका भला चाहती थी । संदेश-वाहकके चले जानेपर उसने स्तब्धता भंग करते हुए सम्राटका ध्यान अपनी उन बातोंपर आकृष्ट किया, जो महाराज छत्रसालसे सम्बन्धित थीं । उसने पूछा—‘वादशाह सलामत ! यह बूँदी नरेश कौन है ?’ अपनी दिखावटी अनभिज्ञता प्रकट करते और अपने गूढ़ प्रेमको छिपाते हुए उसने निवेदन किया ।

‘छत्रसालको नहीं जानता ? जिसको तुमने तीरन्दाजीका इनाम अपनेही हाथोंसे दिया था ! उसने आँखोंपर पट्टी बाँधकर सिर्फ आवाज पर तीरकमानसे निशाना मारा था ?’

‘हाँ, हाँ ! वही बूँदी-नरेश छत्रसाल है ? वह तो बहादुर और काबिल आदमी है । इन बेवकूफोंने उसीसे छेड़छाड़ की थी ? यदि सूबेदारकी हैसियतसे कासिमखाने बूँदी-नरेशको यह हिदायतनामा भेजा कि अगर बूँदी महाराज मेरे दो पठान जवानों—(जिनमें एक जगत-सिंह और दूसरा शेरशाह रहेला; छद्म वेशमें ये ही दो पठान जवान बने थे) से लड़ाईकर उन्हें हरा दें, तो उनका कुसूर माँफकर दिया जायगा । अगर वे ऐसा न कर सके और खुद हार गए या उनसे वे न लड़े, तो बूँदीकी रिपासत उनसे छिन जायगी । ऐसी हालतमें वह बेचारा लड़कर यदि इन्हें हरा देता है, तो उसे मुगल सलतनतके

खिलाफ बागी कैसे कहा जा सकता है ? वह तो मुगल सलतनतका बड़ा वफ़ादार आदमी है ।' निवेदन किया साम्राज़ीने ।

साम्राज़ीकी सारी बातों पर सम्राटने ध्यान दिया । उनकी बातें एक-एककर हृदयमें बैठती गयीं । सम्राट बड़े प्रभावित हुए । थोड़ी देरमें पत्र पढ़कर वे बोले — 'एक औरतके धोखेमें आकर एक हजार सिपाहियोंके साथ दरियाखाँ आगमें जल मरा । पाँच-सात हजार सिपाहियोंके साथ सहादतखाँ और मरदानखाँ उसपर चढ़ाई कर दिए; उनकी सारी फौजको पानीमें डुबाकर उन दोनोंको गिरफ्तार कर लिया गया ! इतना ही नहीं, सूबेदारके साथकी फौजको एक पहाड़ी राहकी चूहेदानीमें तबाहकर सूबेदारको भी कैद कर लिया गया ! बाह; क्या खूब ! अपनी बहादुरी दिखाकर सूबेदारने खूब अच्छा काम किया खूब मुगल सलतनत की इज्जत बढ़ा दी, इन बहादुरोंने !' खेद प्रकटकर सम्राट मौन हो गए ।

'तो तुम्हारी निगाहमें बूँदी-नरेशका कोई कुसूर नहीं है ?' साम्राज़ीसे पूछा सम्राटने ।

'मगर मेरी निगाहमें कुछ भी होनेसे क्या हो सकता है, बादशाह सलामत ! जब आपकी निगाहमें भी वही बात हो, जो मेरी निगाहमें है, तब तो उसकी कुछ कीमत भी हो सकती है, वरना हमारा सोचना भी तो बेकार है ।' साम्राज़ी बोली ।

'नहीं, नहीं; मैं तुम्हारा जानना चाहता हूँ । यदि माकूल बात है, तो हम उसकी कदर करेंगे ।'

'मगर जहाँपनाहने क्या सोचा ?'

'मैं तो पहले तुम्हारा इरादा ही जानना चाहता हूँ ।'

'तो मेरी निगाहमें तो बूँदी-नरेशका कुसूर नहीं है, बल्कि कुसूर है, इन्हीं शाही कुराकूनोंका । अब जैसा आप समझें ।'

'ठीक है; देखा जायगा ।' कहते हुए सम्राट उठकर उसी कक्षमें टहलने लगे । थोड़ी देरमें टहलते-टहलते सम्राट राज्योद्यानमें चले गए;

किन्तु साम्राज्ञी चिन्ताग्रस्त हो गयी । महाराज छत्रसालको वह हृदयसे चाहती थी; अतः वह प्राणपणसे उनका भला चाहती थी ।

दूसरे दिन सभी सभासद एकत्र हुए । यथास्थान सबके बैठ जाने पर सम्राट शाहजहाँ दरबारमें उपस्थित हुए । सभी सभासदोंने खड़े होकर उन्हें सम्मान प्रदर्शित किया और सम्राटके सिंहासनारूढ़ हो जानेपर सबोंने अपना-अपना आसन ग्रहण किया ।

‘आज यह खत सूबेदार कासिमखाँका मिला है जिसपर आपलोगों को गौर करना है । बूँदी-नरेश छत्रसालने बग़ावतकर सलतनतको बड़ा नुकसान पहुँचाया है । खुद कासिमखाँ और उसके सारे अमले छत्रसाल के ज़रिये गिरफ्तार कर लिए गए हैं । पत्र पढ़कर सम्राटने सुनाया । सभामें सन्नाटा छा गया । सबकी दृष्टि सम्राटकी ओर पहुँचकर स्थिर हो गई । सब बड़े ध्यानसे सुनने लगे ।

वज़ीर आज़मने आश्चर्य व्यक्त करते हुए निवेदन किया—यह तो बहुत बुरा हुआ, जहाँपनाह ! बागीको जरूर-जरूर सजा देनी चाहिए ।

सम्राटने वज़ीरकी ओर दृष्टिपात किया और मौन होकर कुछ सोचा और अभ्ययन करनेकी चेष्टा भी की ।

दूसरे सदस्यने निवेदन किया—‘जहाँपनाह ! न चाहते हुए भी बूँदी-नरेशने जरूर सलतनतको कुछ नुकसान पहुँचाया है, मगर यह सारेका सारा दोष तो राजभक्त कहलानेवाले कारकुनोंका ही है ।’

‘किन्तु दोष चाहे जानमें हो वा अनजानमें, वह दोष ही है और उसके लिए सजा भी आवश्यक है । मेरी समझसे छत्रसालको बरी नहीं किया जा सकता ।’ जगतसिंहने दृढ़तासे कहा ।

‘यदि बूँदी-नरेश छत्रसालकी जगह आप खुद होते तो आप ऐसी दशामें क्या करते ? संभव है वही आपको भी करना पड़ता, जो उन्होंने किया । उसी दूसरे सदस्यने कहा ।

‘मैं ? अवश्य ऐसा करता, किन्तु अपने उत्तरदायित्वसे बरी होनेके

लिए जरूर बादशाह सलामतको सूचित कर देता । बोलो; ऐसी दशामें अपराधी छत्रसाल माने जायेंगे कि नहीं ।

‘नहीं, नहीं माने जायेंगे अपराधी ।’

‘क्यों ?’

‘क्योंकि यदि शत्रु एकाएक चढ़ाई कर दे और यहाँ तक अपने प्रति-द्वन्दीको अवसर न दे कि उसकी सूचना बादशाह सलामत तक भेज पायी जाय, तो कौन दोषी होगा ? यही बात बूँदी पति छत्रसालके ऊपर भी लागू होगी और कासिमखाँके ऊपर भी । हो सकता है बूँदी-नरेशके पास इसका और भी कोई उपयुक्त कारण हो, किन्तु बिना उनसे पूछे क्या कहा जायगा ?’

जगतसिंह चुप हो गए । सम्राट दोनों सम्भ्रान्त व्यक्तियोंकी बातें सुनते ही रहे ।

‘हर हालतमें बूँदी-नरेशको सलतनतका ख्याल रखना था । आज आपकी कही बातें मान भी ली जायँ, तो भी उन्होंने कोई भी वफादारी नहीं दिखलायी है । आज चाहे झूठ हो या सच । शाही फौजसे मुकाबला करके जो काम छत्रसालने किया, उसे देखते हुए यह कैसे मान लिया जाय कि मौका पड़नेपर वे शाही हुक्मनके खिलाफ न जायेंगे, या बगावत नहीं करेंगे ?’ शेरशाहने अपने पक्षकी महत्ता पर प्रकाश डालते हुए कहा ।

‘नवाब साहब; मैं मान लेता हूँ; बूँदीपतिने कोई खबर हुक्मतको नहीं दी, लेकिन हुक्मतके कारकुनोंने, जिन्होंने एकाएक बूँदी पर धावा बोल दिया, क्या शाही हुक्मसे ऐसा काम किया है ? क्या उन्हें शाही दरबारमें इसकी खबर न देकर खुद ही इतना बड़ा कामकर डालनेका हुक्म अपने ही हाथमें ले लेना चाहिए ? बादशाह सलामतको इसकी कोई खबर ही नहीं और शाही कारकुन मनमानी कर बैठें तो उन्हें फाँसी की सजा नहीं दे देनी चाहिए । क्या कोई भी काम उन्हें ऐसा करना

चाहिए जिससे सलतनतको नुकसान ज्यादा और फायदा कुछ भी न हो ? बोलिए ?

नवाब रहेला चुप हो गए ।

‘बोलिए नवाब साहब ; नहीं तो आपके ऊपर एकतरफा बोलनेका इलजाम लग जायगा ।’ उसी सभासदने कहा ।

‘नवाब साहब इस पर भी नहीं कुछ बोल सकते, इन्हें तो केवल बूँदी-नरेश छत्रसालके ही कुसूर दिखाई पड़ते हैं और दूसरे दलकी तारीफ । इसके अलावा इन्हें और कुछ भी सोचने-विचारनेकी न तो कोई खाहिश है और न जरूरत । क्यों जनाब नवाब रहेला ?’ सम्राट शाहजहाँने व्यंग्यमें पूछा ।

नवाब रहेला शेरशाह काँप गया । उसने सिर नीचे कर लिया । जगतसिंह भी सहम गए । बादशाहका रुख देखकर विरोधी कुछ टण्डे पड़ गए ।

‘और जिसको जो कुछ कहना हो, सुझाव देना हो, वह बोलें ।’ सम्राटने कहा ।’

सभा मौन थी । किसीने कुछ भी नहीं निवेदन किया ।

‘तो आपलोग क्या फैसला करना चाहते हैं ? बोलिए ।’ सम्राटने सभाकी ओर दृष्टिपात कर कहा ।

जब और किसीने कुछ भी नहीं कहा, तब बूँदी-नरेशके पक्षवाला सदस्य बोला—‘जहाँपनाह ! मेरी समझमें जब तक दोनों फरीकोंके कुसूरकी जाँच न हो जाय, तब तक फैसला रोक रखा जाय । इसके लिए खुदावन्द खुद-बखुद जाँच करें और इन्साफको निगाहमें रखकर फैसला करें ।’

‘क्यों; आपलोगोंका क्या ख्याल है ?’ सभी अन्य सदस्योंसे सम्राट शाहजहाँने पूछा ।

‘यही तो होना चाहिए गरीबपरवर ; यही ।’ कुछ सदस्योंने कहकर

अपनी स्वीकृति प्रदान की। कुछ सदस्योंने जो शेरशाह और जगतसिंह के पक्षपाती थे, कुछ भी नहीं कहा।

‘तो ठीक है, मुझे भी यह सारी बातें पसन्द हैं। ऐसा ही किया जायगा। आजका दरबार बरखास्त किया जाता है।’

इसके बाद सभाका कार्यक्रम समाप्त हुआ। सभी दरबारी चले गए।

रात्रिमें जब सम्राट शाहजहाँ अन्तःपुरमें प्रविष्ट हुए, तब साम्राज्ञी मुमताजवेगमने निवेदन किया—‘जहाँपनाह ! आज दरबारमें बूँदीनरेश के बारेमें क्या तय पाया ?’

‘अभी कुछ भी तै नहीं हुआ।’

‘आपने क्या सोचा ?’

‘हम तो यही सोच रहे हैं, जो कुसूर बूँदी नरेशपर लगाया गया है; उसकी हम चलकर खुद जाँच करें, क्योंकि यह कोई ऐसी-वैसी मामूली बात नहीं है, जिसको लापरवाही की जाए। अगर बूँदीनरेश की कोई गलती नहीं है, तब तो उसे नाखुश करना कोई अकलमन्दी नहीं होगी और अगर उसका कुसूर होगा, तो उसे छोड़ देना भी बहुत बुरी बात होगी, क्योंकि इससे सलतनतको आगे चलकर भारी नुकसान उठाना पड़ेगा।’

‘यह तो ठीक ही है। ऐसा करनेसे एक फायदा यह भी होगा, कि कभी कोई भी शाही मुलाजिम गलती करनेका नाम भी नहीं लेगा। जहाँपनाह ! रूपनगरकी उस बदकिस्मत राजकुमारीके बारेमें आपने क्या सोचा ? जिसकी वजहसे सारा बखेड़ा खड़ा हो गया है और सलतनतको नुकसान उठाना पड़ा है।’ साम्राज्ञीने निवेदन किया।

‘उसकी शादीके वास्ते मैं सोचता हूँ—स्वयंवरमें जंग करके जो जीत जायगा, उसीसे उसकी शादी करवा दी जाय। क्यों तुम्हारा क्या विचार है ?’ सम्राटने पूछा।

‘यह भी तो बड़े इन्साफकी बात होगी ।’ साम्राज्ञी अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बोली ।

‘मेरा ख्याल है, इस जाँचमें और रूपनगरकी राजकुमारीकी शादी-में तुम्हें भी साथ ले चलूँ । क्यों यह कैसा होगा ?’

‘बादशाह सलामतका जो हुक्म ।’

‘हुक्मकी बात नहीं, तुम्हारा इरादा क्या है, उसे जाहिर करो ।’

‘मेरा इरादा ? मुझे तो बड़ी खुशी होगी । यही मैं भी कहना चाहती थी कि बादशाह सलामत खुद चलकर जाँच करें और अस-लियतका पता लगावें; क्योंकि यह मामूली बात नहीं है ।’

‘इसकी खबर बूँदी और रूपनगर भेज दी जाय ?’ और अज-मेर भी ?’

‘हाँ, हाँ, वहीं तो चलकर सब काम पूरा किया जायगा ।’

‘कब तक वहाँ चलना होगा ?’

‘जल्दसे जल्द मौका निकालकर यह काम खत्म करना है, देर करनेकी कोई वजह नहीं ।’

‘मैं भी यही चाहती हूँ’

‘मैं तो ऐसा कोई काम ही नहीं करता; जो तुम्हारी मरजीके खिलाफ हो ।’ कहकर सम्राट मुमताज बेगमकी ओर देखकर मुस्करा उठे ।

‘साम्राज्ञीको भी सम्राटके इस कथन पर हँसी छूट गयी ।’



मुगल सम्राट शाहजहाँका पत्र पाकर बूँदी-नरेश महाराज छत्र-सालने अपनी राजधानीमें उनके स्वागतकी भारी तैयारी प्रारम्भ कर

दी । इसी प्रकार रूपनगरमें स्वयंवरके सारे प्रबन्ध होने लगे । राजसभा में महाराज छत्रसालने सम्राटका पत्र पढ़कर सुनाया । सभी सभासद उस पत्रसे बड़े प्रभावित हुए । सर्वसम्मतिसे निश्चित किया गया; यदि शाही फौजसे हुए युद्ध और सारी विषमताओंके सम्बन्धमें सम्राट साम्राज्ञी के साथ स्वयं पधारकर बिना किसीका विश्वास किए गुप्त एवं प्रकट रूपसे जाँच करेंगे और उसमें उत्पन्न हो गए गन्दे वातावरणको शुद्ध करनेका प्रयत्न करें, तो निश्चय ही उनका आदर किया जाय और उनके प्रति सद्भावना व्यक्त की जाय । इस निश्चयके अनुसार बूंदीमें तैयारीके सभी कार्यक्रम प्रारम्भ हो गए ।

महाराज छत्रसालको यह जानकर भी बड़ी प्रसन्नता हुई कि राज-कुमारी किरणप्रभाका विवाह स्वयंवर-भूमिमें युद्धकर विजयी वीरके साथ सम्पन्न होगा ।

जिस प्रकार सम्राटके स्वागतकी तैयारी बूंदीमें हो रही थी, उसी प्रकार रूपनगर और अजमेरमें भी बड़ी-बड़ी तैयारियाँ होने लगीं ।

इस प्रकार एक महीनेकी अवधि व्यतीत हो गयी । भारत-सम्राट शाहजहाँने अपनी प्राणप्रिय-प्रियतमा और कुछ राजप्रमुख व्यक्तियोंके साथ राजधानीसे अजमेर पदार्पण किया । उन्होंने वहाँ पहुँचकर अपनी यात्रा संबंधी इन सभी घटनाओंकी जाँच गुप्त और प्रकट रूपसे प्रारम्भ कर दी । सारे मामलेकी जाँचकर लेनेपर साम्राज्ञीके साथ सम्राट बूंदी पधारे । नगरके पूर्वकी ओर एक रमणीक स्थलपर सम्राटके लिए शिविर खड़ा किया गया था, जिसके ऊपर शाही झण्डा फहरा रहा था । आस-पासमें इधर-उधर छोटे-बड़े अनेक फौजी अधिकारियों और अन्य राज्य-प्रमुख व्यक्तियोंके लिए बहुतसे डेरे, तम्बू एवं छोलदारियाँ जो कपड़ेकी दीवारोंके अन्दर थीं, जगमगा रही थीं । इन सभी डेरे और तम्बूओंसे कुछ दूर एकान्तमें एक विशाल शिविर और था जहाँ दरबार लगनेके लिए उत्तम प्रबन्ध था । प्रमुख द्वारके दूसरी ओर एक अत्यन्त सुन्दर

उच्च मञ्च बना था, जिस पर गद्दे, दरी और मूल्यवान् गलीचे इत्यादि बिछा दिए गए थे एवं तारकसी तथा जरीकी अमूल्य रेशमी चादरें उस पर इस प्रकार बिछा दी गयी थीं, जो तोसक-तकिये इत्यादिके साथ सिंहासनका भ्रम पैदा कर रही थी। छोटे मनसबदारोंके आसन सम्राटके सिंहासनके सामने बनाए गए थे, इसी प्रकार क्रमशः पंचहजारी और सप्तहजारी मनसबदारोंके आसन सम्राटके आसनके नीचे उनके बराबरमें बनाए गए थे। दरवार बड़ा आकर्षक और आरामदेह बनाया गया था। स्वच्छतासे उसके आकर्षणमें वृद्धि हो रही थी। सभी साज-सज्जा मिलकर मुगल सम्राट शाहजहाँकी महत्तापर विशेष बल दे रही थीं। प्रबन्ध बहुत ही कलात्मक एवं संतुलित ढंगसे उत्तम था।

दूसरे दिन समयसे सभी दरबारी उपस्थित हुए और यथास्थान जा बैठे। सम्राटके आनेकी प्रतीक्षा की जाने लगी। थोड़ी देरके पश्चात् सभी वहाँपर उमड़े हुए, जन-समूहको सतर्क करते हुए, अविकारीगण इधर-उधर कार्य-रत हो गए। सम्राट और साम्राज्ञीके दर्शनोंके लिए अत्यधिक संख्यामें वहाँ जनता एकत्र हो चुकी थी। शिविरके पार्श्वमें घंटा टँगा था, उसपर तीव्र ध्वनि की गयी। वह दूर तक घहर उठा। सब सम्राट और साम्राज्ञीके आगमनकी सूचना पाकर सावधान हो उठे। दरबारी अपनी निश्चित वेशभूषामें अपने उपयुक्त स्थानोंपर विराजमान् थे उच्च अधिकारियों, मुसाहिबों और साम्राज्ञी मुमताज बेगमके साथ बड़ी गम्भीर मुद्रामें शान्ति पूर्वक सम्राट शाहजहाँ सभाभवनमें उपस्थित हो गए। सम्राट और साम्राज्ञीके जयजयकारकी ध्वनिसे समग्र वातावरण निनादित हो उठा। सम्राट और साम्राज्ञीके समक्ष सभी उपस्थित दरबारियों और सम्भ्रान्त व्यक्तियोंने मस्तक झुकाकर सम्मान प्रदर्शित करते हुए अभिवादन किया।

उपस्थित जन-समुदाय, दरबारियों एवं सम्भ्रान्त व्यक्तियोंपर विहंगम दृष्टि डालते हुए साम्राज्ञीके साथ सम्राट अपने आसनपर जा बैठे। उनके

और साम्राज्ञीके आसन ग्रहणकर चुकनेपर सभी लोग अपने-अपने स्थानपर बैठ गए। सारी सभामें सन्नाटा छा गया। सम्राटके पार्श्वमें प्रधानमंत्री उस तालिकाको लेकर खड़ा हो गया, जिसमें सम्राटको भेंट देनेवालोंका नाम अंकित था। क्रम-क्रमसे उनका नाम घोषित किया जाने लगा और राजभक्त सभी सम्भ्रान्त व्यक्तियोंने बड़ी श्रद्धासे अपनी मूल्यवान् भेंट भारत-सम्राटको समर्पितकर प्रसन्नताका अनुभव करना प्रारम्भ कर दिया। कुछ समय तक यही कार्यक्रम चलता रहा। इसके समाप्त होते-होते सूचना प्राप्त हुई—‘दरबारमें सम्राटके समक्ष अपने दोनों भाइयों एवं मंत्रियोंके साथ महाराज बूंदी-नरेश छत्रसाल आ रहे हैं।’

‘साम्राज्ञीका हृदय फड़कने लगा, वे बार-बार बड़ी व्याकुलताके साथ छत्रसालको देखनेके लिए दृष्टि दौड़ाने लगीं। अन्तमें उनकी दृष्टि महाराज छत्रसालपर जा अड़ी। वे मुग्ध हो गयीं। अनुपम रूप था। महाराज का। साम्राज्ञीने सभी उपस्थित जन-समुदायपर भी दृष्टि डाली, अनुभव किया—‘कोई भी तो इनके समान नहीं है। इस महनीय व्यक्तित्वकी तुलनामें कोई हो सकता है?’ नहीं, कोई नहीं। यदि एक बार भी महाराजको मैं हृदयसे लगा पाती!’ इत्यादिक कितनी ही भावनाओंने उठ-उठकर साम्राज्ञीके हृदयको आन्दोलित कर दिया। वह महाराजके रूपपर आसक्त थी।

अपने भाइयों और मंत्रियोंके साथ प्रमुख द्वारसे सभा-भवनमें उपस्थित होकर महाराज छत्रसालने भारत सम्राट और साम्राज्ञीकी वन्दना की और एक रजतपात्रोंमें सुशोभित स्वर्णकी डिवियामें प्रकाशमान् महामूल्यवान् हीरा अपने मंत्रीके हाथोंसे लेकर उनके समक्ष प्रस्तुत करते हुए उन्होंने शाही शासनके प्रति सम्मान एवं अपनी निष्ठाकी अभिव्यक्ति की। शाही दम्पतिने भी बड़ा हर्ष व्यक्त किया। भारतके प्रधान मंत्रीने महाराज छत्रसालका सम्राटकी आज्ञासे सम्मान प्रदर्शित करते हुए सप्त-हजारी मनसबदारके आसनकी ओर संकेत किया। वे वहाँ जाकर विराज-

मान् हो गए। इसके पश्चात् उनके अन्य साधियों—इन्द्रगढ़-नरेश मौकमसिंह एवं महासिंह ठिकानेदार यानोद—ने सम्राटको मुहूर्ते भेंटमें प्रदान कीं। इन दोनोंका प्रधानमंत्रीने सम्राटसे परिचय कराया। इन्हें महाराज छत्रसालका भाई सुनकर सम्राटने इन्द्रगढ़-नरेशको पंचहजारी एवं यानोदके ठिकानेदारको तीनहजारी मनसबदारोंकी श्रेणीमें स्थान देनेकी आज्ञा प्रदान की।

भेंट-समारोहका कार्यक्रम समाप्त हुआ। सम्राटने आज्ञा प्रदान की—‘बूंदी और शाही भगड़ेका मामला पेश करो।’

‘मगर जहाँपनाह ! ...।’ प्रधानमंत्रीने निवेदन किया।

‘हाँ, हाँ कहो क्या कहना चाहते हो ?’

‘यही कि अभी बादशाह सलामतकी पेशीमें महाराज रूपनगर हाजिर नहीं हुए हैं।’

‘ठीक है, थोड़ा और इन्तजार कर लो।’

‘जो खुदावन्दकी इजाजत।’ प्रधानमंत्रीने नम्रतासे कहा।

उसी समय सम्राटके समक्ष भेंट लेकर महाराज रूपनगरके आगमन की सूचना मिली। वे ससम्मान सम्राट के सम्मुख उपस्थित किए गए। सम्राटने कहा—‘आओ महाराज ! तुम्हारी गैरहाजिरीसे तुम्हारे मामलेकी सुनवाई रुक रही थी, ठीक वक्तपर तुम आ गए।’

महाराज रूपनगरने आदरके साथ मस्तक झुकाकर अभिवादन किया और भेंटकी सामग्री सम्राटको समर्पितकर अपनी सम्राटके प्रति राजभक्तिका प्रदर्शन किया। सम्राट उनके ऊपर प्रसन्न थे, उन्हें आदर के साथ सभामें उचित आसन पर बैठनेकी आज्ञा प्रदान की गयी। वे आदेशानुसार सम्राटकी ओर मुँह करके बैठ गए।

सभाकी कार्यवाही जो महाराज रूपनगरकी अनुपस्थितसे अवरुद्ध हो गयी थी; पुनः प्रारम्भ हुई।

‘राजपूत बूंदी-नरेश !’ कहा सम्राटने।

महाराज छत्रसाल अपने स्थानपर उठकर खड़े हो गए और सम्राटकी ओर मुँहकर आदेशकी प्रतीक्षा करने लगे ।

‘आपने अपने यहाँ जिन शाही आदमियोंको कैदकर रखा है, उन्हें दरबारमें हाजिर कीजिए ।’

‘जो हुक्म जहाँपनाह !’ कहकर महाराज छत्रसालने अपने एक अधिकारीको आदेश दिया—‘तुरन्त वे सभी कैदी सम्राटके समक्ष उपस्थित किए जायँ, जो युद्धमें पराजितकर बन्दी बनाए गए थे ।’

‘जो आज्ञा महाराज !’ कहकर अधिकारीने मस्तक नवाकर प्रस्थान किया ।

थोड़ी देरमें सभी कैदी सम्राट शाहजहाँके समक्ष उपस्थित किए गए । उनकी हथकड़ियाँ खोल दी गयी थी । उन लोगोंने सम्राटको अभिवादन किया । लज्जासे सभी नतमस्तक थे ।

‘तुम लोगोंका इन्साफ होगा ।’ सम्राटने कहा ।

कैदी, सूबेदार कासिमखाँको छोड़कर सभी प्रसन्न हो उठे । कासिम-खाँ थरथर काँपने लगा ।

‘महाराज रूपनगरको रास्तेमें लुटवाकर क्यों कैद किया गया ? बोलो शेरजंग ?’ सम्राटने तीक्ष्ण दृष्टिसे देखकर पूछा ।

शेरजंग अपने स्थानपर खड़ा हो गया । ‘मैंने जहाँपनाह ! उन्हें नहीं लूटा और न कैद ही किया ।’ शेरजंगने निवेदन किया ।

‘तुम्हें मालूम है, इन्हें किसने लूटा और किसने कैद किया ?’

‘जी हाँ खुदावन्द ! यह तमाम काम तो महाराज बूँदी नरेशने ही किया । इन्होंने ही महाराज रूपनगरको लुटवाया और कैद किया । इतना ही नहीं हुजूर ! इन्होंने राजसे मुझे वाकिफ होनेकी वजहसे धोका देकर मुझे भी गिरफ्तार करवाकर कैदखानेमें डलवा दिया ।’

‘तुम्हारा मतलब ; तुम इस मामलेमें कुसूरमन्द नहीं हो । क्यों ?’

‘जी हाँ बादशाह सलामत ! वैसे हुजूरकी जो निगाहमें आवे ।’

‘क्यों महाराज ! आपको शेरजंगने लूटा या बूँदी-नरेश महाराज छत्रसालने ?’ सम्राटने शान्त चित्तसे महाराज रूपनगरसे पूछा ।

रूपनगर-नरेश अपने स्थानपर उठकर खड़े हो गए, सभासदोंने एक बार उनकी ओर एक बार शेरजंगकी ओर अन्तमें सम्राट एवं बूँदी-नरेशकी ओर दृष्टिपात किया ।

‘बादशाह सलामत ! मुझे अपने सैनिकोंके साथ ललकार-ललकार-कर शेरजंगने ही लूटा और कैद भी किया । इतना ही नहीं जहाँपनाह ! इन्होंने ही मेरे युवराजके पास पत्र लिखकर मेरी पुत्रीकी तलबी भी फिरोतीके रूपमें की । बूँदी-नरेश महाराज छत्रसालकी सहायतासे ही तो मैं इनके कारागारसे छूटा और हमारी आबरू बची ।’

‘क्यों शेरजंगका वह खत आप लाए हैं ?’

‘जी हाँ जहाँपनाह ! यह लीजिए !’ फाइलसे एक कागज निकालकर सम्राटके समक्ष प्रस्तुत करते हुए रूपसिंहने निवेदन किया ।

‘देखो शेरजंग ! यह तुम्हारी लिखावट है ?’

शेरजंग सम्राटके समक्ष जाकर लिपि पहचानने लगा । उसे देखकर वह मौन हो गया ।

‘बोलते क्यों नहीं ?’ तीव्र स्वरमें सम्राटने पूछा ।

शेरजंगके हृदयमें घबराहट पैदा हो गयी । उसका सिर नीचे झुक गया और बड़ी मन्द ध्वनिमें उसने निवेदन किया—‘हाँ हुजूर यह मेरी ही लिखावट है ।’

‘क्यों ऐसा खत लिखा तुमने ?’

शेरजंग चुप हो गया, कुछ भी उत्तर न दे सका ।

‘चुप क्यों हो गए ? बोलो ?’

शेरजंगकी दृष्टि नीचे स्थिर हो गयी, वह मौन हो गया ।

‘शेरजंग ! तुम्हें अपनी जो कुछ सफाई देनी हो, बोलो । तुम्हारा बहुत बड़ा कुसूर साबित हो रहा है । एक बार तुम्हें माफकर दिया गया

था और सोचा गया था तुम सुधर जाओगे, लेकिन इधर तुम्हारा कोई सुधार नहीं हुआ। तुम पहले ही की तरह राहजनी फिर करने लगे।’

शेरेजंगकी दृष्टि इधर-उधर दौड़ी, किन्तु कुछ नहीं। उसे कुछ भी दृष्टिगत नहीं हुआ। दूसरी बार उसने फिरसे सभामें दृष्टि-निक्षेपण की। महाराज जगतसिंह, नवाब रुहेला और सूबेदार कासिमखाँ सबके सब उसे दिखायी पड़े। किन्तु निष्प्रभ; मौन और नतमस्तक !

शेरेजंगकी आशापर पानी फिर गया। वह मौन हो गया।

‘तुम्हारा फैसला हो गया और कुछ कहना चाहते हो; बोलो ?’

शेरेजंग फिर भी मौन था।

‘शेरेजंग !’ कहा सम्राटने।

सबकी दृष्टि सम्राटकी आकृतिपर स्थिर हो गयी। शेरेजंग भी पता नहीं क्या सोचता हुआ सम्राटकी ओर देखने लगा।

‘तुम्हें !’ कहकर सम्राट कुछ सोचने लगे। जन-समूहकी उत्कंठा प्रबल हो गयी।

‘सूलीकी सजा दी जाती है।’

सारी सभामें स्तब्धता व्याप्त हो गयी। शेरेजंगके समक्ष मृत्यु साकार हो गयी। प्रधानमंत्रीने आदेश प्रदान किया दो सिपाहियोंने शेरेजंगको बन्दी बना लिया।

‘और सूबेदार कासिम खाँ ? बोलें सम्राट।’

कासिमखाँकी आकृति म्लान हो गयी। उसने खड़े होकर सम्राटकी ओर मस्तक झुका दिया।

‘तुम्हें सूबेदारीसे बरखास्त किया जाता है।’

सूबेदार सम्राट और साम्राज्ञीकी ओर देखने लगा। उसका हृदय आन्दोलित हो उठा।

‘और तुम्हारी व मुन्नामेवकी खुदकी धन दौलत जुमानिमें जप्त कर ली जायगी। उसीसे बूँदी और रूपनगरको जो घाटा हुआ है, वह पूरा

किया जायगा। अलीगढ़की रियासत इम्दरगढ़ राज्यमें मिला दी जायगी।' सम्राट बोले।

कासिमखाँकी हिम्मत छूट गयी।

'और महाराज छत्रसाल !' सम्राट बोले।

बूंदी-नरेश छत्रसाल अपने स्थान पर खड़े हो गए और उनकी दृष्टि सम्राटकी ओर जा पड़ी।

'आपको मध्यभारतका सूबेदार बनाया जाता है।'

छत्रसाल मौन थे। उनकी आकृति गम्भीर थी।

'और आपको सप्तहजारी मन्सबदारीकी खिलअतअताकी जाती है।

महाराज नतमस्तक थे, उन्होंने शासनके प्रति कृतज्ञता प्रदर्शित की।

'और आपको मुमताज बेगमके हुक्मसे शाही महलका आला हाकिम कायम किया जाता है।' सम्राटने मुमताज बेगमको प्रसन्न करते हुए हँसकर कहा।

'और महाराज रूपनगर !'

रूपनगर-नरेश अपने स्थानसे उठकर खड़े हुए और सम्राटको अभिवादनकर आदेशकी प्रतीक्षा करने लगे।

'आपकी लड़कियोंकी शादी बजरिए स्वयंवरजंग मेरी मौजूदगीमें करायी जायगी। मैं खुद उसका फैसला करूँगा। क्यों ठीक है न ?'

'जी हाँ; जहाँपनाह ! यह तो आपकी मेहरबानी है। यह हमें मंजूर है।' कहते हुए रूपसिंहने बड़ा हर्ष व्यक्त किया।

भारत सम्राटकी उपर्युक्त घोषणा और न्याय सबसे अधिक खला आमेर-नरेश महाराज जगतसिंहको। अपने प्रतिद्वन्दी महाराज छत्रसाल-का उत्कर्ष उन्हें सहन नहीं था। फिर भी वे वहाँ कुछ बोल तो सकते नहीं थे, अतः वे मौन हो गए।

११

दूसरे दिन भारत-सम्राट शाहजहाँने रूपनगरके लिए प्रस्थान किया। वहाँ स्वयम्बरकी तैयारीकी जाने लगी ! सम्राटके चले जानेपर आज अनेक दिनोंके पश्चात् अवकाश मिला है। राज्यपरिवारके संबंधित और अपने आत्मीय जनोंमें महाराज छत्रसाल बैठे बड़े प्रसन्न दिखायी पड़ रहे हैं।

शत्रुओंको पराजितकर आपने बड़ा दुष्कर कार्य किया है महाराज ! मुझे तो इसकी कल्पना नहीं थी, कि इस प्रकार सम्राट प्रसन्न होकर श्रीमान्को पुरस्कृत करेंगे।' मौकर्मसिंहने निवेदन किया।

‘किन्तु इसे तो हम आप सब लोगोंके ही सद्भाव और प्रयत्नका फल समझते हैं।’ महाराज छत्रमालने कहा।

किन्तु यह भी तो देखना है कि हम लोगोंका नेतृत्व किस योग्य व्यक्ति ने किया ? यदि नेता कुशल है, दृढ़ चरित्र है, तो उसके अनुगामी अवश्य ही सफल हो सकते हैं। ईश्वरकी ही कृपासे बूँदीका यह संकट दूर हुआ, नहीं तो सूबेदार कामिमखाँने जो योजना बनायी थी; उसमें हमलोगोंका सारा अस्तित्व ही समाप्त हो जाता। कितनी भयानक थी, वह घड़ी।’

‘मनुष्यके समक्ष जो आपदाएँ आती हैं, निश्चय ही वे उसके स्तरोन्नयनके लिए उपस्थित होती हैं। यदि यह युद्ध उपस्थित न हुआ होता और तत्परतासे, सावधानीसे, साहससे और बुद्धिमानीसे कार्य न किया गया होता, तो इतनी जो कुछ सफलता और सम्मान प्राप्त हुआ, घर बैठे कोई न दे जाता। हाँ, यह भी मानता हूँ, कभी-कभी बहुत बड़ी हानि भी उठानी पड़ती है, किन्तु प्रायः वे ही लोग इसमें हानि उठाते हैं, जो असावधान रहते हैं और बुद्धिसे काम नहीं लेते। कर्त्तव्यका पालन करनेवाला जागरूक व्यक्ति कभी अपने जीवनमें जल्दी असफल नहीं होता।’ छत्रसाल बोले।

‘आज मैं आपके साथ बूँदीके जंगलोंमें आखेट खेलने चलना चाहता हूँ; यदि आज्ञा हो, तो तैयारी की जाय। आज इधर महीनों व्यतीत हो गए। मनोरंजनके लिए इच्छा प्रबल हो उठी है।’ छत्र-साल बोले।

‘यदि ऐसी ही बात है, तो आपकी इच्छा अवश्य पूरी की जायगी।’ मौकमसिंहने निवेदन किया।

कुछ सैनिकोंके साथ महाराज छत्रसाल और मौकमसिंह आखेटके लिए चल पड़े। कुछ समयके पश्चात् वे सब एक भयंकर वनमें जा पहुँचे।

+

X

+

भारत सम्राट शाहजहाँ द्वारा अपराधियोंको दण्ड एवं बूँदी नरेश को पुरस्कृत सम्मान प्रदान किया जाता आमेर-नरेश जगतसिंह और उनके घनिष्ठ मित्र नवाब रूहेलाको असह्य हो उठा। उनकी आक्रुति मलीन हो गयी। आमेर-नरेशको अत्यन्त खिन्न देखकर नवाब रूहेला शेरशाह बोला—‘महाराज ! आप कुछ भी फिकर न करें; मैं तिकडम लगाकर आपकी राहके काँटेको निकाल बाहर कर दूँगा। फिलहाल इस वक्त हमें स्वयंवर जंगमें बूँदी-नरेश के आनेमें रुकावट डालनी है।’

हाँ नवाब साहब; इस समय हमें तो आपका ही भरोसा है। बूँदी नरेश हमसे और आपसे ज्यादा बलवान है, उसे पराजित करनेके लिए बुद्धिकी और चालाकीकी जरूरत है। वलमें तो वह हमें और आप दोनोंको पिछाड़ चुका है।’

‘बुद्धि और चालाकीको आप कम न समझिए महाराज ! आदमीसे ज्यादा ताकत हाथोंमें होती है, लेकिन आदमी उसपर हावी रहता है।’

‘बात तो सही है नवाब साहब; मगर बूँदी-नरेश हाथीकी तरह कम अक्ल नहीं है। सावधान रहनेकी जरूरत है। आपने अभी देखा ही है—शेरजंग और कासिमखाँकी हालत। सम्राज्ञी मुमताम बेगम और शाहशाहकी भी उसके प्रति बड़ी कृपा है।’

‘तभी तो कहता हूँ, गुप्त तरीकेसे आपका काम करूँया और हो सका तो धोकेसे मैं हमेशाके लिए आपके दुश्मनको खत्म कर दूँगा। आप चलिए स्वयंवरमें। आपको वहाँ पहुँचते-पहुँचते खबर मिल जायगी।’

दोनों मित्र गले लगकर एक दूसरेसे विदा हुए। आमेर-नरेश अपने दलके साथ पहले आमेर जानेवाले थे, फिर समयसे लौटकर स्वयंवरमें सम्मिलित होनेका सोच चुके थे।

आमेर-नरेश महाराज जगतसिंह मनमें शत्रुसे बदला लेने और राजपुत्री किरणप्रभाको स्वयंवरमें जीतनेकी प्रबल भावना लेकर चल पड़े। उन्होंने सोचा—बूँदीपतिके स्वयंवर सभामें उपस्थित रहते, राजकुमारी हाथ नहीं लग सकती; यह ध्रुव सत्य है। बूँदी राज्यकी सीमा पार भी न हो पायी थी कि सन्ध्याकाल उपस्थित हो गया, एक पहाड़ी तालाबके किनारे पड़ाव डालनेका निश्चय हुआ। यात्रा स्थगित कर दी गयी। दलके अन्य लोगोंने सब प्रबन्ध कर दिया। सारी व्यवस्था ठीक हो जानेपर अपने चतुर्दिक सामंतोंसे घिरे महाराज जगतसिंह विराजमान थे। उसी समय प्रतिहारीने आकर निवेदन किया—‘महाराज! बूँदी-नरेशके छोटे भाई मौकमसिंह आपसे मिलनेके लिए उपस्थित हैं।’

जगतसिंह उठकर जो उस समय लेटे थे, बैठ गए और बोले—‘ससम्मान उपस्थित करो, उन्हें।’

‘जो आज्ञा महाराज!’ मस्तक झुकाकर प्रतिहारीने निवेदन किया।

मौकमसिंह प्रतिहारीके साथ आमेर-नरेशके समक्ष उपस्थित हुए, उन्होंने अभिवादन किया और आज्ञाकी प्रतिक्रियामें वे खड़े ही रह गए। महाराज जगतसिंहने उन्हें सम्मान प्रदान करते हुए कहा—‘आइए आपका स्वागत है, विराजिए। आपका आकस्मिक आगमन किस विशेष घटनाक्रमका सूचक है। कृपया जिज्ञासा शान्त करें।’

‘मेरे बड़े भाई महाराज छत्रसाल आखेटमें घायल हो गये हैं, जिसकी सूचना भारत सम्राट शाहजहाँको पहुँचाने अजमेर जा रहा

हैं, वहाँ मैंने श्रीमान्का पड़ाव देखा, सोचा यहीं मिल लूँ ।’

‘यह तो आपने बड़ा दुःखद समाचार उपस्थित किया ।’ आश्रय व्यक्त करते हुए जगतसिंहने कहा ।

‘हाँ श्रीमान् ! दुःखकी तो बात ही है । सबसे बड़े दुःखकी बात तो यह है कि जिस समय महाराज सिंहसे द्वन्द-युद्ध कर रहे थे, उसी समय उनके ऊपर बाणसे भी प्रहार किया गया, जो उनकी दाहिनी जाँघमें आ लगा है; इस कारण वे बहुत अधिक घायल हो गए हैं । घावकी प्राथमिक चिकित्सा तो कर दी गयी है ।’

‘किसका बाण था वह ? कुछ पता चला ? अब महाराजकी तबियत कैसी है ?’

‘हाँ महाराज ! खोजने पर पता लगा कि ईशरदा ठाकुरके सेवक फतेहखाँकी यह करतूत है । वे ही महाशय वहाँ तीरकमान लेकर घूमते पाए गए ।’

‘उसे बन्दी नहीं कर लिया गया ?’

‘इसकी आज्ञा नहीं प्रदानकी गयी थी । उसे केवल पहचाननेका ही आदेश था ।’

‘भूरसिंह ?’ पुकारा महाराजने ।

‘आज्ञा महाराज !’

‘आपने सुना ?’

‘जी हाँ महाराज !’

‘आपके सेवक फतेहखाँने ही महाराज छत्रसालको बाण चलाकर घायल किया है ।’

‘हाँ महाराज सुन तो रहे हैं; किन्तु इस बातका विश्वास नहीं हो रहा है कि उसने ऐसा किया होगा; क्योंकि महाराज बूँदी-नरेशसे उससे कोई शत्रुता तो है नहीं, वह उनके ऊपर क्यों प्रहार करने लगा । आज-

कल तो वह नवाब रुहेला शेरशाहके सम्पर्कमें है। वह यहाँ इस झगड़े-में कैसे आ फँसा ?’

‘हाँ, हाँ; श्रीमान् ठीक है। बाणपर रुहेला नवाब शेरशाहका नाम भी तो लिखा है। अतः अब भली-भाँति निश्चय हो गया कि उसीने छिपकर प्रहार किया है।’

‘ठीक है, इसकी जाँचकी जायगी।’

‘नहीं; श्रीमान् ! इसके लिए आपको कष्ट नहीं उठाना होगा। अपराधी मेरे संरक्षणमें सौंपा जाय। बूँदीमें इसकी जाँच होगी। यह बूँदी के राज्यकी सीमाकी घटना है और सभी साक्षीगण भी बूँदीके ही हैं।’

‘किन्तु नियमानुसार उसके बादका न्याय आमेरमें ही होना चाहिये। यदि आप हमारे महाराजपर विश्वास रखते हैं, तो यह न्याय आमेरमें ही होगा। फतेहखाँ बूँदी न भेजा जायगा।’

‘किन्तु यह तो श्रीमान्की ज्यादाती मानी जायगी और आप हमारे महाराजके बहुत बड़े मित्र हैं; अतः इस कार्यमें आपको उपेक्षा नहीं करनी चाहिए।’

‘मित्रताके ही कारण निराधार मामलेको महत्व प्रदानकर जाँचके अन्तर्गत लिया जायगा श्रीमन्त ! यदि आप इसपर भी ज्यादाती ही समझते हैं, तो यह निश्चय ही आपका कार्य अन्यायपूर्ण होगा।’ भूरसिंह बोला।

‘आश्चर्य है, फतेहखाँ ऐसा कार्य करनेमें संलग्न क्यों हो गया ?’

‘जहाँ तक मेरी कल्पना है महाराज ! वह तो यही है कि राजकुमारी किरणप्रभाको प्राप्त करनेवाले प्रतिद्वन्दियोंकी चेष्टासे यह कार्य हुआ है।’

‘किन्तु आपलोगोंका यह आक्षेप कितने ही मित्रोंको आपत्तिजनक हो सकता है, इसका भी ध्यान देना आवश्यक है।’

‘ऐसा क्यों महाराज ! यह तो जो महाराजके सच्चे मित्र होंगे, वे

कभी नहीं मानेंगे। हाँ, मित्र बनकर जो ईर्ष्या करते हों, उनकी बात मैं नहीं कर रहा हूँ।’

मैं तो इसलिए कह रहा हूँ कि कुमारी किरणप्रभाके लिए मैं भी प्रतिद्वन्दी हूँ और मेरे साथी हैं नवाब रहेला। हम दोनों ही व्यक्ति बूँदीनरेशके मित्र भी हैं। चाहे कोई भी उनका मित्र भले ही आपत्ति न करे, किन्तु मुझे आपके इस कथनसे अवश्य ही आपत्ति है।’

‘क्या आप लोग मित्र होकर महाराजको प्राणसंकट उत्पन्न कर सकते हैं? यह तो नहीं कहा जा सकता।’ मौकमसिंहने निवेदन किया।

‘और यह इसलिए भी शंकाका कारण नहीं हो सकता, क्योंकि बूँदीनरेश हमलोगोंमें किसीसे भी अधिक बलवान् भी नहीं है जो हम-लोगोंको यह छिपकर ऋणित कार्य करनेमें प्रवृष्ट होना पड़े, या जो ईर्ष्याका कारण हो सके। हमें पूर्ण विश्वास है; राजकुमारी किरणप्रभा की प्राप्तिमें हम जैसे प्रतिद्वन्दीको बूँदी-नरेश युद्धमें कदापि पराजित न कर सकेंगे, अतः इस सम्बन्धमें ईर्ष्या-द्वेष और छिपकर उनपर आघात करना-कराना इत्यादिक प्रश्न ही नहीं उठ सकते।’ बूँदी-नरेशकी उपेक्षा करते हुए जगतसिंह बोले।

जगतसिंहकी ध्वनिमें कटुता और उपेक्षाका अनुभव कर मौकमसिंह मर्माहत हो गए। उनसे और अधिक सहन न हुआ, वे बोले—‘राजन् ! बल और पुरुषार्थमें तो आप और नवाब रहेला दोनों ही व्यक्ति हमारे महाराजको अपनेसे अधिक मान चुके हैं।’

‘ऐसा किसने आपसे कह दिया? यह तो मैंने किसीसे भी नहीं कहा है और न तो कभी हमसे और बूँदी-नरेशसे द्वन्द-युद्ध ही हुआ और मुझे विश्वास भी है कि कभी बूँदी-नरेश युद्धमें हमें नहीं पराजित कर सकते। यदि कभी ऐसा अवसर मिलेगा भी, तो देखिएगा; हम उनसे पीछे नहीं रहेंगे।’

‘किसने कहा?’ ऐसा न कहें श्रीमान् ! यह उसी समयसे आप और

शेरशाहके पराभवकी बात जगत्-विख्यात् हो चुकी है—जिस समय आप दोनों व्यक्ति पठानी सरदारके छद्मवेशमें हमारे महाराजसे लड़ने आए थे और बहुत बुरी तरह पराजित हो भागकर प्राण बचाए थे। वेश छिपानेसे क्या लाभ ? आप लोग पहचान तो लिए ही गए थे।’

‘किन्तु यह मिथ्या प्रचारमात्र है। इसमें वास्तविकता कुछ भी नहीं है। भला हम लोग छद्मवेशमें बूंदी-नरेशसे क्यों लड़ने जाते ? न तो हमसे उनसे कोई लड़ाई है, न मनमुटाव। हमलोग किसलिए उनसे लड़ते। हाँ स्वयंवर सभाकी बात नहीं कही जायगी, जिसके विजयकी आकांक्षा हम भी करते हैं और आपके महाराज भी। उसमें अवश्य आपके महाराजसे युद्ध किया जायगा।’

‘मैं भूतकी बातें कर रहा हूँ महाराज ! और आप भविष्य की।’

इसीलिए जनतामें फैली अफवाहें दूर करनी हैं। रूपनगरमें जब बूंदीपतिका हमारे साथ युद्ध होगा, तब जनता स्वयं निर्णय दे देगी कि कौन पराजित हुआ और कौन विजयी।

‘यदि भयंकर आघातसे महाराज पीड़ित न होते, तो अवश्य ही स्वयंवरमें भाग लेते; किन्तु इस समय तो वे बहुत अधिक घायल हैं।’

‘युद्धसे बचनेके लिए अच्छा बहाना मिल गया।’ व्यंग्यमें हँसते हुए भूरसिंह बोला।

‘देखिए श्रीमान् ! समय आने पर हमलोग युद्धसे डिगते नहीं। हम विजय हो जाने पर ही पीछे पैर रखते हैं; अतः इस समय उत्तेजनापूर्ण आपका कथन अशोभनीय है। हम आपके समक्ष जिस कारण उपस्थित हैं। उसे प्रमुखता दीजिए।’

‘हाँ बोलिए।’

‘फतेहखाँकी मुझे सौंपिए। उसका न्याय होगा।’

‘किन्तु जब आप लोग हमलोगों पर विश्वास नहीं करते; तब हमलोग आपपर कैसे विश्वास करें ?’

‘विश्वासका प्रश्न ही नहीं है श्रीमान्! फतेहख़ाँ अपराधी है-बूँदीका ।’

‘और मैं कहता हूँ नहीं है ।’

‘यह आपका अन्याय है ।’

‘और यदि यही उत्तर हमारी ओरसे भी आपको दिया जाय तो ?’

‘इसके लिए श्रीमान् स्वतन्त्र हैं, कुछ भी उत्तर दे सकते हैं, किन्तु वास्तवमें यदि बूँदी तलवारमें शक्ति होगी; तो अवश्य ही फतेहख़ाँका न्याय होगा । आज चाहे भले ही न हो, किन्तु समय पाकर अवश्य ही हो जायगा ।’

‘ठीक है, आपके ऊपर भी कोई प्रतिबन्ध नहीं है; अतः जो कुछ भी कहना चाहते हों, कहें ।’

‘तो फतेहख़ाँके संबंधमें आपकी ओरसे जो कहना हो, उसे मैं सम्राटके समक्ष प्रकट कर दूँगा ।’

‘यह सबसे उत्तम बात होगी कि फतेहख़ाँका न्याय सम्राटके द्वारा ही हो । जब आपको हमारा विश्वास नहीं है और हमें आपका विश्वास नहीं, तब निष्पक्ष एवं न्यायायिक जाँच सम्राटके द्वारा ही संभव है और वह दोनों पक्षोंको मान्य भी होगा ।’ अमेर-नरेश बोले ।

‘ठीक है यही सही । इसे भी मैं माननेके लिए तैयार हूँ । यों तो मैंने श्रीमान्के विचारोंका अध्ययन करनेकी दृष्टिसे यह सब कहा था ।’

‘किन्तु आपको इस प्रकार उत्तेजनापूर्ण वातावरण नहीं बना डालना चाहिए, जिससे अकारण ही विषमता पैदा हो जाय ।’ कुछ विनम्र होते हुए जगतसिंह बोले ।

‘मैंने तो कोई उत्तेजनापूर्ण बात नहीं कही, किन्तु आपके भूरसिंहने स्वतः शान्त वातावरणको विषाक्त बना डालनेका प्रयत्न किया है !’

‘आप यदि ऐसी बात करते हैं तो श्रीमान् ! निश्चय ही अपनी दबा कीजिए ।’ भूरसिंहने सुधरते हुए वातावरणमें पुनः चिनगारी डालते हुए कहा ।

‘देखिए महाराज ! यह अशिष्टता है या नहीं ?’ अपनी दवा करूँ मैं पागल हूँ या भूरसिंह ? कभी किसी वीरसे पाला नहीं पड़ा है, नहीं तो सारी उद्दण्डता दूर हो गयी होती ।’ ‘चाहे और किसी भी वीरसे कभी पाला न भी पड़ा हो; किन्तु आज तो पड़ ही गया है, जो कुछ भी पराक्रम प्रदर्शित करना हो, आकर कर सकते हैं ।’ भूरसिंह पुनः बोला ।

‘ठीक है उठाइए तलवार मैं प्रस्तुत हूँ ।’

भूरसिंह भी तलवार लेकर बोला —‘आइए ! आज वीरताका पाठ आपको पढ़ा ही दूँ । वीरता-वीरता चिल्लाते रहनेसे कोई लाभ नहीं ।

‘अब अधिक बोलनेका काम नहीं; वीरता प्रदर्शनका अवसर है । चलिए मैं तैयार हूँ ।’

दोनों व्यक्ति हाथमें नग्न तलवार ले-लेकर खड़े हो गए । महाराज जगतसिंहने उन्हें शान्त किया । वे बोले ‘इस समय आप लोग शान्त हो जायें । यदि इस प्रकार इच्छा ही है, तो स्वयंवर भूमिमें इसका प्रदर्शन अवश्य करें ।’

दोनों शान्त हो गए । मौकमसिंहने कहा—‘ठीक है, मुझे स्वीकार है । मैं वहीं सम्राटके सामने अपना पुरुषार्थ प्रकट करूँगा और यह तलवार बाजीमें रखता हूँ ।’

‘मुझे आपकी बातें स्वीकार हैं । मैं भी यह घोड़ा बाजीमें रखता हूँ ।’ भूरसिंह बोला ।

‘किन्तु तलवारसे घोड़ा अधिक मूल्यवान् वस्तु है ।’

‘यह श्रीमान् ! आपकी ही दृष्टिमें ऐसा है । तलवारको हम लोग अपनी समग्र सम्पत्तिसे भी अधिक कीमती समझते हैं ।’

‘ठीक है । आपकी तलवार ही हमारे पास धरोहरमें रखी रहेगी ।’ आमेर-नरेश बोले ।

इसके पश्चात् मौकमसिंहने वहाँसे पथारोहण किया और बूँदीपति महाराज छत्रसालकी चिकित्सामें दत्तचित्त जाकर हुए ।

१२

आइए आमात्यश्रेष्ठ ! विराजिए, विराजिए । कहाँ तक पहुँचे आप ?' महाराज रूपसिंहने अपने वयोवृद्ध मन्त्री पारीखको आसनकी ओर संकेत करते हुए कहा ।

'अभी तो कुछ भी नहीं हो पाया महाराज !' महाराजको अभिवादन कर बैठते हुए मन्त्री महोदयने गम्भीरवाणीमें निवेदन किया ।

'इसीलिए तो पूछ रहा हूँ—'कहाँ तक कार्य पूरा हुआ ? क्योंकि अब तो अत्यन्त निकट समय आ गया है ।'

'दो दल बारी-बारीसे समरांगण तैयार करनेमें संलग्न हैं, महाराज ! जब मैंने देखा, थोड़े समयकी अवधिमें ही इसे पूर्ण करा देना है, तब कर्मचारियोंकी संख्या दूनी कर दी गयी है ।'

'तब भी कबतक वह तैयार हो जायगा ?'

'यही कल-परसोंमें सम्भवतः पूर्ण हो जानेकी आशा है ।'

'और राज-भवनके भीतरी भागकी तैयारी ?'

'वह भी ठीक हो रही है; कल-परसों तक वह भी ठीक-ठाक हो जायगा ।'

'पहले तो आपने ऐसा उत्तर दिया कि घबराहट पैदा हो गयी । मैंने तो समझा अभी कुछ भी कार्य नहीं हुआ है; किन्तु आपने तो सारा कार्य समाप्त-सा कर लिया है ।'

'हो सकता है महाराज ! किन्तु जब तक कार्य पूरा न हो जाय, तब तक उसके संबंधमें क्या कहा जा सकता है ?' गम्भीर मुद्रामें मन्त्री ने निवेदन किया ।

'और अतिथियोंके आवासका क्या समाचार है ?'

'वह तो ठीक ही है । सम्राट और साम्राज्ञीके आवासके प्रबन्धमें अभी कार्य कुछ बाकी है, संभवतः कल वह भी ठीक हो जायगा ।'

महाराज रूपनगर मन्त्रीकी बातें सुनकर निश्चिन्त हुए। सहसा उन्हें बूँदी-नरेश महाराज छत्रसालका स्मरण हो आया। उन्होंने पूछा—‘महाराजका कुछ समाचार फिर नहीं प्राप्त हुआ। पता नहीं, उस दिनके पश्चात् अब कैसा उनका स्वास्थ्य है।’

‘मुझे तो बड़ी चिन्ता उत्पन्न हो गयी है। सिंहके आखेटमें अत्यन्त घायल हो जानेसे महाराज सम्भवतः स्वयंवरमें भाग न ले सकेंगे।’

‘तब तो यह महान् अनर्थ है। स्वयंवर टाला भी नहीं जा सकता। सभी आमंत्रित अतिथि अब उपस्थित होने ही वाले हैं; ऐसी दशामें इसकी तिथि कैसे टाली जा सकती है?’

‘सबसे बड़ी बात तो इस संबंधमें यही है कि स्वयंवरकी तिथि सम्राट द्वारा निश्चित की गयी है; वे इस समारोहमें सम्मिलित होनेके लिए साम्राज्ञीके साथ अजमेरमें निवास कर रहे हैं और शीघ्र ही यहाँ भी उपस्थित हो जायेंगे।’

‘यही तो कालक्रमकी विशेषता है महाराज ! जो मानवके कार्य और अधिकार क्षेत्रके बाहरकी वस्तु है।’

‘विचारे महाराजने हमारे लिए कितना बड़ा त्याग किया ? राज-पुरुषोंसे शत्रुता मोल ली; मेरा उद्धार किया और उसके उपलक्षमें मैंने उनका कुछ भी नहीं किया।’ सामने एकटक देखते हुए महाराजने कहा।

‘ऐसी कल्पना नहीं की गयी थी, कि ऐसे उपयुक्त अवसरपर महाराज अस्वस्थ हो जायेंगे। ईश्वरकी इच्छा। अच्छा मुझे आज्ञा प्रदान करें देव ! मैं चलकर एक बार सभी कार्योंका निरीक्षण कर लेना चाहता हूँ। बिना स्वयं उपस्थित रहे, अपने मनका काम नहीं हो पाता।’ मंत्रीने निवेदन किया।

अभिवादन कर मंत्री महोदय वहाँसे उठकर चले गए। जबसे कुमारी किरणप्रभा ने महाराज छत्रसालको आखेटमें घायल होनेका संवाद पाया है, तभीसे वह अत्यन्त दुःखी है। उसकी आशापर पानी फिर गया।

वैसे तो उसे कुछ आशा थी भी; किन्तु जब उसने यह सुना कि महाराजकी दशा अत्यन्त चिन्ताजनक हो गयी है और वे स्वयंवर समारोहमें सम्मिलित नहीं हो सकते, तब से उसकी व्यथा और भी बढ़ गयी। वह अपने कक्षमें टेंगे महाराज छत्रसालके चित्रकी ओर देखकर अपने शरीर की ओर देखने और सोचने लगी—‘अब तक इस शरीरको मैंने महाराजको ही समर्पितकर देनेका व्रत धारण किया था; किन्तु स्वयंवरमें उनके न आनेपर पता नहीं इस शरीरका स्पर्श कौन करेगा? इसकी कल्पनाकर उसे रोमांच हो उठा। उसने निश्चय किया—अवश्य ही इस शरीरका मोह त्यागकर मुझे अपना प्रण पूर्ण करना होगा। जीवित रहते इसका स्पर्श दूसरा कोई भी नहीं कर सकता। यदि मेरा विवाह किसी दूसरे व्यक्तिके साथ हुआ, तो निश्चय ही मुझे प्राण त्याग करना होगा।’ सोचते-विचारते राजकुमारी खिन्न हो उठी।

सारा प्रबन्ध ठीक हो गया। धीरे-धीरे सभी आमंत्रित व्यक्ति रूपनगरमें उपस्थित होने लगे। उनके आवासका उत्तम प्रबन्ध था ही। यथायोग्य आवास-स्थानोंपर सबको ठिकाया जाने लगा। सभी आमंत्रित व्यक्ति उपस्थित हो चुके; किन्तु अभीतक सम्राट और साम्राज्ञीका आगमन नहीं हुआ। उनकी बड़ी आतुरतासे प्रतीक्षा होने लगी। रूपनगरसे अजमेर तक समाचार पहुँचानेवाले व्यक्ति नियुक्त कर दिए गए थे। संध्या होते-होते पता चला—‘सम्राट अजमेरसे चल चुके हैं, वे रूपनगरके निकट पहुँचने ही वाले हैं।’

महाराज रूपनगर सम्राटके स्वागतके लिए बहुतसे इष्ट-मित्र और सम्भ्रान्त व्यक्तियोंको साथ लेकर नगरके बाहर चले गए। जब सभी नागरिकोंको इसकी सूचना मिली, तब सम्राट और साम्राज्ञीके दर्शनोंके लिए समुद्रकी भाँति वे उमड़ पड़े। सबकी दृष्टि मार्गपर—दूरक्षितिज तक पड़ी थी। आँखें फाड़-फाड़कर दूर, बहुत दूर तक सब देखनेका प्रयत्न कर रहे थे। इस प्रकार सम्राटकी प्रतीक्षा करते-करते जनता

ऊब गयी, किन्तु उनके प्रस्थानका निश्चय सुनकर जनताकी उत्कण्ठा बढ़ती जा रही थी ।

कुछ देरमें सम्राटका वाहन दिखायी पड़ा । नागरिक सम्राट और साम्राज्ञीके जय-जयकारके निनादसे वहाँका वातावरण उनके स्वागतके उपयुक्त बनाने लगे । थोड़ी देरमें सम्राट उस विशाल समूहमें प्रविष्ट हुए । जनताजनार्दनको हाथ जोड़-जोड़कर सम्राट प्रत्याभिवादन करने लगे । जनता भी सम्राटके प्रति अपनी भक्ति प्रदर्शितकर उनका सम्मान करने लगी । यथोचित आदर सत्कार और सम्मानके साथ सभी उपस्थित प्रतिष्ठित व्यक्तियों और सम्राटका मिलन हुआ । उन्हें साम्राज्ञी सहित सबसे उत्तम आवासमें ठहराया गया ।

दूसरे दिन स्वयंवरका कार्यक्रम प्रारंभ होनेवाला है, यह समझकर प्रबन्धकोंने फिर-फिरकर सारी व्यवस्थाओंका निरीक्षण किया । किसी को कोई त्रुटि नहीं दिखाई पड़ी । नगरके बाहर एक विशाल समरांगण के चतुर्दिक् डेरे, तम्बू आदि तनवाकर समारोहकी व्यवस्थाकी गयी है । बड़े राज्यके अधिनायक, शूरवीर सामन्त एवं सम्भ्रान्त व्यक्ति अपने-अपने दलके साथ निमंत्रण पाकर उपस्थित हो गए हैं । रूपनगरके नागरिकोंके लिए सबसे अलग समारोह देखनेका प्रबन्ध है । इस समारोहमें जहाँ तक संभव है, सभी रजवाड़े सम्मिलित हो गए हैं, कुमारी किरण-प्रभाके गुण एवं रूपमें बड़ा आकर्षण सुन-सुनकर समारोहमें सभी लोगों ने भाग लेनेका निश्चय किया था । यदि कोई नहीं उपस्थित हुआ है, तो वह केवल महाराज छत्रसाल हैं, जो सिंह आखेटमें स्वयं आखेट हो गए । उन्हें मारी घाव हो गया था, इस असमर्थतासे वे समारोहमें भाग नहीं ले सके हैं । अन्य राजाओंके डेरे, तम्बू आदि व्यवस्थित ढंगसे हैं; उनके अपने-अपने ध्वज फहर रहे हैं, उनके अपने-अपने सँतरी पहरा दे रहे हैं ।

स्वयंवर-युद्धमें भाग लेनेवाले सभी आगन्तुक यथास्थान बैठ गए । दर्शकोंके सामने चारों ओरसे तारकी जाली लगी है, जिससे कोई भी बाहरी

व्यक्ति समरांगणमें वीरोंके समीप न पहुँच पावे । मजबूतीकी दृष्टिसे थोड़ी-थोड़ी दूरी पर लौहकी दृढ़ परिघे लगा दी गयी हैं, जिससे जाल और धेरे काफी सुरक्षित हैं । सम्राट द्वारा कुछ दृढ़ चरित्र वयोवृद्ध व्यक्तियोंकी एक समिति नियुक्त कर दी गयी थी, जिसके अध्यक्ष स्वयं सम्राट थे, इसी समितिके द्वारा जय-पराजयका निर्णय होगा । चार चौड़े द्वारोंसे समरांगण सुशोभित है, जिनपर सशस्त्र सैनिकोंका कड़ा पहरा है । चारों द्वारोंके ऊपर अत्यन्त सुन्दर एवं आरामदेह स्थान बने हैं, जहाँ भारत-साम्राज्ञी अपने पुत्र-पुत्रियों और रूपनगरके राज्यपरिवारकी रानियों, महिलाओं एवं पुत्रोंके साथ विराजमान होंगी । इस प्रकार समुचितरूपसे समरांगणमें बहुत उत्तम प्रबन्ध है ।

दर्शकगण, भाग लेनेवाले योद्धागण सभी आकर अपने उपयुक्त स्थानोंपर बैठकर दृश्य देखनेकी प्रतीक्षा करने लगे; किन्तु अभी तक रूपनगरके राजपरिवार एवं भारत-सम्राटके आगमन नहीं हुए । इसीसे कार्यक्रम अभी वन्द है । देखते-देखते महाराज रूपनगर अपने राज्यपरिवार एवं प्रमुख संबंधियोंके साथ समरांगणमें उपस्थित हुए । जनतामें हर्ष प्रकट हुए उनके जय-जयकारका उच्चारणकर उनका सम्मान किया । सब लोग अपने-अपने स्थानीपर बैठने ही वाले थे, कि उसी समय उच्चाधिकारियों, बड़े-बड़े महान् व्यक्तियोंसे घिरे सतर्क संरक्षकोंके मध्य भारत-सम्राट; साम्राज्ञी, शाहजादियों एवं शाहजादोंके साथ समरांगणमें प्रविष्ट हुए । महाराज रूपनगरने कुछ सभ्रान्त व्यक्तियोंके साथ आगे बढ़कर उनका स्वागत किया और उन्हें सर्वश्रेष्ठ आसन पर बैठाकर अन्य सभी लोगोंको यथास्थान भेजवाकर बैठाया । वहाँ पर उपस्थित जनसमुदायने खड़े होकर सम्राटको सम्मान प्रदर्शित करते हुए अभिवादन किया और जय-जयकारकी ध्वनिसे वायुमण्डलको गुँजा दिया ।

चतुर्दिक दृष्टि डालकर सम्राटने बैठे-बैठे समरांगणका निरीक्षण किया । महाराज रूपनगर अपने प्रमुख कर्मचारियों एवं अधिकारियोंके

साथ सम्राट शाहजहाँके पार्श्वमें विराजमान हुए । महातेजस्वी भारत-सम्राट शाहजहाँकी उपस्थितिमें उनके तेजसे उपस्थित विशाल जन-समूहमें स्तब्धता छा गयी । सम्राटने आज्ञा प्रदान की । कार्यवाही प्रारम्भ हुई । समरांगणके सर्वोच्च अधिकारीने घोषणाकी । सबका ध्यान आकृष्ट हो गया ।

भारत-सम्राटके समक्ष आज 'महाराज रूपनगरकी दोनों राजकुमारियों किरणप्रभा और ज्योतिप्रभा—के स्वयंवर समारोहमें उपस्थित एवं आमंत्रित व्यक्तियोंका ध्यान आकृष्ट किया जाता है, जिससे सभी लोग सावधानीसे निश्चितकी गयी घोषणा सुन सके । निश्चयके अनुसार सबसे सूचनार्थ निवेदन है—महाराज रूपनगरकी ओरसे दो-दो घुड़सवार योद्धा युद्ध-कामनासे समरांगणमें उतरेंगे, जिनसे स्वयंवर समारोहमें आमंत्रित राजकुमारियोंसे विवाह करनेकी कामनावाले योद्धा, अपना-अपना पराक्रम प्रदर्शित करनेके लिए केवल दो-दो अश्वारोही ही एक समयमें तलवारोंसे युद्ध करते जायेंगे । युद्धमें विजय-कामना रखनेवाला प्रत्येक योद्धा एवं अन्य योद्धा अपने प्रतिद्वंद्वीको तलवार युद्धमें पराजित करते हुए घोड़ेसे गिरानेका प्रयत्न करेगा । किसी योद्धाका मरण अथवा घायल हो जाना उसकी हार मानी जायगी । किसी भी कारणसे घोड़ेसे गिरा व्यक्ति पराजित माना जायगा और वह पुनः स्वयंवर-युद्धमें भाग न ले सकेगा । पराजित योद्धाका स्थान यदि वह चुनौती देनेवालोंमेंसे है, तो विजेता ग्रहण कर लेगा तथा दूसरे नए योद्धा आकर उसकी चुनौती स्वीकारकर उससे युद्ध करेंगे । युद्धका यही क्रम चलता रहेगा । अन्तमें जब युद्ध करते-करते केवल दो ही विजयी योद्धा रहेंगे; तब वे दोनों भी आपसमें युद्ध करते हुए पराक्रम प्रदर्शितकर विजयी वीर प्रथम एवं पराजित वीर द्वितीय श्रेणी प्राप्त करेंगे । इस प्रकार प्रथम विजयी वीर जेष्ठ राजकुमारी किरणप्रभा एवं द्वितीय पराजित वीर छोटी राजकुमारी ज्योतिप्रभा के साथ विवाह करनेके योग्य समझा जायगा । यदि इस प्रकार युद्धमें

महाराज रूपनगरके प्रतिनिधि वीरोंकी ही विजय होती है, तो वे राज-कुमारियोंके साथ विवाह करनेके अधिकारी नहीं होंगे। ऐसी दशामें महाराज रूपनगरको पूर्ण अधिकार होगा—कि वे स्वेच्छासे चाहे जिस किसी भी व्यक्तिसे राजकुमारियोंका विवाह करें, किसी भी व्यक्तिको इसमें आपत्ति करनेका अधिकार कदापि न होगा।' घोषणाकर चुकनेपर अधिकारी अपने स्थानपर बैठ गया।

महाराज रूपनगरके दो प्रतिनिधि वीर समरांगणमें युद्ध-कामनासे प्रेरित आ पहुँचे। रणभेरी बजने लगी। चुनौती स्वीकार करनेवाले विजयाभिलाषी दो रणकुशल वीर सम्राट और महाराज रूपनगरको बड़ी विनम्रतासे अभिवादनकर प्रतिद्वन्दीके समक्ष उपस्थित हो गए। युद्ध प्रारम्भ हो गया। कुछ देरमें महाराजका एक प्रतिनिधि पराजित हो गया और एक विजयाभिलाषी वीर भी। दूसरे-दूसरे वीरोंका इस प्रकार समरांगणमें उतरना, पराजित होना, मरना और जीतना बराबर क्रम-क्रमसे होता रहा। पराजित अथवा मरे हुए वीरोंको समर भूमिसे हटाकर दूसरे वीरोंको अवसर प्रदान किया जाने लगा। इस प्रकार सैकड़ों वीरोंका भाग्य देखा जा चुका। कितने ही वीर चुनौती स्वीकारकर चुनौतीदाता हो गए।

समर-भूमिका दृश्य भयंकर था। कितने ही निर्बल हृदय व्यक्ति वहाँसे उठकर चले गए, किंतु फिर भी विजयाभिलाषी वीरोंका, जिनका युद्ध अभी तक नहीं हो सका था, रणोत्साह बढ़ता ही जा रहा था। युद्ध-भूमि कितनोंके लिए भयावह एवं गंभीर हो गयी और कितनोंके लिए अत्यन्त रोचक। युद्धकी विकरालता देखकर कितने ही वीरोंका रणोत्साह भंग हो गया। विजयाभिलाषी कितने ही बड़े-बड़े योद्धा युद्धकी कामना त्यागकर अब केवल दर्शक ही बनकर रह गए। धीरे-धीरे युद्ध करनेवाले वीरोंकी संख्या कम होने लगी। जल्दी किसीका साहस युद्ध करनेका नहीं हो पा रहा था; कुछ देरके पश्चात् समर-भूमि

में एक योद्धा निर्भय खड़ा हो गया, उसका कोई भी प्रतिद्वन्दी नहीं दिखाई पड़ा। जिसे रण-भूमिमें इस प्रकार खड़े देख एक श्यामवर्णके घोड़ेपर चढ़ा विजयाभिलाषी एक वीर उसके समक्ष उपस्थित हो गया। सबके देखते हुए श्यामवर्ण घोड़ावाले योद्धाने अपने प्रतिद्वन्दीको क्षण-मात्रमें पराजित कर दिया। उससे युद्धके लिए कितने ही वीर समर-भूमिमें आए; किंतु वह सबको पराजित करता चला गया, कुछ ही देरमें वह प्रथम कोटिके वीर श्रेणीमें आ गया। उसका रण-कौशल देखकर उपस्थित जन-समुदायने हर्ष व्यक्त किया। उस योद्धाने अपना ऐसा अभूतपूर्व पराक्रम प्रदर्शित किया, कि कोई भी वीर उसे पराजित न कर सका। उससे लड़ने जो कोई भी योद्धा उपस्थित होता, उसे बहुत शीघ्र पराजित होना पड़ता। अत्यन्त अल्प समयमें ही उसने सैकड़ों वीरोंको युद्ध-भूमिसे भगा दिया। इसी प्रकारका एक दूसरा योद्धा समर-भूमिमें उज्ज्वल वर्णके घोड़े पर चढ़कर श्यामवर्ण, वाले वीरको छोड़ दूसरे चुनौतीवाला वीरसे युद्ध करने लगा। वह भी अपने प्रतिद्वन्दियोंको पराजित करने लगा। इसने भी अपने पराक्रम-प्रदर्शनसे जन-समूहको मुग्ध कर लिया।

अद्भुतकर्मा इन दोनों अद्वितीय वीरोंने युद्ध-भूमिमें अपना जो पराक्रम प्रदर्शित किया, उसे देखकर अन्य सभी उन वीरोंका रणोत्साह भंग हो गया, जो अभी तक युद्ध और विजयकी मनमें कामना लिए अवसरकी प्रतीक्षामें बैठे थे। महापराक्रमी वीर नवाब रुहेला भी अब श्यामवर्ण घोड़ेवाले वीरसे घायल होकर पराजित हो गया; तब उससे युद्ध करने दूसरा और कौन वीर आता? जब उपस्थित जन-समुदायसे कोई भी वीर युद्धके लिए न तैयार हुआ, तब पूर्व निश्चयानुसार उपयुक्त दोनों वीर अन्तिम विजयी योद्धा घोषित कर दिए गए।

अन्तमें इन दोनों वीरोंका हृदय-दहला देनेवाला युद्ध प्रारंभ हुआ। एक दूसरेपर प्रहार करने लगे, अपनी रक्षा करते हुए वे दोनों अपने

प्रतिद्वंदीको पराजित करनेकी चेष्टा करने लगे। दोनों वीर युद्ध करते-करते रणोत्साहके मदमें चूरण हो गए। युद्ध भयंकर और गम्भीर हो गया। जन-समूह मंत्रमुग्ध होकर युद्ध देखने लगा। सबकी दृष्टि युद्धपर स्थिर हो गयी। युद्ध चलता रहा। अन्तमें दोनों वीरोंमें श्वेतवर्ण घोड़ेवाले वीरको जन समूहने युद्ध भूमिमें गिरते देखा। वह वीर श्यामवर्ण घोड़े के वीरका आवेग सहन करनेमें शिथिल हो गया और देखते-देखते उस अद्वितीय वीरके आघातसे धराशायी हो गया। निश्चयके अनुसार श्याम-वर्ण घोड़े वाले वीरको प्रथम एवं श्वेतवर्ण घोड़ेवाले वीरको द्वितीय श्रेणीमें विजयी घोषित किया गया। वे दोनों वीर आदरपूर्वक सम्राट और महाराज रूपनगरके निकट उपस्थित किए गए। समग्र जन-समूह विजयी उन दोनों वीरोंका परिचय जाननेके लिए उत्सुक हो उठा।

दोनों व्यक्तियोंका परिचय जाननेके लिये आवरण हटानेका आदेश हुआ। राजकुमारियाँ अपने-अपने भाग्यका निर्णय सुननेके लिए अत्यंत उत्सुक हो उठीं। कुमारी किरणप्रभाकी मानसिक दशा अत्यन्त शोचनीय हो गयी। जब उसे पता चला कि समर-भूमिमें स्वयम्बर समारोह में महाराज छत्रसाल सम्मिलित नहीं हुए। उन्हें सिंह आखेटमें भयंकर धाव हो जानेमें चाहते हुये भी स्वयम्बरमें आनेका अवसर नहीं मिल सका; तब उसके प्राण व्याकुल हो गए। अतः अत्यन्त खिन्न मनसे वह युद्ध देखती रही और रुक-रुककर सोचती रही — 'अब क्या होगा ? अब क्या होगा ? हे बूंदीपति महाराज ! आप दैवयोगसे भले ही स्वयम्बर समारोहमें नहीं सम्मिलित हो सके; किन्तु मैं अपना प्रण पूर्ण करूँगी। मेरे शरीरका आपको छोड़कर अन्य कोई भी स्पर्श नहीं कर सकता। जब आप रोग-शय्यापर पड़े हैं और यहाँ उपस्थित होनेमें अवसर ही नहीं प्राप्त कर सके, तब निश्चय ही मैं तब तक अपना प्राण रखूँगी; जब तक स्वस्थ होकर आप अपने प्रतिद्वन्दीको युद्धमें पराजित नहीं कर देते। जब तक आपका युद्ध इस प्रथम विजेतासे नहीं हो जाता,

तब तक मैं अपना विवाह किसी और से न होने दूँगी। यदि आप युद्ध-के लिए नहीं आए, तो मैं अवश्य ही विष खाकर प्राण त्याग कर दूँगी। मेरा विवाह यदि होगा, तो आपसे ही होगा; मेरा यह ध्रुव निश्चय है।'

दोनों वीरोंका आवरण हटा। पहचान हुई। प्रथम विजेता उज्ज्वल दाढ़ी मूँछ और बाणोंवाला एक संन्यासी निकला, जिसकी अवस्था पचास वर्षसे अधिक प्रतीत हो रही थी। महाराज रूपनगर, उनकी महारानी और साम्राज्ञीका मन उदास हो गया। दूसरा व्यक्ति जो युद्धमें द्वितीय श्रेणीका वीर था, वह महाराज जगतसिंह निकले। जनताने हर्ष व्यक्त किया।

योगी युद्धसे अत्यन्त क्लान्त हो जानेके कारण वहीं सम्राटके निकट मूर्च्छित होकर गिर पड़ा। महाराज जगतसिंह यद्यपि द्वितीय श्रेणीके विजयी वीर घोषित हुए थे, किन्तु वे बड़े दुःखी हुए। उनकी वास्तविक इच्छा तो कुमारी किरणप्रभासे विवाह करनेकी थी, जिसके गुणोंकी प्रशंसा सुनते वे थकते नहीं थे और रातों-दिन जिसकी रूप कल्पना उनके चित्तपर चढ़ी थी।

सम्राटके समक्ष उठकर खड़े हो, नवाब-रहेलाने निवेदन किया—
'जहाँपनाह ! बात बड़ी नाजायज हो गयी।'

'कौन-सी बात ?'

'यही खुदावन्द कि एक जयीफ़्र जोगीने राजकुमारियोंसे शादी करने के लिए स्वयम्बरमें जंग किया। हो सकता है, इसने किसी जादूका सहारा लेकर जंग किया हो। अगर कोई जोगी होता, तो उसे भजन-भाव करना चाहिए; खुदाकी इबादत करनी चाहिए कि राजकुमारियोंसे शादी करनेके चक्करमें आकर फँसता ? इसने जादूके सहारे जंगमें बहुत से बहादुरोंको मारकर कुसूर किया है। इसका फैसला होना चाहिए।' शेरशाहने सम्राटका ध्यान योगीके ऊपर, छल, कपट और अनाधिकार चेष्टाका आरोप लगाकर आकृष्ट किया।

सम्राट विचार करने लगे । जगतसिंहको जैसे कोई खोयी हुई वस्तु प्राप्त हो गयी । हर्षसे वे फूल गए । उन्होंने अपनी विजयको प्रमुखता प्रदान करनेकी दृष्टिसे सम्राटसे निवेदन किया—‘ठीक ही कह रहे हैं, नवाब रहेला हुजूर ! योगीने महान् अपराध किया है । यद्यपि इसने मुझे युद्धमें अवश्य ही पराजित किया है; किन्तु जब इसने जादूका सहारा लेकर मुझे हराया है, तब इसकी जीत ही कैसे मानी जा सकती है । घोषणामें शारीरिक बलसे युद्ध करनेका आदेश था, जादू चलानेका नहीं । इसपर जरूर ही सम्राटको विचारकर संन्यासीको दण्ड देना चाहिए ।’

सम्राट मौन थे । सोच रहे थे ।

आमेर-नरेश जगतसिंह फिर बोला—‘हुजूर ! इस बातको खुद देख रहे हैं । यदि इसने जादूसे काम न लिया होता, तो युद्ध समाप्त होनेपर भूच्छित होकर तब गिरा है, जब इसके जादूका असर खतम हो गया । जब तक जादूका असर था, तबतक यह खूब लड़ता रहा और न तो थका, न बेहोश हुआ । मैं सोचता हूँ, इस संन्यासीके आचरणसे रूपनगरके राज-परिवारके सम्मानको अवश्य ही ठेस पहुँची होगी । कोई नवयुवक संन्यासी भी होता, तब भी विवाह मान लिया जाता; किन्तु इस वृद्धके साथ राजकुमारीका विवाह कर जीवन नहीं खराब करना है ।’

महाराज जगतसिंहकी एक-एक बातपर सम्राटने बड़ा ध्यान दिया और उनकी बारीक बातोंपर विचार किया । उन्होंने कहा—‘आपका कथन ठीक है महाराज ! जोगीको हुक्म दिया जाता है कि वह गिरफ्तार कर लिया जाय, उसकी दवादारू की जाय, जब वह तन्दुरुस्त हो जाय, तो रूपनगरकी अदालतमें उसके कुसूरोपर फैसला किया जाय । कुसूर साबित हो जानेपर उसको सजा दी जाय !’ उस दिनके सारे कार्यक्रमको समाप्त होनेका आदेश देकर सम्राट उठ खड़े हुए और साम्राज्ञी तथा शाहजादियों, शाहजादोंके साथ अपने शिविरकी ओर चल पड़े ।

योगी बन्दी बना लिया गया और उसकी समुचित चिकित्साका प्रबन्ध किया गया ।



१३

सम्राट द्वारा योगीकी विजय अस्वीकार घोषित किए जानेपर कुमारी-किरणप्रभा एवं महाराज जगतसिंह दोनोंको अपार हर्ष हुआ । कुमारी किरणप्रभाने सोचा—‘अच्छा हुआ, किसी प्रकार यह समस्या कुछ समयके लिए टली । शुभ लक्षण प्रतीत हो रहे हैं, जबतक योगीका फैसला होगा; तबतक संभवतः महाराज बूंदी-नरेश भी स्वस्थ हो जायेंगे । उन्हींके लिए हो सकता है यह विघ्न उपस्थित हुआ हो । दैवयोग बड़ा प्रबल होता है, कितने ही कार्य होते-होते रुक जाते हैं और कितने ही असम्भव कार्य पूर्ण हो जाते हैं ।’ कुमारी किरणप्रभाने सन्तोषकी साँस ली ।

महाराज जगतसिंहने सोचा—‘योगीका नम्वर कट जानेसे प्रथम विजयी वीर मैं स्वतः प्रमाणित हो गया । निश्चय ही राजकुमारी मेरे ही भाग्यमें बदी थी । शेरशाहकी बुद्धि भी बड़ी तीव्र है । जिस ओर न तो मेरा ध्यान गया और न कभी जाता ही, उसने सोच लिया और भारत-सम्राट तककी विचारधाराको मोड़ खिला दिया । शाबाश धन्य हो नवाब ! तुम्हारी बुद्धि बेजोड़ है । अब निश्चय ही मुझे किरणप्रभा मिल जायगी; कोई रोक नहीं सकता ।’ अमेर-नरेश जगतसिंहको आशा बंध गयी । विश्राम कक्षमें लेटे ही लेटे वे चुपचाप सोचते हुए बोले—‘भूरसिंह मेरा तो सब प्रयत्न ही व्यर्थ हो गया था किन्तु ‘.....’

‘क्या कहूँ महाराज ! मैं तो चकित रह गया । पता नहीं कहाँसे वह दुष्ट आकर टपक पड़ा ।’

‘किन्तु नवाब शेरशाह रूहेला भी कितनी बारीक बात पकड़ता है । मैंने तो उसकी बुद्धिका लोहा मान लिया ।’

‘ठीक कहते हैं महाराज ! ऐसी ही बात है । भला कोई सोच सकता था ? योगी तो जीत ही चुका था, किन्तु नवाबने ऐसी बुद्धि भिड़ा दी, जिससे उसकी जीतके सभी महत्व ही समाप्त हो गए । अब तो नियमानुसार महाराज ही प्रथम श्रेणीके विजेता हुए माने जायेंगे ।’ भूरसिंहने निवेदन किया ।

‘देखो; इसका निर्णय तो सम्राटके समक्ष ही होगा । वे देखें क्या फैसला करते हैं ?’

‘मैंने तो श्रीमान् ! सुना है—कुमारी किरणप्रभा आपपर आसक्त है । संन्यासीको बन्दी बना लिये जानेपर उसे बड़ी प्रसन्नता है ।’ भूरसिंह बोले ।

‘हो सकता है ।’ गंभीरतापूर्वक जगतसिंह बोलकर मन-ही-मन किरणप्रभाके प्रति आसक्त हो गए ।

‘महाराज ! आपके दर्शनोंके लिए बूँदी-सामन्त मौकमसिंह द्वारपर उपस्थित हैं, संभवतः श्रीमान् उन्हें जानते होंगे ।’ प्रतिहारिने निवेदन किया ।

‘हाँ, हाँ महाराज ! सम्भवतः वे अपनी तलवारका फैसला करानेके उद्देश्यसे उपस्थित हुए होंगे ।’ भूरसिंह बोला ।

‘हो सकता है । उन्हें आदरपूर्वक बुला लाओ ।’

‘जो आज्ञा महाराज !’ कहते हुए प्रतिहारी बाहर चला गया और सम्मानपूर्वक मौकमसिंहको साथ लेकर कक्षमें प्रविष्ट हुआ । महाराज जगतसिंहने आसनसे उठकर उनका स्वागत किया और मौकमसिंहने आदरसे उन्हें अभिवादन किया । आमेर-नरेशने मौकमसिंहको अपने पार्श्वमें आसन देकर बैठाया ।

‘आपने दर्शन देकर बड़ी कृपा की । कहिए और सब समाचार भी

सुनाइए । आपसे मिले महीनों व्यतीत हो गए ।’

‘हाँ महाराज ! आपकी कृपासे सब समाचार ठीक है । इधर अपने महाराजकी तीमारदारीमें अत्यन्त व्यस्त रहना पड़ा; इसी कारण महाराज आपसे मिलनेका अवसर न मिल सका ।

‘अच्छा अब महाराजका स्वास्थ्य कैसा है ? जगतसिंह बोले ।

‘अब तो बहुत ठीक हो गया है, महाराज ! ईश्वरकी कृपासे हमारे महाराजका नया जन्म हुआ है, श्रीमान् ! उन्हें महान् कष्ट सहने पड़े हैं ।’ मौकमसिंहने कहा ।

‘बात तो सही है, उधर आखेटमें महाराज घायल होकर कष्ट सहे और इधर स्वयम्बरमें विजय न होने तथा कुमारी किरणप्रभाके न प्राप्त करनेसे भी पीड़ा हुई होगी । ऐसी दशामें आपके महाराजका अत्यधिक व्यथित हो जाना कोई आश्चर्य नहीं ।’ व्यंग्य-मुद्रामें भूरसिंह बोला ।

‘किन्तु आपने तो स्वयम्बर-युद्धमें समग्र वीरोंको पराजितकर किरणप्रभाको प्राप्त कर लिया, क्यों; है न यही बात ?’ उसी प्रकार व्यंग्यमें ही मौकमसिंहने भी उत्तर प्रदान किया ।

‘इसी भयसे कि कहीं मुझे भी न परास्त होना पड़े, स्वयम्बर-युद्धमें आपके महाराजने भाग नहीं लिया था ।’

‘आपने युद्धमें भाग लेकर ही कहाँ विजय प्राप्त की । दूसरों पर व्यंग्य कसनेसे क्या लाभ ?’ भूरसिंहको उत्तर देकर मौकमसिंहने आमेर-नरेश जगतसिंहसे निवेदन किया—‘महाराज ! मैं आपके समक्ष हाड़ा-की तलवार वापस लेनेके लिए उपस्थित हुआ हूँ ।’

‘किन्तु आपको नियमानुसार तलवार वापस प्राप्त करनेका अधिकार ही कहाँ है ? वास्तवमें तो आपको अपने वचनका पालन करते हुए मृत्युवरण करनी चाहिए ।’ जगतसिंहसे पहले ही भूरसिंह बोल उठा ।

‘क्यों, भूरसिंहके निर्णयसे महाराज सहमत हैं, या दूसरा निर्णय देनेके पक्षमें ?’

‘निर्णय न तो भूरसिंहका माना जायगा और न मेरा । मैं आपसेही निर्णय करनेका भार-वहन कराना चाहता हूँ । बोलिए; महाराज छत्रसाल जी मुझसे युद्ध करनेके लिए जब उपस्थित ही नहीं हुए, तब आप क्या निर्णय देना चाहते हैं ? बोलिए !’ आमेर-नरेश मुस्कुराते हुए बोले ।

‘हमारे महाराजकी बात छोड़िए । प्रश्न केवल आपका है श्रीमान् ! आप स्वयंवर-युद्धमें विजय प्राप्तकर कुमारी किरणको कहाँ प्राप्तकर सके हैं ? इसी पर आप स्वयं निर्णय दें ।’

‘तब कौन उसे प्राप्त करेगा ? क्या आपके महाराज बिना युद्ध किए ही राजकुमारीको प्राप्त करेंगे ?’ उत्तेजनामें आकर जगतसिंह बोल उठे ।

‘हमारे महाराजकी बात छोड़िए, अपनी कहिए, आप राजकुमारी को प्राप्त करनेके अधिकारी हैं ?’

‘हम राजकुमारीको प्राप्त करनेके अधिकारी हैं वा नहीं, इसपर निर्णय देनेका आपको कोई अधिकार है ?’ मर्माहत होकर जगतसिंह बोल उठे ।

‘न्याय करनेका किसीको भी अधिकार हो; किन्तु यह तो ध्यान रखा ही जायगा कि युद्धमें आप पराजित हो चुके हैं ।’

‘मैं पराजित हूँ, कौन कहता है ? जादूगरसे मेरी हार यदि मानी जाती, तो उसे बन्दी क्यों बनाया जाता ? मेरा प्रतिद्वन्दी एक जादूगर था, जिसकी जीतको मान्यता नहीं प्रदानकी गयी है । ऐसी दशामें मैं पराजित कैसे मान लिया जाऊँगा ?’

‘किन्तु यदि वह जादूगर न होकर बूँदी-नरेश महाराज छत्रसाल ही हों तो ?’

‘मैं कहता हूँ, यदि छत्रसालजी ही थे; तो जादूके सहारे क्यों लड़े ? उन्हें वीरताकी मान्यता नहीं मिल सकती ।’

‘किन्तु युद्धमें आप एक बार और भी हमारे महाराजसे पराजित हो चुके हैं, उस बार कौन-सा जादू चला था ? इस बार भी आप हमारे

महाराजसे पराजित हुए हैं। आप लोगोंकी यह घाँघली न चलने पावेगी, उन्हें जादूगर घोषितकर अपनी जीत कायम नहीं कर सकते।'

'आपके महाराजकी जीत कदापि न मानी जायगी। यह असम्भव है, सर्वथा असम्भव।'

'जो सत्य है, उसे असम्भव कौन कह सकता है? लीजिए यह फतेह खाँका मस्तक आपके समक्ष रखता हूँ।' कहकर कटा मस्तक जगतसिंहके समक्ष मौकमसिंहने उपस्थित कर दिया।

'किन्तु यह घोर अपराध है, अपराध!! भूरसिंह? अपराधीको बन्दी बना लो।' तीव्र स्वरमें जगतसिंह बोले।

आदेश सुनकर भूरसिंह तलवार लेकर मौकमसिंह पर दृढ़ पड़ा।

'सावधान! आगे बढ़ने पर कुशल नहीं। यदि प्राण प्रिय हों, तो हमारे निकट मत आना।' हाथमें तलवार लेकर सावधान होते हुए मौकमसिंहने निर्भीकतासे डाट कर उत्तर दिया।

भूरसिंह आगे बढ़ा। उसने मौकमसिंहपर आक्रमण कर दिया, किन्तु उसका प्रहार मौकमसिंहने बचा लिया और बड़ी फुर्तीसे उन्होंने भूरसिंहके हाथसे तलवार छीन ली और उस समय भूरसिंहके हाथमें तलवारसे लग गया। रक्त प्रवाहित होता देख हाथ थामकर भूरसिंह भूमि पर बैठ गया। घाव गहरा था, वह मूर्च्छित होकर तुरन्त पृथ्वी पर गिर पड़ा। इस घटनाके घट जाने पर जगतसिंहने सैनिकोंको आदेश दिया—'अपराधीको बन्दी बना लो। आज्ञा पाते ही साथ ही अनेक सैनिक दौड़ पड़े और मौकमसिंहको बन्दी बना लिया गया।

प्रातःकाल उपर्युक्त घटना सुनते ही कि बूँदीके किसी योद्धा द्वारा अमेर-नरेश घायल हो गए हैं, महाराज रूपनगर अत्यन्त दुःखी होकर दौड़ पड़े। घटनास्थल पर पहुँचकर जब उन्होंने अमेर-नरेशको सकुशल देखा, तब उनकी घबराहट दूर हुई। घटनाकी जाँच करनेपर जब उन्हें मौकमसिंहके बन्दी होने और भूरसिंहके घायल होनेका पता चला, तब वे

व्याकुल हो उठे। उन्हें मौकमसिंहका उनकी राजधानीमें अपमान सहन नहीं हो सकता था। वे भूरसिंह और अमेर-नरेशसे वार्ताकर सम्राटके शिविरकी ओर सबके साथ गए। सारी घटनाका सम्राटसे विवरण उपस्थितकर उन्होंने निवेदन किया—‘जहाँपनाह ! दोनों पक्षका निबटाराकर हमारा दुःख दूर करें। मैं दोनों पक्षोंको आदरकी दृष्टिसे देखता हूँ।’

‘आप बन्दी बनाकर आए हैं मौकमसिंह ?’

‘किन्तु मैं दोषी नहीं हूँ सम्राट !’

‘आपपर फतेहखाँके कत्ल करने और भूरसिंहको घायल करनेका इल्जाम तो है। महाराज अमेर-नरेशसे भगड़ा भी आपने किया है !’

‘सम्राट ! बात तो ठीक है। फतेहखाँको मैंने ही मारा है; क्योंकि बूँदी-नरेश महाराज छत्रसाल पर छिपकर उसने प्राण-घातक प्रहार किया था, जिसका निर्णय बूँदीकी अदालतने किया और उसे प्राण-दण्डका आदेश हुआ। इसका समाचार पाते ही कि फतेहखाँको प्राण-दण्ड दे दिया गया, भूरसिंहने उसका बदला लेनेके लिए मेरे ऊपर आक्रमण कर दिया। अपनी प्राण-रक्षाके लिए मुझे भी उनसे युद्ध करना पड़ा। भूरसिंहका आघात विफल हो गया और मेरी कटारसे उनके हाथमें चोट लग गयी। इसीपर महाराज अमेर-नरेशने मुझे बन्दी बना लिया।’

‘किन्तु महाराजके पास रातमें आप क्यों गए ?’

‘मैं तो अपनी तलवार मागने गया था।’

‘क्या आपकी ही तलवार लेकर महाराजने स्वयम्बरमें जंग किया था।’

‘नहीं, सम्राट !’

‘तब कैसी तलवार ?’

‘एक दिन मुझसे और भूरसिंहसे शतं हुई थी सम्राट ! उसीके अनुसार हमारी तलवार महाराजके पास रखी गयी थी।’

‘क्यों महाराज ! शतंकी कौन-सी बात है ?’ अमेर-नरेशकी ओर

दृष्टिपात करते हुए सम्राटने पूछा ।

बूंदीसे आमेर जाते समय मौकमसिंहसे भेंट होने, फतेहखाने के भागने रूपनगरमें स्वयम्बर-युद्ध होने और शर्तनामेकी समस्त बातोंका सविस्तार आमेर-नरेशने सम्राटके समक्ष विवरण उपस्थित करते हुए महाराज छत्रसालके स्वयम्बर-युद्धमें न सम्मिलित होनेका आरोप लगाया ।

सम्राटने सारी बातें ध्यान देकर सुनीं और थोड़ी देर तक मौन रह कर कहा—‘मौकमसिंह ! आपका कुसूर साबित होता है और शर्तके मुताबिक आप तलवार लेनेके हकदार नहीं है, आपको सजा मिलनी ही चाहिए ।’

‘किन्तु मैंने ऐसा कोई भी काम नहीं किया है, सम्राट !’

‘शर्तनामेके मुताबिक महाराज छत्रसाल स्वयम्बर जंगमें कहाँ शामिल हुए ?’ महाराज जगतसिंह बोले ।

‘किन्तु महाराज आमेर-नरेश राजकुमारी किरणप्रभाको पानेके अधिकारी तो नहीं ही हुए सम्राट !’ मौकमसिंह बोले ।

‘क्यों; जादूगरको, जिसने राज-खानदानको तौहीन करनेकी कोशिश की उसके साथ राजकुमारियाँ व्याही जा सकती हैं ? राज-कुमारियोंकी शादी इधर-उधर घूमनेवालोंके साथ नहीं हो सकती, उनकी शादी जब होगी तब राज-खानदानमें ही होगी । इसीलिए उस जादूगरकी जीतको न मानकर हम अम्बरल नम्बर महाराज जगतसिंहकी और दोगम नम्बर रूहेला नवाब शेरशाहकी जीतको मानते हैं ।’

सम्राटका फैसला सुनकर आमेर-नरेशका हृदय सुखसे फूल उठा । उनकी महान् साध आज पूरी हुई । कुमारी किरणप्रभाको पानेकी घोषणा सुनकर उनका रोम-रोम आह्लादसे भर उठा । अब उन्हें कौन-सी शक्ति किरणकी प्राप्तिमें अवरोध पैदा कर सकती है ? जगतसिंहके हर्षका ठिकाना न था । किरणप्रभाके प्रति उनके हृदयमें अपार आसक्ति उत्पन्न हो गयी । सौन्दर्य और गुणोंकी काल्पनिक प्रतिमा जगतसिंहकी दृष्टिके

समक्ष साकार-सी हो उठी । उनके हृदयमें रागकी तरंगे उठने लगीं । वे काम-मोहित हो उठे ।

सम्राटके फैसलेसे महाराज रूपनगर अत्यन्त व्याकुल हो गए । भयसे उनका हृदय प्रकंपित हो उठा; क्योंकि एक सन्यासीके साथ अपनी कन्याका विवाह कर देना वे अच्छा समझते थे, उन्हें अत्यन्त मार्मिक पीड़ा हुई । वे सन्न हो गए । उनकी आकृति म्लान हो गयी । उन्होंने बड़ी दीनताका अनुभव किया । किन्तुस सम्राटकी आज्ञा ! जिसका पालन करना और न करना दोनों ही घातक ! उनका हृदय पश्चात्तापसे जलने लगा ।

‘किन्तु सम्राटने बिना जाच-पड़ताल किए प्रथम विजेताको जादूगर ही क्यों मान लिया ? मेरी प्रार्थना है, इसकी पूरी जाँच कराकर ही आप फैसला करें ।’ मौकमसिंहने निवेदन किया ।

‘ठीक है । सुनो सिपहसालार सुजाअत खाँ ?’ कहा सम्राटने ।

‘जी हाँ बादशाह सलामत !’ मस्तक झुकाकर सिपहसालार बोला ।

‘कैदी सन्यासीको हमारे खूबखू हर्जाजर करो ।’

‘जी जहाँपनाहका हुक्म !’ कहकर सिपहसालार बाहर चला गया । थोड़ी देरमें बंदीको साथ लेकर वह सम्राटके समक्ष उपस्थित हुआ ।

बंदीने सम्राटको अभिवादन किया । उसे समक्ष प्रस्तुत देख मौकमसिंह उसके निकट सम्मान पूर्वक अभिवादनकर बोल उठे—
‘महाराज छत्रसालजी की जय !’

‘यहाँ महाराज छत्रसाल कहाँ हैं मौकमसिंह; आप पागल तो नहीं हो गए हैं ?’

‘नहीं सम्राट ! आपके दरबारमें बूँदी-नरेश महाराज चत्रसाल उपस्थित हैं ।’

‘उपस्थित-सुपसिद्धित कुछ नहीं, हमें तो आपके पामल होनेका ही यकीन हो रहा है ।’

‘नहीं, नहीं सम्राट ! पहले इनका आवरण तो हटवाइए । ये ही

महाराज जो अब तक जादूगर बने हैं; महाराज छत्रसाल हैं ।’

मौकमसिंहकी बातें सुनकर यद्यपि जगतसिंहको विश्वास नहीं हो था; किन्तु कुमारी किरणप्रभाके छिन जानेसे भयसे वे व्याकुल हो उठे । उनकी धुकधुकी तीव्र हो उठी । वे दृष्टि जमाकर वन्दी संन्यासी की ओर देखने-पहचानने लगे ।

संन्यासीका आवरण हटाया गया । रबड़की सूक्ष्म भिल्ली दाढ़ी मूँछ के लिए जो मुँहपर पड़ी थी, हटायी गयी । साक्षात् सबके समक्ष बूढ़ी-पति महाराज छत्रसाल दिखायी पड़े । उनकी बायीं जाँघपर पट्टी चढ़ी थी । सम्राट शाहजहाँ और महाराज रूपनगरके हर्षकी सीमा न थी ।

परदेकी आड़में साम्राज्ञी मुमताज बेगम छत्रसालके तमाशेको देखकर हँस पड़ी । छत्रसालपर दृष्टि जमाकर वह देखती ही रह गयी । उसका हृदय कामपीड़ासे आन्दोलित हो उठा ।

महाराज रूपनगरकी जैसे फाँसी कट गयी । उनके स्थान पर महाराज जगतसिंहको जैसे फाँसीपर चढ़ाये जानेका आदेश हो गया । सारी आशापर पानी फिर गया । उनकी आकृति उदास हो गयी और वे लज्जाका अनुभव करने लगे । उन्हें ऐसा प्रतीत होने लगा—जैसे किसीने उनका सर्वस्व हरणकर उन्हें तत्वहीन कर दिया हो । महाराज छत्रसालसे पराजय, मौकमसिंहके समक्ष तौहीन होना और सबसे महत्वपूर्ण आशा किरणप्रभाकी प्राप्ति का न होना; एकसे बढ़कर एक दुःखदायी प्रसंग ! इतने बड़े आघातको सहन करनेकी क्षमता उनके हृदयमें नहीं रह गयी । वे मर्माहत हो उठे ।

‘आपको इस तरह अजीब तमाशा करनेकी वजह क्या है महाराज !’ सम्राटने सबका ध्यान आकृष्ट करते हुए पूछा ।

‘सम्राट ! यदि मैं ऐसा छद्मवेश न बनाता तो मेरी जाँघमें जो घाव था, उसे देखकर प्रतिद्वन्दी द्वारा उस स्थलपर प्रहार करनेका प्रयत्न होता और ऐसी दशामें मेरी पराजय निश्चित थी और मेरे इस छद्मवेश-

से आप सभी लोगोंका मनोरंजन भी हो गया ।' गम्भीरतापूर्वक छत्र-सालने निवेदन किया ।

‘हम लोग तो आपको सजा देनेके लिए तैयार हो चुके थे ।’

‘मुझे यह जानकर कि मेरी पराजय जो हुई, वह हमारे बड़े भाई आदरणीय महाराज छत्रसालसे हुई । अतः मेरा दिल भी कुछ हल्का हो गया ।’ दिखावटी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए जगतसिंह बोले ।

‘मौकमसिंह ! हम आपके ऊपर बहुत खुश हैं, आपकी शर्तमें जीत हुई है । आप अपनी तलवार वापस ले सकते हैं । हम खुशीसे आपको बारह घोड़ेकी जागीर अपने खालसा इलाकेसे देते हैं । सोनेके मूँठवाली यह तलवार भी इनाममें आपको दी जाती है । हाँ, जगतसिंह ! भूरसिंह का सब्जा घोड़ा शर्त्तनामेके मुताबिक मौकमसिंहको मिलना ही चाहिए । मैं महाराज छत्रसालकी बहादुरीसे भी बहुत ज्यादा खुश हूँ । इसलिए दो तेज चलनेवाले घोड़े और सोने व हीरेवाली मूँठकी तलवार भी इनाममें हम अपनी ओरसे दे रहे हैं । स्वयंवर-जंगमें अव्वल महाराज छत्रसाल और दोगम महाराज जगतसिंहकी जीत मानी जाती है; जिसके मुताबिक राजकुमारी किरणपरभा और ज्योतिपरभाकी शादी तरतीबसे महाराज छत्रसाल और महाराज जगतसिंहसे होगी ।’



१४

रूपनगरकी दोनों राजकुमारियोंको जब पता चला कि सम्राट द्वारा निर्णायकोंकी सम्मतिसे जादूगरकी विजय अस्वीकार कर दी गई है, तब पहले तो उन्हें हर्ष हुआ; किन्तु जब विषयपर महाबुद्धिमान् उनकी चचेरी बहन राजबालाने प्रकाश डाला, तब उनका मर्म आहत हो उठा । राज-

बालाने कहा—‘जब जादूगरकी जीत सम्राट द्वारा अमान्य हो गयी, तब निश्चय ही स्वयंवर-युद्धमें प्रथम विजयी वीर महाराज जगतसिंह हुए और द्वितीय वीर पराजित नवाब रूहेला शेरशाह अवश्य ही मान लिया जायगा ।’

‘तब तो निश्चयके अनुसार मेरा विवाह अमेर-नरेशके साथ और ज्योतिप्रभाका विवाह नवाब रूहेला शेरशाह यवनके साथ होना निश्चित होगा ?’ किरणप्रभा ने पूछा ।

‘निश्चित है, ऐसा होना ।’ राजबाला उत्तर देकर गम्भीर हो गई ।

‘यह तो घोर अनीति है ।’ किरणप्रभा बोली ।

‘अवश्य ही घोर अनीति है ।’ कहकर राजबाला मौन हो गयी ।

‘इसका तात्पर्य है, मेरी बहन अब हिन्दूसे मुसलमान हो जायगी क्यों ?’ आश्चर्य व्यक्त करते हुए किरणप्रभा गम्भीर हो गयी ।

‘इसमें भी अभी तुम्हें आश्चर्य है ?’

‘यदि ऐसा ही है, तो पिताजीने इसे अस्वीकार क्यों नहीं कर दिया ?’

‘जिसके हाथमें किसीका जीवन हो और जीविका हो, भला उसके आदेशकी उपेक्षा करके कैसे वह सुरक्षित और सम्पन्न रह सकता है ? इसीलिए महाराज मौन थे । क्या उन्हें कष्ट नहीं है ? है, किन्तु लाचारी है । सम्राटकी आज्ञाका उल्लंघन वे नहीं कर सकते ।’

‘वे भले ही कुछ नहीं कर सकते और कह सकते हैं; किन्तु ऐसा इस जीवनमें सम्भव नहीं हो सकता । मैं मुसलमानके साथ नहीं विवाहकर सकती, आत्महत्या भले ही करनी पड़े ।’ ज्योतिप्रभा ने कहा ।

‘कुछ भी हो सम्राटको बलात् किसीका धर्म-परिवर्तन नहीं करवाना चाहिए । न्याय-प्रिय होनेका उन्होंने क्या इसी नीतिसे यश प्राप्त किया है ? इसे तो न्याय कदापि नहीं कहा जा सकता ।’ संक्षुब्ध होकर उत्तेजित स्वरमें किरणप्रभा बोली ।

‘हो सकता है, निर्णय करते समय सम्राट इसका ध्यान रखें और

यदि ध्यान नहीं रखते, तो यह महान् अनर्थकारी घटना होगी।' ज्योतिप्रभा बोलो।

'किन्तु राजपुत्री ! तुमने तो ध्यान ही नहीं दिया, यदि धर्म-परिवर्तन न्याय-विरुद्ध सम्राट मानते, तो स्वयम्बर-युद्धमें शेरशाहको युद्ध करनेसे रोक देते।' राजबालाने कहा।

ज्योतिप्रभा और किरणप्रभा दोनों राजकुमारियाँ गम्भीर हो गयीं। वे अत्यन्त मानसिक पीड़ासे व्याकुल हो गयीं।

'अब क्या होगा बहन ! तुमने भी बूँदीपति महाराज छत्रसालसे विवाह करनेका निश्चय किया था। न तो तुम्हारी इच्छा पूरी होगी और न मेरी। यदि तुम्हारा विवाह आमेर-नरेशसे भी हो जाता है तब भी किसी सीमा तक ठीक है, किन्तु मेरा ? मैं तो कभी भी क्षत्रियपुत्री होकर मुसलमान होनेकी कल्पना नहीं कर सकती; इसके लिए भले ही प्राणोंकी आहुति देनी पड़े।' ज्योतिप्रभा बोली।

'किन्तु तुमने यह क्यों निश्चय कर लिया कि मैं प्राण रहते बूँदी-नरेशको छोड़कर आमेर-नरेश या किसी भी अन्य व्यक्तिको वरण कर सकती हूँ।'

'मेरे कथनका तात्पर्य है—मुसलमान होनेसे तो यह किसी सीमा तक ठीक है।'

'किन्तु मेरी दृष्टिमें यह भी ठीक नहीं है। पहले सम्राट द्वारा निर्णय तो होने दो। फिर कार्यक्रम निश्चित किया जायगा। किरण-प्रभाने दृढ़तापूर्वक कहा।

आपसमें किरणप्रभा, ज्योतिप्रभा और राजबाला इस प्रकार विचार-विमर्श कर रही थीं, ठीक उसी समय कक्षमें उनकी परिचारिका ने प्रवेश किया। उसकी आकृतिपर प्रसन्नता झलक रही थी और मनो-भावोंसे व्यक्त हो रहा था कि वह कुछ निवेदन करना चाहती है।

‘तू बहुत प्रसन्न दिखायी पड़ रही है परिचारिके ! अपनी प्रसन्नता का कारण बता ।’ राजबालाने पूछा ।

‘मेरे भाग्योदयका काल उपस्थित हो गया है देवि ! इसीलिए मेरा हृदय हर्षसे भर उठा है ।’

सबकी उत्सुकता बढ़ गयी । वे सभी राजपुत्रियाँ परिचारिकारिका की ओर निहारने लगीं ।

परिचारिका मौन हो गयी । राजपुत्रियोंकी जिज्ञासा तीव्र करनेका उसने उपक्रम किया । परिचारिकाकी स्तब्धता वे ओर अधिक न सहन कर सकीं । राजबालाने पूछा—‘आखिर क्या बात है ! हमलोग भी उसे सुनें । किस बातके लिए तुम्हारा भाग्योदय हुआ है ?’

‘मैं सर्वथा सत्य ही कह रही हूँ । मेरा भाग्योदय अत्यन्त निकट है ।’ परिचारिकाने निवेदन किया ।

साफ-साफ कहती क्यों नहीं ? क्या बात है ?’ किरणप्रभाने तीव्र स्वरमें पूछा ।

‘सुननेके प्रथम राजकुमारीको तैयार हो जाना चाहिए ।’

‘किसलिए ?’

‘पुरस्कार प्रदान करनेके लिए ।’ मुस्कराकर परिचारिका बोली ।

‘तुम्हारा तात्पर्य ?’ किरणप्रभा बोली ।

‘पहले आप वचन तो दें । जितना बिलम्ब हो रहा है, उसका उत्तरदायित्व आप पर ही है ।’ परिचारिकाने मुस्कराकर निवेदन किया ।

‘अच्छा ये नहीं पुरस्कार देंगे तो मैं दूँगी तू बता ।’ राजबालाने कहा ।

‘अच्छा सुनिए ।’

सबका ध्यान परिचारिकाकी ओर आकृष्ट हो गया ।

परिचारिका बोली—‘निर्णय हो गया । सम्राट द्वारा ।’

सभी राजकुमारियाँ जैसे निद्रासे जग उठी हों; उनकी उत्सुकता बढ़

गयी । कुमारी किरणप्रभा और ज्योतिप्रभाका हृदय धड़कने लगा । वे परिचारिकाके अगले वाक्यकी प्रतीक्षा करने लगीं ।

वाणी स्फुरित हुई । परिचारिकाने निवेदन किया—‘जब सम्राटने निर्णय दिया—आमेर-नरेश स्वयंवर युद्धमें प्रथम और शेरशाह नवाब रूहेला द्वितीय विजयी वीर घोषित किए जाते हैं । जादूगर जो युद्धमें प्रथम विजयी वीर था, उसकी विजय अस्वीकार की जाती है ।...।

राजकुमारियोंके हृदय पर वज्रपात-सा हो उठा । इसी निर्णयकी ही कल्पना की गयी थी । सम्राटकी न्याय-प्रियतापर वे झल्ला उठीं ।

परिचारिका आगे बोली—‘किंतु जिस समय इन्द्रगढ़-नरेश मौकम-सिंह, जिनका वाद सम्राटके समक्ष उपस्थित था, बोले—‘सम्राट ! आपने जो विजयी वीरको जादूगर मान लिया है, उसके विषयमें बिना छान-बीन किए ही, उसे जादूगर मान लिया जाना, घोर अन्याय होगा । अतः यह न्याय बदलिए । सर्वप्रथम उस व्यक्तिको, जिसे आपने जादूगर की उपाधिसे विभूषित कर दिया है, दरबारमें उपस्थित कराइए और उसकी पूरी-पूरी जाँचकर परिचय प्राप्त करें । सारा भेद खुल जायगा । कहीं छद्मवेशमें कोई महान् पुरुष न वह हो ।’

राजकुमारियोंकी जिज्ञासा पुनः बढ़ी; फिर परिचारिकाकी बातें सुननेके लिए उत्सुक हो उठीं । परिचारिका पुनः बोली—‘बन्दी जादूगर तुरंत दरबारमें उपस्थित किया गया; उसका आवरण उतरवाया गया । अद्भुत वेश धारणकर रखा था जादूगरने । जानती हो, वह कौन था ? संभवतः आप लोगोंको इनकी कल्पना न रही होगी ।

‘हाँ-हाँ शीघ्र बता; कौन था वह ?’ राजबाला बोली ।

वे थे—महाराज छत्रसाल !’ हँसते हुए परिचारिकाने निवेदन किया ।

‘ठीक-ठीकसे बता; कहीं हँसी तो नहीं कर रही है ?’

‘नहीं देवि; मैं ऐसी हँसी नहीं कर सकती ।’

‘अच्छा ! वाहरे जादूगर ! वाह !! तब क्या कहा सम्राटने ?’

‘सम्राट हँस पड़े ।’

‘और शेरशाह रुहेला ?’

‘उसकी बात तो मत पूछिए । उसके हृदयपर तो जैसे साँप लोट गया । उसने मोचा था—‘छोटी राजकुमारीका मैं वरण करूँगा ।’ किंतु जादूगर वीरका परिचय पाकर वह निष्प्रभ हो गया । वहीं नहीं; महाराज आमेर-नरेश जगतसिंह भी कुमारी किरणप्रभासे विवाह हो जानेकी आशासे जो फूले नहीं समा रहे थे, वे भी खिन्न हो गए । उनकी भी आशापर पानी फिर गया ।’

‘किरणप्रभाने उनकी सारी खुशी छीन ली, क्यों; ऐसा क्यों नहीं कहती ।’ राजबाला हर्ष व्यक्त करते हुए बोली ।

‘मेरे कहनेका यह उद्देश्य ही था देवि ! बोलिए यह संदेश है, पुरस्कार योग्य कि नहीं ।’

किरणप्रभा मुस्कगाकर रह गयी । महाराज छत्रसालकी प्रथमकोटि की जीत समझकर उसके आनन्दकी सीमा न थी; किन्तु उस आनन्दको वह हृदयके एक कोनेमें दबा देना चाहती थी, जिसमें वह सफल न हो सकी । हर्षकी उत्ताल तरंगे उसके हृदयसे उमड़कर नेत्रों तक पहुँच गयीं, जिससे टप-टप उसके नेत्रोंसे हर्षकी बूँदें टपक पड़ीं । कुमारी ज्योतिप्रभाने जो एक हौ दो दिनोंमें मुसलमान हो जानेके लिए वाध्य की जानेवाली थी, जिससे व्यथित होकर आत्म-हत्याकर लेनेका उसने निश्चय किया था, जैसे नवीन जीवन प्राप्त किया ।

‘इसके पश्चात् सम्राटने क्या निर्णय सुनाया ।’ राजबालाने पूछा ।

‘सम्राटने कहा—प्रथम विजयी वीर महाराज छत्रसाल घोषित किए जा रहे हैं, जिनकी शादी राजकुमारी किरणप्रभासे होगी और दूसरा विजयी वीर महाराज जगतसिंह घोषित किए जाते हैं, जिनकी शादी राजकुमारी ज्योतिप्रभासे होगी ।’

कुमारी किरणप्रभा निर्णय सुनकर कुछ लजा गयी; किंतु बोल कुछ

भी न सकी । राजबाला बोली—‘बोली; किरण ऐसे चुपचाप रहनेसे काम न चलेगा, यह अवश्य ही पुरस्कार-योग्य संदेश है, क्या पुरस्कार देनेका निश्चय कर रही हो ?’

किरणकी आकृति लज्जासे अरुण हो गयी ।

‘देवि; अभी निर्णयका कुछ अंश सुनानेको अवशिष्ट है ।’ परिचारिकाने उन राजपुत्रियोंका ध्यान पुनः आकृष्ट करते हुए निवेदन किया ।

‘उसे भी सुना ।’ राजबाला मुस्कराते हुए बोली ।

‘किन्तु देवि ! वह शेषांश आपसे संबंधित है ।’ राजबालाकी ओर संकेत कर परिचारिकाने निवेदन किया ।

‘मुझसे ?’

‘हाँ देवि !’

‘वह क्या ? शेरशाह रुहेलाको क्या इन्हें ही व्याह देनेका हुक्म दिया है सम्राटने ?’ किरणप्रभा बोली ।

राजपुत्रियोंके हृदय और मन पर पुनः आतंक छा गया । वे कुछ गम्भीर हो गयीं । प्रतीक्षा होने लगी परिचारिकाके उत्तरकी ।

‘शेरशाह रुहेलाके संबंधका... .. ।’ परिचारिका कहने लगी ।

राजपुत्रियोंका हृदय धड़कने लगा । राजबालाकी आकृति अत्यन्त म्लान हो गयी । किरणप्रभा और ज्योतिप्रभाका भी मुखमण्डल व्यथासे त्रिकृत हो उठा । परिचारिका आगे बोली—‘और आपके विवाहका निर्णय नहीं है देवि ! आपको यह जानकर प्रसन्नता होगी कि इन्द्रगढ़-नरेश मौकमसिंहको भी पुरस्कृत किया गया है । उसी घोषणाके संबंधमें निवेदन करना चाहती हूँ ।’

‘हाँ, हाँ करती क्यों नहीं निवेदन ! तुम्हारे कथनकी शैली तो ऐसी भयानक है कि कहीं किसीके हृदयकी गति ही न सुनते-सुनते बन्द हो जाय । तुम्हारा यह नाटकीय ढंगका कथन जी घाबड़ कर देता है । अतः

तुम्हें जो कुछ कहना बाकी हो, शीघ्र और साफ-साफ कह । किरण-प्रभा तीव्र स्वरमें बोली ।

‘महाराज मौकमसिहसे आपकी शादी होनेकी घोषणा सम्राटने की है ।’ परिचारिकाने राजबालाकी ओर संकेत कर निवेदन किया ।

‘हाँ, इसमें तो सन्देह नहीं; यह सन्देश भी तो बड़ा ही आह्लादकारी है ।’ किरणप्रभा बोली ।

‘हमारे तो प्राण नहींमें समा गए थे । ‘शेरशाह’ का नाम सुन-सुनकर हृदय काँप उठता है । हम लोगोंके मध्य उस दुष्टकी चर्चा कर सम्राट नाहक ही न्याय-प्रियताकी दोहाई देते फिरते हैं ।’ ज्योतिप्रभा बोली ।

‘चलो हम लोगोंका उससे पिण्ड छूटा । बरबस हमारे मध्य आकर वह नीच प्राणोंका ग्राहक बना हुआ था ।’ किरणप्रभा बोली ।

राजकुमारियोंका भय एवं विषाद दूर हुआ । वे प्रसन्न हो उठीं । परिचारिकाने निवेदन किया—‘मुझे पुरस्कार मिलना चाहिए देवि !’

‘ठीक है विचार किया जायगा ।’ राजवालाने कहा ।

‘इसमें विचार करनेकी कोई बड़ी बात नहीं प्रतीत होती देवि ! अतः तुरत दान महाकल्याण ।’

‘नहीं-नहीं, तुम्हें कोई उत्तम पुरस्कार दिए जानेकी बात सोची जा रही है; धैर्य रखो परिचारिके !’



रूपनगरके राज्य-परिवारमें प्रसन्नताकी लहरें तरंगित हो उठीं । राजकुमारियोंके विवाहोत्सवकी सारी तैयारियाँ कार्यक्रमसे प्रारम्भ हो गयीं । शास्त्रीय पद्धतिसे उनका पाणिग्रहण-संस्कार सम्पन्न हुआ । भारत-सम्राटने अपने परिवारके साथ उसमें सम्मिलित होकर हर्ष व्यक्त किया । सब कार्य

पूर्ण हो जानेपर वे राजधानी जानेके लिए महाराज रूपनगरसे विदा हुए। इसी प्रकार रूपनगरके अन्य अतिथि भी विदा हो-होकर अपने-अपने स्थानोंको चले गए। राज-पुत्रियोंकी विदायीके लिए आमेर-नरेश, बूँदीपति और इन्द्रगढ़-नरेश मौकमसिंह रुके हैं, किन्तु इन महानुभावोंकी विदायीकी बेला सन्निकट आयी।

सर्धप्रथम महाराज छत्रसालकी विदायीके भेंटका आयोजन हुआ। राज-महिलाओंने उन्हें लोक-प्रथाके अनुसार भेंट दे-देकर अपनी शुभ-कामना प्रकट की और उनका सम्मान किया। इसके पश्चात् बारी आई आमेर-नरेश जगतसिंहकी। राज-महलकी महिलाएँ उन्हें भी भेंट देकर लगभग कार्य-क्रम समाप्त कर चुकी हैं। अब केवल कुमारी किरणप्रभाकी ही बारी शेष है।

महाराज जगतसिंह मिलन-कक्षमें विराजमान हैं। द्वारपर प्रतिहारिणी सावधान होकर बैठी है। बारी-बारीसे महिलाएँ एकके पश्चात् दूसरी कक्षमें जगतसिंहसे अकेले मिलती हैं, उन्हें भेंट देकर, अपनी मंगल-कामना प्रकट कर और किसीकी आकांक्षा हुई, तो कुछ वार्त्ता भी कर लेने पर वाहर आती हैं। एकके वाहर आ जाने पर दूसरी महिला प्रवेश करती है। यही क्रम चला आ रहा था।

राजकुमारी किरणप्रभाने कक्षमें प्रवेश किया। प्रतिहारिणीने निवेदन किया—‘महाराजको भेंट प्रदान करने बूँदीकी महारानी किरणप्रभा कक्षमें प्रवेश कर रही हैं।’

आमेर-नरेश सतर्क हो गए। उन्होंने शय्यासे उठकर विनम्रता प्रदर्शित करते हुए निवेदन किया—‘आइए महारानीजी ! आपका स्वागत है।’

महारानी आसनके निकट धीरे-धीरे पहुँची। जगतसिंहने अपने समक्ष महान् व्यक्तित्वके उपस्थित होनेका अनुभव किया। सचमुच ऐसी सुषुमा आज तक मैंने कभी भी, कहीं भी नहीं देखी। तभी तो सारे

भारतमें जहाँ-तहाँ इस सौंदर्यका वर्णन हो रहा था। इस सौन्दर्यपर आकृष्ट होनेसे कितने ही वीर स्वयंवर-युद्धमें अपने प्राणोंसे हाथ धो बैठे। बड़े-बड़े नेत्र, प्रभावशालिनी सौम्य आकृति। स्वस्थ एवं पुष्ट शरीरकी बनावट जो देखनेमें कोमल प्रतीत हो रही थी। अंग-प्रत्यंगसे सुषमाकी आभा प्रस्फुटित हो रही थी, शरीरकी शोभामें उन्मादकारी नव-यौवनके प्रवेशसे बहुत ही अभिवृद्धि हो रही थी। भला कौन ऐसा पुरुष संसारमें है, जो इस रूपपर न आसक्त हो जाय ? कौन पुरुष इस रूपको समक्ष देखकर धैर्य रख सकता है ?' इत्यादि बातें सोचते-सोचते जगत-सिंहका चित्त चंचल हो उठा। उन्होंने किरणप्रभापर आक्रमणकर उसे बलात् हृदयसे लगाकर चित्त शान्त करना चाहा, इसी उद्देश्यसे वातावरण मादक बनानेके विचारसे उन्होंने उनका हाथ पकड़कर अपनी ओर खींचा और कामके वशीभूत आमेर-नरेशने कहा—'प्रिये ! प्राणवल्लभे ! आओ तुम्हारे लिए प्राण व्याकुल हैं। निद्रा नहीं आती। सब कुछकी सुधि-बुधि खो चुका है और तुम्हारे बिना शक्तिहीन होता जा रहा हूँ।'

'पामर ! दुष्ट ! क्षत्रियाधम ! मैं अभी तेरी कामाग्नि बुझा देती हूँ।' कहते हुए जोरसे झटका देकर किरणप्रभाने जगतसिंहको पीछे धकेला, पलंगके पट्टेसे पीछे हटनेका कुछ भी अवसर न पानेसे वे धक्का खाकर अचानक नीचे गिर पड़े। इसी अवस्थामें महारानीने उनपर चरणोंका प्रहार किया और तीव्र स्वरमें प्रचण्ड आवेगसे गर्जती हुई वह बोली—'नीच ! मुझ पतिव्रताके आचरणको तुमने क्या समझा था ?' सामने खूँटी पर टँगी तलवार पर उसकी दृष्टि पड़ी, दृढ़ता और आत्मबलसे उस वीरांगना क्षत्राणीने तलवार तुरन्त हस्तगत कर लिया। आमेर-नरेश निष्प्रभ और बल-विहीन हो गए। कक्षकी तीव्र ध्वनि प्रतिहारिणी एवं उपस्थित अन्य महिलाओंने सुना। वे शीघ्र ही घटना-स्थलपर दौड़ पड़ीं। वहाँ पहुँच सबोंने परिस्थितिका अध्ययन करना चाहा; किंतु उन्होंने केवल यही देखा—जगतसिंह अत्यन्त दीन-हीन दशामें खड़े हैं और किरणप्रभा

रोषमें तलवार उठाकर चलाना ही चाहती है। ज्योतिप्रभाने बहनका आवेग शान्त करते हुए निवेदन किया—‘बहन ! रुको; रोष त्याग दो। मैं तुमसे याचना करती हूँ?’ धीरेसे ज्योतिप्रभा किरणके समक्ष पहुँचकर तलवार हाथसे पकड़ लिया।

राज-महिलाओंको वहाँ उपस्थित हो जाने पर जगतसिंहका मस्तक नीचे झुक गया।

राजबालाने पूछा—‘किरण ! तुम्हारे रोषका कारण क्या है ? तुम्हारे हाथमें तलवार लेकर युद्ध-मुद्रामें स्थित हो जानेका कारण जानना चाहती हूँ, बोलो आखिर बात क्या है?’

‘इसी पामर क्षत्रियाधमसे पूछो। मैंने आवश्यकतासे अधिक सम्मान और महत्व इस नीचको प्रदानकर बड़ी भारी भूल की। अवश्य ही यह दुष्ट वधके योग्य है। इसने मुझे अपमानित करनेकी चेष्टा की है।’

सब महिलाएँ मौन हो गयीं। जगतसिंहके प्रति उनके मनमें शृणा उत्पन्न हो गयी।

‘किन्तु क्षमा करो बहन ! जो भी तुम्हें दण्ड देना हो, मैं तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत हूँ, मुझे ही कठोरसे कठोर दण्ड देकर अपना चित्त शान्त करो। मैं तुम्हारे आचरण और अपने ऊपर जो तुम्हारी ममता थी, सब समझती हूँ, तुम्हारे प्रति मैं सदैव बड़ी भक्ति रखती रही हूँ। यह सब सोचकर मेरे लिए रोष त्याग दो।’ ज्योतिप्रभाने विनम्रतासे निवेदन करते हुए लज्जाका अनुभव किया।

‘ठीक है, तुम्हें मैं सन्तुष्ट रखती आयी हूँ, अतः तुम्हारी याचनापर क्षमा प्रदान करती हूँ, किन्तु यह हाथ, जिसका स्पर्श इस दुष्टने किया है, इस पवित्र देहसे काटकर अलग कर दूँगी।’ अपना हाथ सामनेकी ओर सीधा करके किरणप्रभाने भावुकतामें कहा।

जगतसिंहकी अशिष्टता एवं किरणप्रभाकी उत्तेजना आदि घटनाएँ क्षणमात्रमें सारे राज-भवनमें फैल गयीं। महाराज छत्रसाल तत्काल ही

घटनास्थलपर पहुँच गए। उन्होंने अपना हाथ अपवित्र समझकर काटने के लिए किरणप्रभाको उद्यत पाकर कहा—‘देवि; यह क्या बात है? अमेर-नरेशको क्षमा प्रदान करो। तुम्हारे हाथ कदापि अपवित्र नहीं हो सकते, मेरी आज्ञा स्वीकारकर तलवार म्यानमें रखो। तुम्हारा आचरण महान् है। तुम्हारी पवित्रता महान् है, तुम किसीके स्पर्शसे अपवित्र नहीं हो सकती। तुम्हारा स्पर्शकर स्वयं अमेर-नरेश ही पवित्र हो गए। इन्हें क्षमा प्रदान करो।

‘किन्तु अपराधी यदि अपने कुकृत्यपर लज्जित होकर क्षमा माँग ले, तभी उसके अपराधोंका परिष्करण हो सकता है। अन्यथा नहीं देव !’ उत्तेजना शिथिल करते हुए किरणप्रभाने निवेदन किया।

‘मैं अमेर-नरेशकी ओरसे क्षमा माँगती हूँ बहन !’ ज्योतिप्रभाने दीनतापूर्वक कहा।

‘किन्तु तुमने तो कोई अपराध नहीं किया है !’

‘न भी किया हो, तब भी मान लेती हूँ बहन ! तुम महान् हो, क्षमा करो, रोष त्याग दो।’

‘ठीक है, मुझे क्षमा प्रदान करें देवि ! मैं अपराधी हूँ। हँसी-हँसीमें आपको इतना रोष हो गया ? मैंने तो हँसीकी थी, आप बुरा मान गयीं। ठीक है; बिना प्रकृति समझे किसीसे हँसी-मजाक नहीं करनी चाहिए। मैं लज्जित हूँ देवि !’ जगतसिंहने अत्यन्त मन्द स्वरमें और अत्यन्त लज्जाके साथ अपने अपराधों पर परदा डालते हुए कहा।

किरणप्रभाने तलवार म्यानमें रख दी। थोड़ी देरमें शान्ति स्थापित हो गयी। दूसरे दिन अमेर-नरेश अपने दलके साथ ज्योतिप्रभाको विदा कराकर अमेर चल पड़े। इसी प्रकार मौकमसिंह और महाराज छत्रसाल ने भी राजपुत्री राजवाला और किरणप्रभाको साथ लेकर इन्द्रगढ़ तथा बूँदीको प्रस्थान किया।

‘महाराज ! जगतसिंहने बड़ी नीचताकी; मुझे तो क्षमा प्रदान किए

जानेके पश्चात् पता चला, नहीं तो -।' मौकमसिंहने निवेदन किया ।

‘नहीं तो क्या ? उसे आप तलवारके घाट उतार देते ?’

‘और क्या महाराज ! छोड़ता अपराधीको ?’

‘किन्तु ज्योतिप्रभाका क्या होता ? रोषमें आकर तुम जो कुछ करते, क्या उसका अहित न होता ?’

मौकमसिंह चुप हो गए । थोड़ी देरमें फिर बोले—‘उस दुष्टकी नीचता सुनकर सचमुच ही ज्योतिप्रभा ध्यानमें न आयी । वैसे तो महारानी किरणप्रभाने उसे घोर दण्ड दे ही दिया है, किन्तु वह दण्ड तो किसी आदमीके लिए पर्याप्त है; उस नीचके लिए तो यह थोड़ा ही है ।’

‘जितना दण्ड वह पा चुका है, उसीके बदले वह जो षडयन्त्र करनेमें प्रवृत्त होगा, उससे बचनेके लिए पर्याप्त सावधानीकी आवश्यकता है, बन्धु !’

इसमें सन्देह नहीं ही होना चाहिए महाराज ! अवश्य ही बदला लेनेमें प्रयत्नशील होगा । अतः हम लोगोंको भी सावधान रहनेकी आवश्यकता है ।’

‘चिन्ताकी कोई बात नहीं । समयपर विचार किया जायगा । अभीसे उसके लिए चिन्ताग्रस्त हो जाना, बुद्धिमत्ता नहीं हो सकती ।’ महाराज छत्रसालने कहा ।



उस दिन की घटनाकी आमेर-नरेशके मनमें जब-जब स्मृति होती, तब-तब उनका हृदय व्यथासे भर जाता था । राजपुत्री किरणप्रभाके प्रचण्डरूपकी मुद्रामें उन्होंने दम्भका, उच्छृङ्खलताका, और घोर कटुताका तथा उस समयकी अपनी स्थितिमें दीनता, दुर्बलता और मानहानि-

का तीव्र अनुभव किया। किरणप्रभाकी सारी बातें कठिनी भाँति चुभ-चुभकर घोर पीड़ा पहुँचाती थीं। बहुत प्रयत्न करने पर भी वे उसे न भुला पाते। इस समय बार-बार उन्हें नवाब रूहेला शेरशाहकी स्मृति होती। वही उनका अन्तरंग मित्र था, जिससे सारी बातें कहकर, वे अपना चित्त हलका करते; किन्तु न तो वही आमेर आया और न जगतसिंह स्वयंही उससे मिलने गए। इस प्रकार कुछ दिन व्यतीत हो गए। एक दिन सम्राट शाहजहाँका संदेश प्राप्त हुआ, जिसमें उन्हें दिल्लीमें उपस्थित होनेकी सूचना दी गयी थी।

जगतसिंहने सोचा—‘ठीक है; नवाब रूहेला भी वहीं मिल जायगा और उससे वहीं सारी बातें होंगी।’

दूसरे दिन आमेर-नरेशने दिल्लीके लिए प्रस्थान कर दिया। वहाँ पहुँचनेपर उन्होंने सर्वप्रथम शेरशाहसे ही भेंट की। वे स्वयं शेरशाहके आवासस्थान पर गए। प्रतिहारीने सूचना दी। शेरशाह बाहर आकर आमेर-नरेशसे हृदय लगकर मिला और उन्हें सम्मान प्रदान करते हुए अपने कक्षमें वह लिवा गया। दोनों मित्रोंने आसन ग्रहण किया। एक-दूसरेका कुशल-क्षेम पूछकर दोनोंने एक-दूसरेके प्रति सद्भावना व्यक्तकी।

‘श्रीमान् ! आजकल जबसे घरपर बीबी ले आए हैं, तबसे फिकरमें पड़ गए हैं ?’ नवाबने कहा।

‘ऐसी कोई बात नहीं है नवाब साहब !’

‘मगर जनाबका चेहरा फीका क्यों है ?’

‘इसकी वजह तो दूसरी है नवाब साहब !’

‘अगर मेरे सुन लेनेमें कोई एतराज न हो जनाबको, तो फरमाइए। हो सकता है मेरे लायक कोई काम हो।’

‘इसीलिए तो आपकी खिदमतमें हाजिर हुआ हूँ ?’

‘तो इधर बन्दा भी उसके लिए तैयार है। सुनाइए।’

‘रूपनगरमें आपके चले जाने पर जो वारदात हुई, उससे आप वाकिफ

हैं, या नहीं ? मेरी तकलीफ और मानसिक पीड़ाका वही कारण है । क्या कहूँ, वह ऐसी बात है, जिसकी पीड़ा मनमारकर सहनी पड़ रही है । वह किसीसे यदि कही भी जाय, तो अपनी ही तोहीनी है और जब तक किसी हमदर्दसे सारी बातें कह नहीं दी जातीं, तब तक मन नहीं हलका हो सकता ।' नवाब रूहेलासे आत्मीयता प्रदर्शित करनेकी भावनासे जगतसिंहने कहा ।

‘सुना तो कुछ-कुछ मैंने भी है, मगर यकीन नहीं होता महाराज !’ भला उस औरतकी इतनी हिम्मत कि आप पर वार करे । इसलिए जो कुछ वहाँ वारदात हुई, सब मैं सुनना चाहता हूँ; क्योंकि जबसे मैंने अफवाहन उस मामलेको सुना है, सुझे भी चैन नहीं पड़ती । आप हमेशासे जानते हैं, मैं आपका वफादार दोस्त हूँ । आपकी तकलीफ मेरी तकलीफ है और मेरी तकलीफ आपकी तकलीफ है । हम और आप जबसे एक दूसरेके नजदीक आए हैं, तभीसे हमलोग एक दूसरेके सुख-दुखके सच्चे साथी हैं ।’ कहकर नवाब रूहेलाने सहानुभूति प्रदर्शित करते हुए जगतसिंहको उत्साहित किया ।

जगतसिंह बोले—‘नवाब साहब; यह तो आप जानते ही हैं कि किरणप्रभाके ऊपर मैं पहलेसे ही कितना आसक्त रहा हूँ । उसके पानेके लिए मैंने कितनी कोशिश की है । मेरे इस काममें आपने भी दिलचस्पी से कितनी परेशानी उठाई है । हालाँकि हमलोग उसमें सफल नहीं हुए, किन्तु कोशिश बहुत की गयी । मैं तो आपकी कोशिशसे ही कीमत आँकता हूँ, फल उसका कुछ भी हुआ आपने तो कोई कोर-कसर नहीं रखी ।’

‘हाँ, हाँ । आगे क्या हुआ ?’ शेरशाहने जिज्ञासा प्रकट की ।

‘हाँ, तो विदाईके समय जब वह हमारे सामने अकेलेमें आई, तो मुझसे रहा नहीं गया, मैंने उसकी बाँह पकड़कर अपनी ओर खींच ली, उसे ज्योंही हृदयसे मैं लगानेके लिए आगे बढ़ा; त्योंही उसने मुझे पीछे-

की ओर धकेल दिया। पीछे मैंने ध्यान नहीं दिया पलंगके पट्टेसे धक्का खाकर नीचे गिर गया और उसने अपनी बाँह छुड़ाकर मेरे ऊपर चरण-का प्रहार कर दिया। इतना ही नहीं मुझे जोर-जोरसे चिल्लाकर पामर, नीच, दुष्ट और क्षत्रिय अधम वगैरह कहकर तोहीन किया। ऊपर एक तलवार खूँटीपर टँगी थी, फौरन उसे लेकर मेरे ऊपर चलानेके लिए वह भुकी। हल्ला सुनकर वहाँ राजभवनकी दूसरी स्त्रियोंकी भीड़ इकट्ठा हो गयी। उन्हीं लोगोंने मेरे प्राणकी रक्षा की।'

‘और आपने अपना बचाव नहीं किया? क्या वह आपसे तगड़ी थी?’

‘उस समय तो जैसे मेरे शरीरमें बल ही नहीं रह गया था, नवाब साहब!’

‘तब क्या हुआ?’

‘थोड़ी देरमें वहाँ छत्रसाल भी आ गए।’

‘उन्होंने क्या किया?’

‘उन्होंने उसे क्षमा कर देनेके लिए कहा। मगर उसने कहा—मैं अपनी बहनके लिए इस दुष्टको क्षमा जरूर कर दे रही हूँ, लेकिन अपना यह हाथ जो इसके छूनेसे अपवित्र हो गया है, काटकर फेंक दूँगी।’

‘वाह! गजबकी ओरत है, वह। इसके बाद?’

‘मैंने कहा—मेरे जरासी हँसी करनेपर आपको इतना क्रोध नहीं करना चाहिए, मैं आपसे क्षमा माँगता हूँ। तब कहीं जाकर वह शान्त हुई, नवाब साहब! इस तरह मेरा घोर अपमान हुआ है; जिससे रातों-दिन धुलता जा रहूँ।’

थोड़ी देर तक नवाब नीचेकी ओर मौन होकर सोचता रहा, फिर बोला—‘तो आप क्या चाहते हैं?’

‘अब उसे पानेकी इच्छा तो मुझे नहीं है। मैं तो अब केवल अपने

अपमानका बदला लेना चाहता हूँ।' कहकर जगतसिंह मौन होकर नवाबकी ओर देखने लगे।

शेरशाह सोचने लगा। 'बेशक मुझे यह सुनकर बड़ी तकलीफ हुई है।' रुककर नवाबने कहा।

'तकलीफकी ही बात नहीं नवाब साहब; मुझे अन्न-जल और नींद हाराम हो गयी है, मगर क्या करूँ; कैसे बदला लिया जाय, कुछ भी समझमें नहीं आ रहा है।'

'महाराज ! यह आपकी सोचनेकी बात नहीं है। यह काम बन्देका है। आप देखिए मेरे ऊपर बेफिक्र हो जाइए। मैं जनाबसे ऐसा बदला लूँगा कि ताउम्र उन्हें याद ही नहीं। भोगना भी पड़ेगा। आपने चाहे गलती की हो या न की हो, इसका कोई सवाल नहीं, मुझे तो सिर्फ यही देखना है कि आपको तौहीन करनेवाला कितनी बड़ी-से-बड़ी जिल्लत और सजा भोगता है।'

यही तो मेरे इस मर्जकी दवा है नवाब साहब; मैं आपको दोस्त पाकर बड़ा भाग्यवान् हूँ।'

'अब आजसे यह बोझ मेरे ऊपर छोड़ दीजिए। सिर्फ इन्तजारी कीजिए, मौका आनेपर आप खुद देखेंगे कि दुश्मनकी आपके सामने क्या हालत होती है।

'ठीक है। शत्रुकी सजा हो या न हो, मगर मैं आपसे अपनी सभी बातें कहकर शान्तिका अनुभव करता हूँ। अब मेरा मन हल्का हो गया है।'

शेरशाहसे आश्वासन पाकर जगतसिंह बड़े प्रसन्न हुए और उठकर बोले—'अच्छा, नवाब साहब; इजाजत दीजिए, अब चलूँगा, उधर दरबारमें भी चलना है।'

'हाँ चलिए, अब आप निशाखातिर रहें।' कहते हुए नवाबने थोड़ी दूरतक जगतसिंहको पहुँचाया।

+

+

+

‘जहाँपनाह ! आपने सुना होगा, महाराज जगतसिंह और किरण-प्रभाका वाकिया ?’ प्रधानमंत्री तहव्वरखाने निवेदन किया ।

‘हाँ, हाँ सुना ही नहीं, मैं तो वहाँ मौजूद भी था । किरणप्रभाके वास्ते जगतसिंहने जो कुछ भी किया, उसमें वे कामयाब नहीं हुए । स्वयं बरेजंगमें वे बूँदी-नरेश छत्रसालसे हार गए ।’

‘नहीं; यह बात नहीं है, बन्दापरवर ! यह तो मैं जानता हूँ, जहाँपनाह, स्वयंबरेजंगमें खुद मौजूद ही नहीं थे, बल्कि सारा फैसला भी आपके ही हाथमें था ।’

‘तब इसके अलावा और कोई बात हो, तो फरमाइए ।’

वही तो हुजूर ! आपके रूपनगरसे लौट आनेपर जब बिदाईके वक्त किरणप्रभा महाराज जगतसिंहको भेंट देने उनके पास गयी, तब मनचले आमेर-नरेशने उसकी बाँह पकड़कर अपनी ओर खींच लिया । इस पर वह बहुत नाराज हुई । बाँह झटककर उसने छुड़ा लिया और पीछे धकेलकर उन्हें नीचे गिराकर पैरोंसे मारा भी ।’

‘वाह ! खूब ।’ आश्चर्य व्यक्त करते हुए सम्राट बोल उठे ।

‘इतना ही नहीं हुजूर ! वहीं खूँटीपर तलवार लटक रही थी, उसे लेकर जनाबको कतलकर देनेकी उसने कोशिश की ।’

‘तब क्या हुआ ?’

‘वहाँ राजमहलकी संभी औरतें शोर सुनकर पहुँच गयीं; उन्होंने ही उनकी जान बचाई । इसके बाद जब जगतसिंहको वह न मार सकी, तब अपनी ही बाँहको जिसे पकड़कर उन्होंने खींचा था, नापाक कहकर काटनेके वास्ते तैयार हो गयी ।’

‘तो बाँह काट दिया उसने ?’

‘नहीं हुजूर ! उस वक्त बूँदी-नरेश छत्रसाल भी वहाँ पहुँच गए थे, उन्होंने बहुत समझाया-बुझाया, तब कहीं जाकर वह रुकी ।’

‘बड़ी बहादुर और पाक-साफ औरत है । मैंने तो कभी भी ऐसी

बहादुरी और पाकीजगी कहीं नहीं देखी और न कही सुननेमें ही आया। कमाल कर दिया उसने। मगर कुसुर तो जगतसिंहका ही है। जब उसे लड़ाईमें वे नहीं जीत सके। तब उनका क्या ताल्लुक रह गया था, जो उससे छेड़छाड़ की ?'

'बात तो ठीक है हुजूर ! मगर आमेर-नरेश उस लड़कीके ऊपर जीजानसे फ़िदा थे !'

'मगर वह लड़की तो उनके ऊपर नहीं फ़िदा थी। ऐसी हालतमें उस बेचारीकी आबरू खराब करनेका उनको क्या हक था ?'

तभी तो उनको तोहीन होना पड़ा जहाँपनाह !'

'तोहीन होनेवाला काम ही है तहव्वरखाँ ! इस तरह किसीकी आबरूपर हमला नहीं करना चाहिए। उस समय छत्रसाल वहाँ मौजूद थे, लेकिन उस राजपूतने मानों बड़ी गनीमत की, नहीं तो जंगमें उसने कई बार जगतसिंहको हरा दिया था, खुद जगतसिंहको मौतके घाट उतार देता। ये दोनों ही छत्रसाल और किरणप्रभा काबिलेतारीफ हैं, इसमें कोई शक नहीं।'

'जहाँपनाहका अन्दाज वाजिब है। जगतसिंह और छत्रसालमें कोई मुकाबला ही नहीं। जगतसिंहसे बूँदी-नरेश लाखगुने अच्छे हैं।' अपनी सहमति प्रकटकर सम्राटकी ही बातोंका समर्थन प्रधानमन्त्री तहव्वरखाँ ने करनेके उद्देश्यसे निवेदन किया।



१७

भारत-सम्राट शाहजहाँका दरबार लगा था। सभी दरबारी यथा-स्थान बैठे थे। सभा-भवनमें स्तब्धता छायी थी। केवल बूँदी-नरेश महाराज छत्रसालका अभी आगमन नहीं हुआ था। सभाकी कार्यवाही ज्योंही प्रारम्भ हुई त्योंही वे भी आ पहुँचे। उन्होंने सभामें पहुँचकर

सम्राटको अभिवादन किया और नियमानुसार सम्राटके पाश्वर्कमें अपने सप्तहजारी मनसबदारीके सम्मानित आसनपर बिराजनेके लिए आगे बढ़े ।

‘आइए महाराज साहब; आज आपको यहाँ आनेमें देर हो गयी । हम आपकी बहादुरी और हिम्मतकी कदर करते हैं । आप जैसे बहादुर थे, दिलेर थे, वैसी ही आपको पाकसाफ और सती बीबी भी मिल गयी । हम आप दोनोंको इज्जतकी निगाहसे देखते हैं ।’ सम्राट शाह-जहाँने छत्रसालका महत्व बढ़ाते हुए कहा ।

शेरशाह और जगतसिंहकी आकृति म्लान हो गयी । सम्राट द्वारा छत्रसाल और उनकी पत्नीकी प्रशंसा सुनकर दोनों व्यक्ति जल उठे ।

‘आप लोगोंकी सारे देशमें शोहरत हो गयी । इतनी बड़ी इज्जत आज-कल और किसीको नहीं मिल सकी है । इसलिए आप और आपकी बीबी दोनों ही काबिलेतारीफ हैं । हम दोनोंकी इज्जत करते हैं ।’ सम्राटने पुनः छत्रसालसे सभाभवनमें कहा ।

‘यह तो जहाँपनाहकी हम अपने ऊपर बहुत बड़ी मेहरबानी मानते हैं, वास्तवमें ऐसी कोई बात तो हम लोगोंमें नहीं पायी जाती; जो प्रशंसा के योग्य हो । इसलिए हम तो सम्राटकी महती कृपा मानते हैं; जो उनकी निगाह हम लोगोंपर इस प्रकार है ।’

‘वाह ! अगर ऐसी बात न होती, तो मैं आप लोगोंकी तारीफ पूरे दरबारमें क्यों करता ? हम तो अपनेसे बढ़कर आपको मानते हैं और औरतोंमें सबसे बढ़कर पाकसाफ व सती आपकी औरत किरणपरभाको मानते हैं । आप जैसे थे, वैसी ही बीबी भी आपको मिल गयी, क्यों नवाब रहेला शेरशाह !’

‘हाँ जहाँपनाह ! मगर हुजूरकी एक बात हमें अच्छी नहीं जँची !’ अवसर पाकर शेरशाह बोला ।

‘वह कौन सी ?’

‘वही कि जहाँपनाहने अपनेसे भी बढ़कर महाराज छत्रसालको कह दिया । हालाँ कि मुझसे और बूँदी नरेशसे कोई दुश्मनी नहीं है; जो मुझे उन्हें देखकर जलन होगी, किन्तु वन्दापरवरने एक मामूली जागीरदारको बढ़ाते-बढ़ाते इतना बढ़ा दिया कि उसे अपनेसे भी ऊपर उठा दिया । यह बात जरा खटकनेवाली है ।’

‘क्यों ?’

‘क्योंकि बादशाहसलामतसे बढ़कर हमारे मुल्कमें तो कोई नहीं है । मगर यदि कोई इस कदर उनकी इज्जत को बढ़ा-चढ़ाकर कहे, जिसमें सारी इन्सानियत और बादशाहतकी तोहीनी हो, तो उसे जायज कैसे कहा जा सकता है । हुज़ूर अगर किसीके ऊपर ज्यादा खुश हो जायें, तो उसे कुछ इनाम देकर उसकी इज्जत कर सकते हैं, मगर अपनेसे भी ऊपर बढ़ा-चढ़ाकर बखान करने लगना दीगर सामन्तों और खासतौर से बादशाह पर खराब असर डालनेके बराबर होता है ।’ नवाब रुहेला शेरशाहने जगतसिंहके हर्षको बढ़ाते हुए कहा ।

‘क्या तुम्हें नवाबसाहब; बूँदी-नरेशकी बहादुरी और खूबी व उनकी बीबी किरणपरभाका औरत-जमातमें पाक-साफ और सती होने में शक है ?’ सम्राटने पूछा ।

‘क्या कहूँ जहाँपनाह ! गुस्नाखी मुआफ की जाए, मैं मान लेता हूँ बूँदी-नरेश बड़े बहादुर हैं, इनमें बड़ी-बड़ी खूबियाँ हैं; मगर आज-कल दुनियामें मैं पूछता हूँ पाक-साफ और सती औरतें पैदा ही कहाँ होती हैं । यों अगर कोई किसीको योंही कहकर इज्जत देना चाहे, तो बात ही और है ।’

‘तो इसका मतलब मैं भूठी बात कहता हूँ’

‘नहीं, जहाँपनाह ! आप भूठी बात नहीं कह रहे हैं, जो सुना है; हुज़ूरने, आप वही फरमा रहे हैं, इसमें शक नहीं । मगर इन्सानमें दो बातें होती हैं, एक दिखाऊ और दूसरी असली । जहाँपनाह ! उसी

दिखाऊ बातको ही सच मान गए, नहीं तो ऐसी कभी तारीफ न करते; यकीन मानिए वन्दापरवर ! किरणप्रभामें ऐसी कोई बात नहीं है कि उसकी पाकीजगी और सतीत्वकी तारीफ की जाए ? यह तो जहाँ-पनाहका सिर्फ ह्याल है, असलमें वह सब सत-वत कुछ भी नहीं है ।’

‘सावधान नवाब महोदय ! वस चुप हो जाओ । आगे जबान मत खोलो । इसे हम कदापि सहन नहीं कर सकते । सम्राट ! देखिए; मेरी स्त्रीकी प्रतिष्ठापर नवाबका यह बहुत बड़ा हमला है । इस तरह हम अपनी पत्नीका अपमान नहीं सहन कर सकते ।’

जहाँपनाह ! मैं आपको यकीन दिलाता हूँ कि बूँदी-नरेश धोकेमें हैं, इनकी औरत हरगिज नहीं सती और पाक-साफ है, मैं इसके लिए शर्त बदनेको तैयार हूँ ।’

‘किन्तु नवाब महोदय; याद रखो, हमारे साथ तुम ज्यादाती करने चले जा रहे हो, अवश्य ही इसका कुफल तुम्हें भोगना पड़ेगा ।’ कहते हुए छत्रसालकी आकृतिमें लालिमा छा गयी, नेत्रोंसे चिनगारियाँ निकलने लगीं । उनके आवेशको शिथिल करनेके उद्देश्यसे सम्राटने कहा— ‘अगर बूँदी-नरेशकी औरत पाक-साफ है, तो तुम्हें क्या सजा दी जाए नवाब साहब ?

‘तब मेरा सर धड़से अलग कर दिया जाए, जहाँपनाह ! मगर इनकी बीबी पाक-साफ और सती न निकली, तब इन्हें क्या सजा दी जायगी ?’ शेरशाह बोला ।

‘मुझे भी ऐसी हालतमें प्राण-दण्ड दिया जाए । मैं भी इसके लिए तैयार हूँ ।’ छत्रसालने क्रोध त्यागकर निवेदन किया ।

‘ठीक है; इसके लिए कितना वक्त चाहते हो ?’ सम्राटने शेरशाह से पूछा ।

‘एक माह इसके लिए काफी है जहाँपनाह !’

‘ठीक है, एक माहके अन्दर यदि शर्त पूरी न हुई, तो एक शरीफ

औरतकी आबरूपर हमला करनेके कुसूरमें तुम्हें सूलीपर चढ़ा दिया जायगा ।’

‘मगर एक शर्त और है खुदावन्द !’

‘अर्ज करो ।’

‘हुज़ूर ! जब तक बन्दा बूँदीसे न लौट आए, बूँदी-नरेशको तब तक यहीं रखा जाए । न तो बूँदीसे महाराजको खत-किताबत करनेका हक होगा और न वहाँ जाने-आनेका ।’

‘मुझे तुम्हारी यह शर्त स्वीकार है ।’ छत्रसालने कहा ।

‘ठीक है, जब तक तुम बूँदीसे लौट नहीं आओगे तब तक महाराज हमारे साथ रहेंगे । अपनी रानीसे कोई ताल्लुक नहीं रखने पावेंगे । कोई खत-किताबत नहीं होने पावेगा ।’

‘अब आजका दरबार बरखास्त किया जाता है, तुम लोग जा सकते हो ।’ सम्राटने पुनः कहा ।

सम्राटको सभी दरबारी अभिवादन कर चले गए । केवल बूँदी-नरेश महाराज छत्रसाल और प्रधान मन्त्री तह्वरखाँ सम्राटके साथ बैठे रह गए ।

‘खुदावन्दने क्या खूब फैसला कर दिया ! वाह, वाह ! यह मामूली बात नहीं थी, जिसको यों ही टाल दिया जाता । जरा अक्लमन्दीसे काम न लिया जाता, तो सारे मुल्कमें दंगा हो जाता ! चाहे हिन्दू हो, या मुसलमान; किसीके साथ हकतलफी नहीं करनी चाहिए । जहाँपनाहने अपने फैसलेमें क्या ही सार्ककी बात कहकर दोनों आदमियोंको ठण्डा कर दिया । बात भी सही है । अगर किसी फिरकेके साथ जरा भी ज्यादाती हो गयी होती, तो जरूर ही उसका बुरा नतीजा भोगना पड़ता ।’ तह्वरखाँने कहा ।

‘यही तो समझनेकी आवश्यकता है । यदि न्याय करनेमें थोड़ी भी असावधानी की गयी या किसी भी पक्षको दबाया गया, तो बहुत बड़ी

समस्या उठ खड़ी हो जाती है। समाजमें वही पक्षपातवाला विष अन्दर ही अन्दर बढ़ता जाता है और शासककी शक्तिको धीरे-धीरे घटाते-घटाते उसे नष्ट कर देना है। जैसे किसी फोड़ेको चीरकर उसका विकार दूर कर दिया जाना अत्यन्त आवश्यक है, उसी प्रकार शासकके लिए राजकार्यमें जाति-भावनासे सर्वथा दूर रहकर सारी प्रजाकी भलाईके लिए अपराधीको दण्ड देना आवश्यक है। यदि किसी अपराधीको पक्षपात या किसी कारणसे दण्ड न दिया जाय, तो अपराधको बल मिलता है तथा शासनमें कमजोरी बढ़ने लगती है। धीरे-धीरे यही बढ़ती हुई कमजोरी शासनका अन्त कर देती है। इसलिए शासकको चाहिए न्यायकी रक्षा प्राणसे बढ़ कर करे। जनतामें तभी शासनके प्रति निष्ठा पैदा होती है और सबका आतंक दूर हो जाता है। हमारे सम्राटमें ये विशेषताएँ पहलेसे ही मौजूद हैं। इसीलिए जनतामें सभी वर्गके लोगोंमें सम्राटके प्रति विश्वास, सन्तोष और आदरकी भावना भरी है; जिस कारण सारे साम्राज्यमें कहीं भी अशान्ति और विद्रोह नहीं हुआ है और न होनेकी संभावना ही है। सम्राट न्याय-प्रिय हैं; इसकी चर्चा सभी जगह सदैव होती रहती है।' महाराज छत्रसालने गम्भीरतापूर्वक अपने उद्गारोंकी अभिव्यक्ति सम्राटके समक्ष की।

कुछ देर पश्चात् जगतसिंह शेरशाहके आवासस्थान पर जा पहुँचे। नवाबने उनका स्वागत किया और बड़े आदरसे उन्हें बैठाया।

‘आपने आज बड़ा दुष्कर कार्य किया है नवाब साहब ! मैं तो आपके प्राणोंके भयसे व्याकुल हो उठा हूँ। आपको इतना बड़ा खतरा नहीं मोल लेना चाहिए था।' जगतसिंहने अत्यन्त आत्मीयता प्रदर्शित करते हुए कहा।

‘मैं अपनी जानकी परवाह आपके लिए नहीं कर सकता महाराज ! मुझे आपका बदला लेना ही है, वैसे इसके लिए आपको फिक्र करनेकी कोई जरूरत नहीं है, अगर मैं इस काममें इन्शाअल्लाह कामयाब हो गया

तो हमेशाके लिए आपकी राहके काँटेको दूर कर दूँगा ।’

‘और यदि कामयाबी न मिली; तब तो मेरी राहमें काँटेकी जगह भाले पड़ जायेंगे और हमेशाके लिए मैं अनाथ ऊपरसे हो जाऊँगा ।’ चिन्ता व्यक्त करते हुए जगतसिंहने कहा ।

‘क्यों, कामयाब क्यों न होऊँगा । हर एक काम सोच-समझकर ही मैं करता हूँ । इसके लिए आप फिक्र न करें । मैं ऐसा जाल बिछा दूँगा जिससे उबरना छत्रसालका मुमकिन नहीं । आप चलिए बैठिए ।’

‘मुझे तो आपकी इन बातोंपर बड़ा सन्देह हो रहा है, जिस शत्रुसे आपने यह प्राणों तककी शर्त बद ली वह कम अक्लमन्द नहीं है, उसे जालमें फँसा पाना अत्यन्त कठिन है । कहिए तो अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है; बादशाहसे कहकर इस शर्तनामेको रद्द करवा दिया जाय ।’

‘अगर शर्तसे मैं हटता हूँ तब भी सजा भोगनी पड़ेगी मेरे जरिए छत्रसाल और उनकी बीबीको भरे दरबारमें तौहीन होना पड़ा है, भला वह कभी हमें माफ कर सकता है ? और मैं बादशाहसे कैसे कह सकता हूँ कि मेरा शर्तनामा रद्द किया जाए ।’

‘आपको नहीं, यह मुझे कहना होगा । हाँ यदि आपसे पूछा जाय तब आप कह दीजिएगा—‘हुजूर शराबके नशेमें मैंने बिना समझे-बूझे यह सब कह दिया । खता माफकी जाय ।’

‘कमानसे छूटा तीर वापस नहीं लौटता महाराज ! जो हो गया, सो हो गया । चलकर आप इन्तजार कीजिए । एक महीनेके बाद आपके दुश्मनको जरूर सूलीपर चढ़ा दिया जायगा । अब चलकर आप भी मेरी फतहके लिए खुदासे इबादत करें ।’

‘वास्तवमें यह मामला मौत और जिन्दगीका है, यदि इसमें सफलता मिली; तब तो कुछ कहना ही नहीं; किन्तु यदि हार हुई, तो बे भाई मौत मरना होगा । इसमें मेरी और आपकी किस्मतका फैसला होगा ।’

‘हाँ; यह तो मैं कहना ही आपसे भूल गया । अब याद आया है ।’

जगतसिंहका ध्यान आकृष्ट करते हुए शेरशाहने कहा ।

‘क्या ?’ जगतसिंह किसी गम्भीर बातकी जिज्ञासासे बोल उठे ।’

‘यही कि कुछ मेरी तकदीर और कुछ आपकी तकदीर दोनों मिलकर क्या छत्रसालकी तकदीरसे कमजोर पड़ेंगी ?’ हँसकर शेरशाह बोला ।

‘किन्तु मेरी तकदीरकी तेजी तो अभी हालमें ही आपने देख ही ली है ।’ मुस्कराते हुए जगतसिंह कह उठे ।

‘अकेले नहीं, मेरे साथ मिलकर वह तेज ही हो जायगी महाराज !’ शेरशाहने भी हँसकर उत्तर दिया ।

‘हँसीकी नहीं, नवाब साहब ! यह बात बड़ी ही गम्भीर है । इपमें जरा भी असावधानी बड़ी घातक सिद्ध हो सकती है ।’

‘मैंने आपका मन हल्का करनेके लिए ऐसा कहा है, और है वाकई लापरवाही करने काबिल बात नहीं । अब आप इजाजत दें, जी-जानसे मुझे काममें जुट जाना है ।’

‘ठीक है मेरा दिल आपके लिए बहुत दुखी हो उठा था, इसीसे चला आया था । अब आज्ञा दीजिए, मैं चला ।’ कहते हुए आमेर-नरेश उठकर चल पड़े । नवाबने उन्हें थोड़ी दूर जाकर पहुँचाया ।



१८

‘महारानीजी ! आपसे मिलने सम्राट शाहजहाँकी छोटी बेगम राहत-जानने पधारा है ।’ प्रतिहारिणीने महारानी किरणप्रभासे निवेदन किया ।’

‘राहतजान ? यह तो स्वयंवरसभामें सम्राटके साथ नहीं आई थीं । उस समय उनके साथ तो मुमताज बेगम ही थीं, जिन्हें मैंने देखा भी था ।’ मनमें सोचकर किरणप्रभाने कहा—‘ठीक है, उन्हें लिवा आओ ।’

प्रतिहारिणी राज-भवनके बाहर चली गयी । महारानी किरणप्रभा बेगमके स्वागतमें अपनेको प्रस्तुत होनेकी तैयारी करने लगी ।

राज-भवनके बाहर बेगमकी पालकी रुकी थी; शाही वेशभूषामें पालकी ढोनेवाले कहार एक वृक्षकी सघन छायामें पालकी नीचे रखकर बूँदी-महारानीके आदेशकी प्रतीक्षा करने लगे । थोड़ी देरमें उन लोगोंने प्रतिहारिणीको अपनी ओर आते देखा । उसने वहाँ पहुँचकर पालकीका परदा उठाकर बेगम साहिबाको अभिवादन किया । बेगमकी वेशभूषा और रोबीली आकृतिसे वह बहुत प्रभावित हो गयी । अत्यन्त विनम्रतासे प्रतिहारिणीने निवेदन किया —‘बेगम साहिबा ! महारानीजीने आपको आदरपूर्वक ले चलनेके लिए मुझे भेजा है । वे आपके स्वागतमें बड़ी प्रतीक्षा कर रही हैं ।’

बेगम राहतजात मौन थी; उसने प्रतिहारिणीको बिना कुछ उत्तर दिए ही उसके साथ चल दिया । शाही वेशभूषाके पालकी ढोनेवाले कहार वहीं पालकीके पास रुक गए । प्रतिहारिणीने बेगमको साथ लेकर महारानी किरणप्रभाके कक्षमें प्रवेश किया । महारानीकी दृष्टि अपने समक्ष बेगम राहतजानको उपस्थित देख स्थिर हो गयी । शाही वेश-भूषा, महामूल्यवान् हीरा-जवाहिरात जड़े हुए आभूषण, बीस-पच्चीस-वर्षकी अवस्थामें पहुँची अत्यन्त कोमल, स्वस्थ गौरवर्ण और लालिमा लिए हुए सुन्दरता, शिष्टता और महानताकी अत्यंत जागरूक सजीव-प्रतिमा अपने समक्ष देखकर किरणप्रभा विनम्र हो गयी । उसने बेगमको अभिवादन किया और अत्यंत आदरके साथ बैठनेको आसन दिया । रानी बेगमके आकर्षक व्यक्तित्वसे बहुत प्रभावित हुई । उसे पूर्ण विश्वास हो गया—‘निश्चय ही यह स्त्री सम्राटकी बेगम होनेके योग्य है । आकार-प्रकार, वेशभूषा भाव-भंगिमा और बड़प्पन आदि सभी लक्षण इस नारीमें बहुत उचित मात्रामें विद्यमान हैं । क्षणमात्रमें आपाद-मस्तक दृष्टि दौड़ाकर किरणप्रभाने राहतजानका मूल्य स्थिरकर बड़ी विनम्र

बाणीमें निवेदन किया—‘बेगम साहिबा ! आपने हमारे ऊपर बड़ी कृपाकी । यहाँ पधारकर आपने अपना दर्शन देकर मुझे बहुत प्रभावित किया है, इस कृपाके लिए हम कृतज्ञ हैं ।’

‘रानी साहिबा ! हमारी तो बहुत दिनोंसे महाराज छत्रसालके ऊपर मुहब्बतकी निगाह है । मैं राजा साहबको बहुत मानती हूँ । अगर कोई उनकी बुराई करता है, तो हमें सहन नहीं होता । राव साहब भी हमारे ऊपर बड़ा प्रेम रखते हैं और हमें बुझा कहकर पुकारते हैं । इसी मुहब्बतकी वजहसे मैं अजमेर जाते हुए इधर चली आयी और आज आपको देखकर तबियत बहुत खुश हो गयी । जैसे हमारे महाराव साहब हैं, वैसे ही आपको आप भी मिल गयीं । इन्शाअल्लाह आप दोनोंको जिन्दगीमें हमेशा कामयाबी मिलती रहे, यही हमारी खाहिश है ।’

‘यह सब आपका आशीर्वाद है, बेगमसाहिबा !’

‘हमें आप भी बुझा कहा करें । ‘बेगम साहिबा’ नजदीकी न होनेकी वजहसे यदि कोई कहता है तो ठीक है, मगर हमलोगोंका आपसी नाता तो बहुत नजदीकका है ।’ मुस्कराकर राहतजानने आत्मीयता प्रदर्शित करते हुए कहा ।

‘तो आप भी मुझे ‘रानी साहिबा’ और ‘आप’ न कहा करें ।’ मन्द मुस्कानके साथ किरणप्रभाने निवेदन किया ।

‘अच्छी बात है, मैं तुम्हें बेटी कहा करूँगी, बस ?’

‘और मेरा निश्चय तो बुआजी कहनेका हो ही गया है बेगमसा ..’ कहते हुए जिह्वा दाँतोंसे दाबकर किरणप्रभा हँस पड़ी ।

उसकी हँसीमें राहतजानने भी योग दिया, जिससे हँसीने अट्टहास का रूप धर लिया । किरणप्रभाने कुछ शालीनता व्यक्त करते हुए निवेदन किया—‘बुआजी ! आदत पड़ जायगी, तो बेगम साहिबा कहने की असावधानी पुनः न होगी । गलती पहली है, इसे क्षमा करें ।’

‘क्षमा-वमा कुछ नहीं, मैं तो कुछ नहीं कह रही हूँ ।’

‘अपनेसे छोटोंकी गलती माफ करना और उस पर कुछ भी ख्याल न करना—बुरा न मानना ही बड़ोंका बड़प्पन है बुआजी !’ राहतजानको आदर प्रदान करते हुए कलहासिनी किरणप्रभाने मधुर मुस्कानसे उसे प्रभावित कर दिया ।

‘मुझे तुम्हें देखकर जो खुशी है बेटी, उसे मैं कह नहीं सकती । महाराव साहबके लिए मेरे दिलमें जितनी मुहब्बत है उससे भी बढ़कर तुम्हारे लिए है । जब कासिमखाँको महाराव साहबने गिरफ्तार किया था, उस वक्त शाहंशाहको बेहद गुस्सा आया और वे शाही फौजको बूँदीपर चढ़ाई करनेका हुक्म देने ही वाले थे, मगर मैंने ही उन्हें समझा-बुझाकर रोका । उलटे सारा कुमूर सूबेदार कासिमखाँ का ही निकाल दिया और वह सूबेदारीसे निकाल दिया गया । जब तुम्हारी शादीके लिए आमेर-नरेश जगतसिंह और नवाब रूहेला शेरशाह तमाम जाल फैलाकर तुम्हारे वालिदको तौहीनकर जबरन तुम्हें हड़पना चाहते थे और इसके लिए उन लोगोंने शाहंशाह तकको अपनी ओर मिला लिया था, तब मैंने खुद तुम्हारी शादी स्वयंवरजंगके जरिए करानेके लिए आला हजरतको मजबूर किया था । कभी-कभी जब मुमताज बेगम भी महाराव साहबकी खिलाफत करती हैं, तो उन्हें भी समझा-बुझाकर और जरूरत पड़नेपर डाट-डपटकर भी ठीक रास्तेपर ला देती हूँ, जब तक बन्दीकी जानमें जान है, बेटी । तुम फिकिर मत करना ।’ अपना प्रभाव जमानेके उद्देश्यसे राहतजानने किरणप्रभाका ध्यान विशेष आकृष्ट किया ।

‘हमलोगोंको आपका ही भरोसा है बुआजी ! गाढ़े दिनोंमें जो काम आवे, वही अपना है । इसलिए आपके किए उपकारोंको हम लोग भूल नहीं सकते । बिना किसी स्वार्थके ही आप इतनी कृपा रखती हैं; हम-लोग उसका बदला नहीं चुका सकते और आपको किसी बातकी कमी भी नहीं है, जिसे पूरा करनेकी लालच आपको कोई देकर जो कराना

चाहे, कराले । आपसे कोई अपना स्वार्थ भले सिद्ध करले, किन्तु आपको इसकी कोई आवश्यकता ही नहीं ।’

‘नहीं बेटी; महाराव साहबकी चाल-चलन और उनकी नेक-नियती, बहादुरी और रहमदिलीका मेरे ऊपर बड़ा असर है, इसी वजहसे मैं तुम्हें बहुत मानती हूँ और उनकी भलाईमें लगी रहती हूँ । पहले शाहंशाहकी निगाहमें जगतसिंह और शेरशाहकी बहुत कदर थी; मगर जबसे धीरे-धीरे मैंने उनका दिमाग पलटा है, तबसे रावसाहबकी इज्जत सबसे ज्यादा है, बिना उनसे सलाह-मशविरा लिए शाहंशाह कोई काम नहीं करते । अब आज-कल रावसाहब एक महीने तक बूँदी न आ सकेंगे, काम बहुत ज्यादाह आ गया है, फुरसत न मिलेगी ?’ किरणप्रभा पर अपना प्रभाव जमाते हुए राहतजानने कहा ।

‘हमें आपके ऊपर विश्वास है बुआजी ! अवश्य ही यह सब आपकी ही कृपाका फल है । खैर, अभी तक तो आपने कुछ खाया-पिया ही नहीं । बात फिर होगी । पहले कुछ खा-पी लें ।’

‘मुझे खाने-पीनेकी ऐसी कोई खास स्वाहिश नहीं है, मगर हमारे कहारोंको जरूर ही कुछ खिला-पिला दो और मुझे इजाजत दो । मैंने तुम्हें देखकर स्वाहिश पूरी कर ली । महाराव साहबने मुझे न्यौता दिया था, शादीमें मौका न पानेसे आज आयी हूँ । काम पूरा हो गया ।’ अनिच्छा व्यक्त करते हुए राहतजान बोली ।

‘शाही कहारोंके खाने-पीनेका प्रबन्ध हो चुका है, अब केवल आपका बाकी है बुआजी !’

‘बस ठीक है । कहारोंके खा-पी लेनेसे मान लो मैं भी खा-पी चुकी, इसके लिए परेशान होनेकी कोई बात नहीं ।’

‘आप निमंत्रण स्वीकारकर यहाँ पधारी हैं, बुआजी; अतः इतनी जल्दी आपको विदा नहीं दी जा सकती और न तो बिना खिलाए-पिलाए आपको छोड़ा ही जा सकता है । किरणप्रभाने आग्रह प्रदर्शित किया ।

प्रतिहारिणी स्वर्णपात्रमें खाद्य-सामग्री लेकर उपस्थित हुई। किरण-प्रभाने निवेदन किया—‘लीजिए बुआजी ! हमारी सेवा ग्रहण कीजिए।’

‘बेटी ! तुमने यह सब क्या किया ? अब छुट्टी चाहती हूँ।’

‘ऐसा कदापि न होने दूँगी बुआजी ! आपको दो-चार दिन यहाँ रहने पड़ेंगे। आपसे हाथ जोड़कर प्रार्थना है; मेरा आग्रह स्वीकार करें।’

‘अच्छा ! क्या कहूँ ? तुम्हारा दिल तोड़ा नहीं जा सकता। अगर तुम्हारी बात नहीं मानती, तो तुम्हारे दिलको चोट पहुँचेगी, लाओ भाई ! कुछ खा ही लिया जाय।’ कुछ नरमीका प्रदर्शन करते हुए राहतजानने कहा।

‘बुआजी ! केवल जलपान करनेसे ही काम नहीं पूरा होगा और न तो छुट्टी ही मिलेगी। आपको अभी दो दिन कमसे कम रहने भी होंगे। जब तक सेवा करने का थोड़ा अवसर न मिलेगा, तब तक हमारी इच्छाएँ मनमें ही दबी पड़ी रह जायेंगी। इसीलिए इनका भी...।’

ख्याल रखना होगा; क्यों ?’ थोड़ा हँसकर राहत जान बोली।

‘न्याय दृष्टिसे यह बहुत आवश्यक है बुआजी ! आप तो बड़ी उदार हैं, अवश्य ही इस पर आपका ध्यान आकृष्ट करना मेरा परम कर्त्तव्य है।’

‘मुझे तो तुम्हारी हर बात पर ख्याल है; मैं तुम्हें नाराज नहीं करना चाहती बेटी ! तुम्हारी ही तरह मेरी एक लड़की थी, हू बहू तुम्हारी ही शकलकी, अब इस दुनियाँमें वह नहीं रही। मुझे तो तुम्हें देखकर उसकी भी याद ही आई है। तुम्हारी ही तरह वह भी जिस बातकी जिद पकड़ती थी, उसे बिना पूरा कराए न छोड़ती। कभी-कभी शाहंशाह खुद उसकी स्वाहिशोंको पूरा न कर पाते थे।’

‘बच्चोंका ख्याल माता-पिताको करना ही पड़ता है बुआजी ! इसीलिए मैं भी आपसे प्रार्थना करती हूँ दो दिन रहकर मेरी भी इच्छा पूरी करें।’

‘दो दिन नहीं बेटी ! अगर तेरी यही स्वाहिश है, तो मैं आज रह जाऊँगी।’

शाही-कहारोंकी अतिथि-भवनमें रहनेका प्रबन्ध हो गया और राहतजान किरणप्रभाके साथ रह गयी। यहाँ रहकर राहतजानने अपनी उदारताकी अनेक कथाएँ किरणप्रभाको सुना-सुनाकर मुग्ध कर लिया। रात्रिमें राहतजानने पुनः वार्ता प्रारम्भ की। उसने कहा—‘बेटी ! तुम्हारी बहादुरी और पाकीजगीकी शोहरत चारों ओर सारे मुल्कमें फैल गयी। उस दिन जबसे मैंने इसे सुना तबसे तुम्हें देखनेकी ओर भी ख्वाहिश बढ़ गयी।’

‘क्या बुआजी ?’

‘तुम्हारी और जगतसिंहकी विदाईके मौकेपर हो गए भगड़ेकी बात। अच्छा किया तुमने।’ इससे तुम्हारी इज्जत बहुत बढ़ गयी। ऐसे लोगोंके साथ इसी तरह पेश आना चाहिए।’

‘यदि उस समय ऐसा न करती बुआजी ! तो मेरी सारी प्रतिष्ठा सदैवके लिए समाप्त हो गयी होती। प्रत्येक चरित्रवान् महिलाका प्राण-प्रणसे अपने सतीत्वकी रक्षा करना परम कर्त्तव्य है। यदि स्त्रीका चरित्र ऊँचा है, तो उसे नीचे कोई नहीं गिरा सकता; क्यों आपका क्या ख्याल है।’

‘बेशक बेटी ! इसका तो तुम खुद ही सुबूत हो।’ किरणप्रभाकी महत्ता बढ़ाते हुए राहतजानने उसकी प्रशंसा कर दी।

तरह-तरहकी अनेक बातें और और अनेक प्रसंग चला चलाकर किरणप्रभाके अत्यंत निकट रहकर राहतजान गंभीर और बारीक अध्ययन उसके संबंधमें करने लगीं। उसने देखा—‘महारानीने अपनी बायीं भुजा पर ऊपर महाराजका और नीचे अपना नाम अंकित करा रखा है। रात्रि में सोते समय दीपक प्रकाशमें किरणप्रभाकी सुषमा निखर-सी उठी है। गोली और पुष्ट जाँघें जिनपरसे सोते समय परदा कुछ हट-सा गया है अर्द्धनग्नावस्थामें बड़ी सुन्दर प्रतीत हो रही थी। दाहिनी जाँघमें लहसुन का और बायीं जाँघमें एक बड़े तिलका चिह्न विद्यमान है। राहतजानने

रात्रिमें किरणप्रभाके अंग-प्रत्यंगकी बनावट उनके सौष्ठव और पुष्ट, स्वस्थ शरीरका खूब निरीक्षण किया। वह सोचने लगी—सचमें इस स्त्रीके समान सुन्दर दूसरी स्त्री इस वक्त कहीं भी नहीं है। जितनी ही इसमें खूबसूरती है, उससे बढ़कर इसका मधुर स्वभाव है और उससे भी अधिक बढ़कर यह चरित्रवान् है। सभी खूबियाँ इस औरतमें कूट-कूटकर भरी हैं।

‘प्रातःकाल होने पर दोनों महिलाएँ उठीं। शौच आदिसे निवृत्त होकर राहतजानने कहा—‘बेटी ! अब तो मुझे इजाजत दो; मैं जाना चाहती हूँ।’

‘यह कैसे हो सकता है बुआजी ! नहा-खाकर चली जाइएगा, अभी क्या जल्दी पड़ी है ?’

‘मगर इसके बाद फिर रोकने लगे तो ?’

‘प्रार्थना करना तो सेवकका धर्म ही है बुआजी ! उसे मानना या न मानना आपके ऊपर निर्भर करता है।’

‘तुम तो अपने पासमें रखना ही चाहती हो और तुम्हारा बस चले, तो मुझे कभी भी जाने न दो। मगर हमें तो जाना ही है, वह भी तुम्हारी स्वाहिशके खिलाफ। जब ऐसी ही बात है, अभी ही क्यों न वह काम करूँ।’ कुछ मुस्कराकर राहतजान बोली।

‘नहीं, नहीं मेरी अच्छी बुआजी ! मैं तुम्हें अधिक नहीं रोकना चाहती। केवल नहाने-खानेके लिए थोड़ी देर और रुक जाइए। इसके पश्चात् न रोकूँगी।’ मुस्कराकर किरणप्रभा बोली।

‘अच्छी बात है बेटी ! मैं तुम्हें छोटी-सी बातके लिए नाखुश नहीं करना चाहती। कहीं-न-कहीं तो नहाना-खाना होगा ही और वह दूसरी जगह न होकर यहीं पूरा कर लूँगी।’

‘चलिए आपके नहानेका प्रबन्ध कर दूँ। मेरे ही नहानेका क्यों, तुम नहीं नहाओगी ?’

‘मैं भी नहा लूँगी। मगर पहले आपके लिए तो प्रबन्ध कर दूँ।’

‘मेरे लिए कोई खास परबन्ध-वरबन्ध मत कर बिटिया ! मैं तो तेरे साथ ही आसानीसे नहा लूँगी ।’

दोनों स्नानागारमें नहाने चली गयीं । किरणप्रभाने कहा—‘यहाँ आप नहा लें, मैं बादमें नहा लूँगी ।’

‘नहीं, नहीं आओ, साथ ही नहा लें; हर्ज ही क्या ?’

‘हर्ज कुछ नहीं, आप नहा लें; बादमें नहा लूँगी ।’

‘आओ भी तो ! मैं तुम्हें नहला दूँ; बादमें मैं भी नहा लूँगी । मैं तुम्हारी और तुम हमारी नहानेमें मदद करो । चलो साथ ही साथ नहा लिया जाय ।’ कहते हुए राहतजान किरणप्रभाको स्नानगृहमें पकड़ ले गयी ।

राहतजान वहाँ स्नानके समय नान हो गयी । किरणप्रभाको बुआकी यह प्रक्रिया अभद्र लगी । लज्जासे उसका मस्तक झुक गया । ‘क्यों तुम लजा गयी बेटी ! इसमें लजानेकी कोई बात नहीं है । बेपर्द होकर ही नहाना चाहिए । इसी वजहसे गुसुलखाना बना है । गुसुल-खानेमें बेपर्द होकर नहानेमें खूब सहूलियत होती है ।’

‘किन्तु बुआजी ! हमारी आदत ऐसी नहीं है । मैं किसीके सामने नग्न होकर नहीं नहा सकती । मुझे बड़ी लज्जा आती है ।’

‘लाज किस बातका बेटी ! यहाँ कोई मर्द तो है नहीं । औरतसे औरतकी क्या लाज ?’

‘बात ठीक है बुआजी ! हमलोगोंमें ऐसा रवाज नहीं है । आप नहा लें । मैं रोजकी तरह नहा लूँगी ।’ दृढ़ता व्यक्त करते हुए किरणप्रभाने उत्तर दिया ।

राहतजानने बड़ा प्रयत्न किया, किन्तु किरणप्रभाने उसकी सारी चेष्टाओंको हँसकर टाल दिया । अपने प्रयत्नोंमें विफल होकर राहतजानने स्नान किया और कहा—‘अच्छा भाई ! परदा न हटाओ आओ मैं तुम्हारे ऊपर पानी छोड़ती जाऊँ, तुम नहा लो ।’

‘आपको यह कष्ट मैं नहीं दे सकती; मेरी बुआजी ! मैं नहा दूँगी ।’

‘कष्ट-वष्ट कुछ नहीं होगा मुझे । तुम बेफिक्र रहो ।’ कहते हुए राहतजानने लोटा हाथमें ले लिया । किरणप्रभाके ऊपर उसने पानी डालते हुए कहा—‘यह बेटी ! तुम्हारी जाँघमें लहसुनका निशान कबसे है ?’ उँगलीसे जाँघका स्पर्शकर उसने पूछा ।

‘यह तो जन्मसे है बुआजी !’

‘ओह ! और इस जाँघमें भी है ?’ कपड़ा हटाकर देखते हुए उसने पुनः पूछा ।

‘यह तो तिल है बुआजी !’

‘तुम्हारे हिन्दू मजहबमें इसे अच्छा समझा जाता है; क्यों ?’

‘हाँ बुआजी ! है कुछ ऐसी ही बात ।’

स्नान और वार्त्ता समाप्तकर दोनों स्नानागारसे बाहर निकलीं । आप थोड़ी देर तक मुझे छुट्टी दे दें । मन्दिरमें मैं पूजा कर आऊँ ।’

‘ठीक है; यह तो होना ही चाहिए । खुदाकी इबादत जरूर करनी चाहिए ।’

पूजन-कार्य समाप्तकर किरणप्रभा ने भोजन-प्रस्तुत करनेका प्रति-हारिणीको आदेश दे दिया । वह भोजन लेकर उपस्थित हुई । राहत-जान खानेके लिए आसन पर जा पहुँची ! उसके समक्ष उपस्थित होकर किरणप्रभा ने निवेदन किया—‘बुआजी ! आपके दर्शनसे मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है; अब आपकी कृपा फिर कब होगी ?’

‘और तुम हमारे यहाँ कब तक आओगी बिटिया ! तुमने तो यह बताया हा नहीं ।’ भोजन करते हुए राहतजानने पूछा ।

‘मेरा आना तो महाराजकी आज्ञा पर निर्भर है बुआजी ! हमारे यहाँ धार्मिक-ग्रन्थोंमें स्त्रियोंको आज्ञा दी नहीं दी गयी है । बिना अपने पतिकी आज्ञाके हिन्दू औरतोंको कहीं आने-जानेकी स्वतन्त्रता नहीं है । पतिकी आज्ञाका पालन करना स्त्रियोंका परम कर्त्तव्य माना गया है ।

जो स्त्रियाँ ऐसा नहीं करतीं; वे निन्दाका पात्र ही नहीं होती; बल्कि उनको नरक भी होता है ।’

‘तुम्हारा क्या ख्याल है इसमें बिटिया ?’ पानीका घूँट पीते हुए उसने कहा—

‘अपने मजहबमें सब विश्वास रखते हैं बुआजी ! और मैं भी ऐसा ही करती हूँ ।’

‘मैं तो तुम्हें अपने साथ अजमेर लिवा चलनेके लिए आयी हूँ और तुम्हें चलना भी चाहिए । अपने मजहबके मुताबिक सब काम करो मुझे एतराज नहीं ।’

‘किन्तु मैंने पहले ही आपसे प्रार्थना की है कि बिना पतिदेवकी आज्ञाके मैं राजमहलके बाहर कदम नहीं रख सकती । मेरे ऐसा करनेसे आप अपना न तो अपमान समझें और न आज्ञा उल्लंघन ही । इसे आप मेरे आचरणकी दृढ़ता और मेरा धर्ममें विश्वास समझें बुआजी !’

‘मगर किसी बातको कुछ भी समझ लेना और उसकी असलियत का कुछ और होना, दोनों एक ही बात नहीं मानी जा सकती । ऐसी हालतमें दोनों बातोंको एक ही मान बैठना या कुछका कुछ मान लेना बहुत बड़ी गलती हो जानेका डर रहता है बिटिया !’

‘मैं आपकी हर बात माननेको तैयार हूँ बुआजी ! और आपका आदर भी करती हूँ, किन्तु सब धर्मके अन्दर ही । धर्मकी मर्यादा तोड़ देनेका मतलब होता है, आत्मग्लानिकी तीव्र वेदनासे घुल-घुलकर या तड़प-तड़पकर मरना ! धर्मकी रक्षासे ही मानसिक शान्ति और अपनी रक्षा प्राप्त होती है । अपनी दृढ़ता व्यक्त करते हुए किरणप्रभाने निवेदन किया ।

‘वाह बिटिया ! मैं तेरे इस जवाबसे बहुत खुश हूँ । असलमें मैं तुम्हारे मजहबके खिलाफ तुमसे कुछ नहीं कराना चाहती । यह तो मैं तुम्हारा इम्तहान लेना चाहती थी ।’ किरणप्रभाके सिद्धान्त प्रतिपादनसे

उत्पन्न कटुताका निवारण करते हुए बेगमने विषमता दूरकर देनेका प्रयत्न किया ।

किरणप्रभा जो बेगमकी आचरण-विरुद्ध वात्तसि कटुताका अनुभव कर रही थी, पुनः उसके प्रति उदार हो गयी । राहतजान भोजनोपरान्त विदा होनेके लिए तैयार होने लगी । वह बोली—‘बेटी ! तुमने जो मेरी खातिरदारी की है, वह हमेशा याद रहेगी; उसके लिए मैं तुम्हारी शुक्रिया अदा करती हूँ । अब मैं अजमेरशरीफ जाना चाहती हूँ ।’

‘मैंने तो आपकी कोई खास सेवा नहीं की बुआजी ! हमारे और महाराजके ऊपर आपकी जो कृपा रहती है, उसका मूल्य हम नहीं चुका सकतीं ।’

‘मगर उसकी कीमत मैं तो समझती हूँ बिटिया ! तुम्हारे बारेमें मैंने जो कुछ सुना था, उससे भी बढ़कर तुम्हें पाया । वाकई तुम बहुत खूबसूरत, नेकदिल, शरीफ और काबिलेतारीफ हो । हम तुम्हें कभी भूल नहीं सकतीं ।’ राहतजानने प्रेम दशति हुए कहा ।

‘नहीं बुआजी ! आपका दयालु चित्र है, आप महान् हैं । सब और आपको महानता ही महानता दिखायी पड़ती है । गन्दे जलसे भी चंद्रमाकी छाया साफही दिखायी पड़ेगी ।’ किरणप्रभाने विनम्र निवेदन किया ।

आपसमें वात्ता चलाते हुए दोनों शयन-कक्षमें प्रविष्ट हुईं । वहाँ राहतजानकी दृष्टि खूँटीपर टँगी एक विशिष्ट कटार पर पड़ी, जिसमें एक और महाराज छत्रसाल और दूसरी और महारानी किरणप्रभाका नाम अंकित था । राहतजानने कहा—‘वाकई यह कटार काबिलेतारीफ है ।’

यह हमारे पातिव्रत धर्मके चिह्नकी विशेष निशानी है, या मों कहिए कि यह हमारा सुहाग-चिह्न है बुआजी ! विवाहके अवसर पर महाराज द्वारा यह मुद्रिका और यह कटार मुझे प्राप्त हुई है । ये दोनों वस्तुएँ मुझे प्राणसे भी अधिक प्रिय हैं बुआजी !’

‘तो ऐसी बात है ?’ सिर हिलाते हुए किरणप्रभाकी बातोंका समर्थन करते हुए राहतजानने कहा ।

‘अब आपके दर्शन कब होंगे बुआजी ?’

‘देखा जायगा बेटी ! जल्द ही कभी आ जाऊँगी ।’

‘यह लीजिए बुआजी ! यह मेरा उपहार स्वीकार करें ।’ एक मूल्यवान् स्वर्णहार राहतजानके समक्ष प्रस्तुत करते हुए हाथ जोड़कर किरणप्रभाने निवेदन किया ।

‘नहीं, नहीं; इसकी कोई जरूरत कहीं बिटिया ! यह लो मेरी ओरसे यह मेरी भेंट कबूल करो । मैं तुम्हारा कुछ नहीं लूँगी । तुम्हें देना चाहिए कि तुमसे मैं कुछ लूँगी ?’ अपना एक मूल्यवान् आभूषण किरणप्रभाके समक्ष उपस्थित कर उसने मुस्कराकर कहा ।

किरणप्रभा संकुचित हो उठी । वह राहतजानका कुछ भी नहीं ग्रहण करना चाहती थी । अतः उसने निवेदन किया—‘नहीं, नहीं; बुआजी ! आपकी कृपा बनी रहे, हमलोग इतनेसे ही बहुत प्रसन्न हैं । हमारा उपहार आप अवश्य ही ग्रहण करें, इसमें हमें अपने सम्मानका अनुभव होगा ।’

‘क्या कहूँ बेटी ! मुझसे तो कुछ भी कहा नहीं जा रहा है । यदि तुम्हारी कोई चीज नहीं लेती, तब भी नहीं बनता और लेती हूँ; तब भी नहीं बनता, बड़ी हैरानी है; क्या कहूँ ?’

‘नहीं बुआजी ! कुछ-न-कुछ तो आपको अवश्य ही ग्रहण करना होगा, मेरी बुआजी ! मैं आपकी कृपाका ख्याल जब करती हूँ, तब हमारा हृदय प्रेमसे भर जाता है, बिना कुछ दिए मैं यहाँसे आपको कैसे विदा कर सकती हूँ ।’

‘अरे भाई ! अगर तू जिद्द ही करती है, तो तेरा गहना—सोना-चाँदी तो मैं नहीं लूँगी, हाँ अगर तू देना ही चाहती है, तो ला यह अपनी कटार और अँगूठी हमें दे दे । इसे मैं बहुत हिफाजतसे रख छोड़ूँगी ।

इसमें तुम्हारा और महारावसाहबका नाम खुदा है, बेशक भेंट वगैरहके हिसाबसे यह बहुत अच्छी चीज होगी ।’

महारानी किरणप्रभा निष्प्रभ हो गयी, उसकी आकृति म्लान हो गयी । उसने मौन धारण कर लिया । थोड़ी देरके लिए वहाँ स्तब्धता छा गयी ।

‘क्यों बिटिया ! तू चुप क्यों हो गयी ?’

‘यह भेंट आप स्वीकार करें । यदि आप कटार और मुद्रिका भी चाहती हैं, तो उसे भी बनवा दूँगी या बनी रखी हैं, दे दूँगी ।’ अत्यन्त संकोचसे किरणप्रभाने निवेदन किया ।

‘नहीं बिटिया ! शुभे कटार और अँगूठी वही चाहिए जो शादीके मौके पर तुम्हें मिली हैं । दोनोंमें तुम दोनोंका नाम खुदा है, यह खसूसियत दूसरी कटार और अँगूठीमें नहीं है ।’

‘ठीक है; दूसरी कटार और अँगूठीमें भी अपने दोनोंका नाम खुदवा दूँगी ।’ किरणप्रभा बोली ।

‘नहीं बिटिया ! इससे कोई फायदा नहीं । मेरी निगाहमें जो इज्जत शादीके मौके पर मिली कटार और अँगूठी की है, वह दूसरी अँगूठी और कटार की नहीं हो सकती । इसलिए अगर तुम्हें देना ही है, तो वही दो ।’

‘किन्तु बुआजी ! वह हमारे सुहागकी निशानी है, जिसे हमें किसी को किसी भी कीमत पर नहीं देनी चाहिए ।’ दृढ़तापूर्वक किरणप्रभाने निवेदन किया ।

‘बात ठीक है । जो चीज किसीको भी नहीं देनी चाहिए अगर वही किसी खासको दे दी जाय, तो उसकी बड़ी कीमत होती है और काफी दिनों तक उसकी याद बनी रहती है ।’ भविष्यमें अपनी उदारता बनाए रखने पर प्रकाश डालते हुए राहतजानने कहा ।

भविष्यकी चिन्ताके लिए किरणप्रभा व्यग्र हो गयी ! गम्भीरमुद्रामें स्थित होकर वह सोचने लगी—‘यदि सुहाग-चिह्न दे देती हूँ, तब

मेरा व्रत टूटता है और नहीं देती हूँ, तो बेगम अप्रसन्न हो जायगी। जो जिसका प्रसन्न होकर जितना भला कर सकता है, अप्रसन्न होनेपर उससे अधिक हानि भी कर सकता है। महाराजके हितमें तत्पर रहने-वाली इस बेगमको अप्रसन्न कर लेना बुद्धिमानीका काम नहीं; क्योंकि महाराज चतुर्दिक प्रबल शत्रुओंके वातावरणमें रह रहे हैं। इस प्रकार कभी उन्हें प्राणसंकट भी पड़ सकता है। गाढ़े दिनोंमें जो व्यक्ति सहायक हो सकता है, उसे कभी अप्रसन्न करना भी नहीं चाहिए। वह मौन हो गयी।

‘क्या सोचती हो बेटी ! हाँ या ना कुछ भी तो बोलो !’

‘क्या बोलूँ बुआजी ! यह मेरे सुहागका चिह्न है।’ गम्भीरतासे किरणप्रभा ने कहा।

‘यह बहुत मर्तबा सुन चुकी बेटी !’ अगले वाक्यकी प्रतीक्षा करते हुए राहतजान निराशा और आशाके मध्य अपनेको रखकर बोली।

‘किन्तु आपकी कीमत भी हमारे निगाहमें बहुत अधिक है।’

‘खैर, आगे बोलो।’

‘हम आपको अप्रसन्न न होने देंगी।’

राहतजानको आशा बंध गयी; उसका हृदय गद्गद् हो गया। किरणप्रभाको उत्साहित करते हुए वह बोली—‘शाबाश बेटी शाबाश।’

‘बुआजी ! मेरी और मेरे पतिकी रक्षाका भार आपके ऊपर ही है, ऊपर ईश्वरका और नीचे आपका ही भरोसा है। लीजिए आप यह कटार और मुद्रिका। इस रूपमें मैं अपने पतिको पूर्णतः आपके ही संरक्षणमें सौंप रही हूँ। लीजिए यह मेरे कलेजेका टुकड़ा कटार और अंगूठी। जैसे मैं इसे सौंप रही हूँ, वैसे ही इसकी लाज रखिएगा।’ कहते-कहते उसके नेत्रोंमें आँसू भर आए।

‘कटार और अंगूठी प्राप्तकर राहतजान किरणप्रभासे विदा होकर चली गयी।

बूँदी-नरेश छत्रसाल शर्त्तनामेके दिनसे शाही महलमें ही निर्भय रहने लगे । उन्हें महारानी किरणप्रभाकी पवित्रता, दृढ़ता, और पातिव्रतमें पूर्ण विश्वास था । वे सोच चुके थे—‘रानी प्राण भले ही त्याग दे, किन्तु अपने आचरणकी दृढ़ता नहीं त्याग सकती । निश्चय ही शेरशाहको प्राण दण्ड भोगना होगा । छत्रसाल निर्भय थे । वे जबसे शाहीमहलमें रहने लगे हैं, भारत-साम्राज्ञी मुमताज बेगमका चित्त उनके स्वास्थ्य उनकी सुन्दरता और व्यक्तित्व आदि पर चंचल हो उठा है । साम्राज्ञीके हृदयमें उमड़ते हुए प्रेम-प्रवाहको मार्ग अभी तक नहीं प्राप्त हो सका था । वह काम पीड़ासे अत्यन्त प्रभावित थी ।

सन्ध्या-समय था । महाराज छत्रसाल बूँदीके ध्यानमें निमग्न थे । प्रतिहारिणीने सम्मान प्रदर्शित करते हुए अभिवादनकर निवेदन किया—‘महाराजकी याद बेगमसाहिबाने की है ।’

‘अभी आ रहा हूँ, जाकर अर्ज करो ।’

‘जो हुकम सरकार ! कहकर प्रतिहारिणी चली गयी ।

साम्राज्ञी प्रतीक्षा कर रही थी । प्रतिहारिणीके लौट आनेपर बोली—

‘अर्जमारूज करो; रावसाहबने क्या कहा ?’

‘अभी आ रहा हूँ सरकार !’

‘जाओ; महाराव साहबको आ जाने पर भेज देना ।’

मस्तक झुकाकर प्रतिहारिणी बाहर चली गयी । महाराज छत्रसालके आगमनकी वह प्रतीक्षा करने लगी ।

कुछ देरमें बूँदी-नरेश द्वारपर उपस्थित हो गए । प्रतिहारिणीने साम्राज्ञीको सूचित किया । आदेश हुआ । उसने महाराजको कक्षमें पहुँचा दिया । साम्राज्ञीके समक्ष महाराज छत्रसालको उपस्थितकर वह बाहर चली गयी । बूँदी-नरेशने साम्राज्ञीको सम्मान प्रदर्शित करते हुए अभि-

वादन किया। साम्राज्ञीने मुस्कराकर कहा—‘आइए रावसाहब ! मैं बड़ी देरसे आपकी इन्तजार कर रही हूँ।’

महाराज छत्रसालने आसन ग्रहण किया। साम्राज्ञीने उनकी ओर आपाद-मस्तक दृष्टिपात् किया। उन्नत ललाट, आकृति शान्त एवं गंभीर, शरीर गठिन, पुष्ट एवं अत्यन्त सुन्दर; वक्षःस्थल चौड़ा और महात् तेज पुंजकी सजीव प्रतिमा अपने समक्ष उपस्थित देख साम्राज्ञी निनिमेष देखती रह गयी।

सम्राट दिल्लीसे आगरा दो दिनोंके लिए चले गए थे; साम्राज्ञीने एकान्तका और सम्राटकी अमुपस्थितिका लाभ उठाया। राजमहिषी मुमताज बेगमने पूछा—‘महाराव साहब ! बहुत दिनोंसे आपको नहीं देखा था। आप तो ऐसे गायब रहते हैं, कि हमारा ख्याल ही भूल जाते हैं।’

‘नहीं बेगम साहिबा ! मैं आपका ख्याल नहीं भूल जाता, सोचता हूँ; आवश्यकता पड़ने पर आप बुला लेंगी। इसीसे सेवामें हाजिर न हो सका था।’

‘आप जानते हैं, महाराव साहब। मैं आपसे कितनी मुहब्बत करती हूँ। आपको नुकसान पहुँचानेवाले दुश्मन कितने हैं ? शायद यह भी आप जानते हों !’

‘दो तरहके दुश्मन होते हैं साम्राज्ञी ! एक तो वे जो खुलकर विरोध करते हैं और दूसरे वे जो सामने तो ठण्डे पड़े रहते हैं और पीठ-पीछे बुराई करते हैं। इसीसे आड़में बुराई करनेवालोंकी संख्या निश्चित नहींकी जा सकती।

‘मैं तो आपके दुश्मनोंका ख्याल रखती हूँ राव साहब ! ओह; कितने ही दुश्मनोंको आपकी हिफाजतके लिए मुझे दबाना पड़ा है। आप नहीं जानते; जिस वक्त आपने सूबेदार कासिम-खाँको गिरफ्तार किया था, उस वक्त खुदावन्दने शाही फौजको बूँदीपर चढ़ाई कर देनेका

हुकम दे दिया था, मैंने ही उन्हें रोका । सारा कुसूर मैंने कासिमखाँका ही निकाला । आपकी मुहब्बतने मुझे मजबूर कर दिया ।

‘यह तो साम्राज्जी ! आपकी महान् कृपा थी ।’

‘आपके भारी दुश्मन थे—जगतसिंह और उनके साथी नवाब रूहेला जो छिपकर आपके दोस्त बनकर आपकी बुराई मौका पाकर करते थे । ये लोग आपकी शाही दरबारमें बढ़ती हुई कदर देखकर जलते हैं । मगर इनके खिलाफत करनेके बावजूद भी शाही दरबारमें आपकी कदर बढ़ती ही जा रही है । इसकी वजह आप जानते हैं या नहीं ?’

‘अवश्य ही इन बातोंसे मैं अवगत हूँ साम्राज्जी ! यदि आपकी कृपा-दृष्टि हमारे ऊपर न होती, तो जरूर ही मैं शाही दरबारके षडयंत्रकारियोंका शिकार हो जाता ।’

‘मौका पाकर आपके ऊपर तीर चलाकर जो आपको मार डालनेकी कोशिशकी गयी; शेरशाहके नौकरने ही यह काम किया था, उसे आप जानते हैं ? ये लोग आपके पीछे पड़े हुए हैं । बात-बातमें ये आपके दुश्मन मौका ढूँढते रहते हैं, मगर मेरी वजहसे ये लोग जाल रचते रहने पर भी कामयाब नहीं होते ।’

‘हाँ राजमहिषी ! यह सब आपकी कृपाका ही फल है ।’

मगर मेरे ऊपर आपका ख्याल उतना नहीं है राव साहब; जितना मैं रखती हूँ ।’

महाराज छत्रसाल आरोप सुनकर सोचने लगे—‘मैंने तो कभी भी साम्राज्जीकी उपेक्षा नहींकी है । बहुत सोच-विचार कर वे बोले—‘मेरी स्मृतिमें तो कोई ऐसी बात नहीं आ रही है राजमहिषी ! मैंने हजारों दिनोंकी बीबी घड़ियोंपर दृष्टि दौड़ा दी; मगर फिर भी मुझे किसी ऐसी घटनाका स्मरण नहीं हो रहा है, जिसके द्वारा मैंने कभी आपका अपमान किया हो । आप ही मुझे याद दिलावें; यदि कभी ऐसी कोई बात हो गयी हो, तो उसके लिए मुझे क्षमा करें । मैं लज्जित हूँ ।’

‘कभी खुलकर आपने मेरा अपमान नहीं किया है, यह मानती हूँ । मगर आपकी निगाह हमारे ऊपर ठीक नहीं रहती ।’ मुमताज बेगमने आरोप लगाया ।

महाराज छत्रसाल आरोप सुनकर लज्जित हो गए । वे अपने मनमें सोचने लगे—‘यह आरोप आचरण सम्बन्धी है । मैंने तो कभी भी साम्राज्ञीकी ओर कुदृष्टिसे नहीं देखा है ।’

‘क्या सोच रहे हैं, राव साहब ? मैं कभी झूठी बात नहीं कहती । यह कहनेके लिए कई दिनोंसे सोच रही हूँ, इसीलिए आज आपको बुलाया है ।’ मुस्कराकर साम्राज्ञीने कहा ।

‘यही सोच रहा हूँ साम्राज्ञी ! मुझसे आचरणमें कहाँ चूक हो गयी, जिससे आपको ठेस पहुँची है । कृपया जिस रोजकी यह घटना हो, उसपर अवश्य प्रकाश डालकर मेरा ध्यान आकृष्ट करें । मैं बड़ा दुःखी हूँ, मुझे बड़ा ही पश्चात्ताप है ।’ अत्यन्त गम्भीर मुद्रामें स्थित होकर महाराज छत्रसालने निवेदन किया ।

‘तो बता ही दूँ ?’ सुस्कराकर साम्राज्ञीने पूछा ।

‘अवश्य बताइए साम्राज्ञी !’ महाराजको चिन्ता हो गयी ।

‘मगर आप बुरा तो न मान जायेंगे ?’

स्मृति दिलाइए; तभी तो उसपर प्रकाश डालकर मैं आपके मनमें उत्पन्न हो गयी कटुताका निवारण कर सकूँगा । जहाँ तक मेरे सोचनेकी बात है; फिर भी ऐसे किसी प्रसंगकी स्मृति मुझे नहीं हो रही है, जो मैंने कभी अवांछनीय आचरण किया हो ।’

‘मैं वखूबी जानती हूँ, कि आपकी ऐसी आदत ही है, मगर मुझे तो इससे तकलीफ है । मैं कभी भी आपकी इस चाल-चलनसे खुश नहीं हो सकती महाराव साहब !’

‘महाराज छत्रसालकी आकृति पर कुछ विषादकी रेखाएँ भलक उठीं । वे अपने आचरण पर दृढ़तापूर्वक कथित आरोपसे व्यग्र हो उठे ।

उनकी निष्कलुष दृष्टि साम्राज्ञीकी आकृतिपर, जो मन्द हास्यसे प्रफुल्ल हो उठी थी, जाकर स्थिर हो गयी ।

‘बोलिए साम्राज्ञी !’ महाराजने दृढ़तासे निवेदन किया ।

‘क्या बोलूँ राव साहब ?’ मुस्कराकर साम्राज्ञीने कहा ।

‘मेरे किस आचरणसे आपने अपमानका अनुभव किया है । यदि ऐसा मैंने कोई आचरण धोखेसे किया ही हो, तो उसके लिए क्षमा माँगता हूँ ।’ विनम्र होकर छत्रसालने कहा ।

‘मगर माफ नहीं किया जा सकता राव साहब !’ मुस्कराकर ही साम्राज्ञीने पुनः कहा !

‘किन्तु आपकी तो हमारे ऊपर महती कृपा रहती है साम्राज्ञी !’

‘तभी तो मुआफ नहीं किया जा सकता ।’

‘किन्तु आशा तो तभी की जा सकती है साम्राज्ञी !’

‘यह सच है कि मैं आपसे मुहब्बत करती हूँ; आपका नुकसान अपनी आँखोंसे नहीं देख सकती । मगर*“आपको माफ नहीं किया जा सकता राव साहब !’ मन्द मुस्कानने छत्रसालकी जिज्ञासाको प्रबल प्रेरणा प्रदान करते हुए कहा ।

‘तो मैं दण्ड भोगनेके लिए ही तत्पर हूँ । बोलिए ।’

‘क्या कहूँ !’

‘नहीं जिज्ञासा शान्त कीजिए साम्राज्ञी !’

‘तो बता ही दूँ ?’ मुस्कराकर राजमहिषी बोली ।

‘अवश्य बताइए ।’

‘मगर बुरा न मानिएगा ।’ सुननेके पेश्तर आपको यह कबूल करना है ।’

‘मुझे स्वीकार है साम्राज्ञी !’

‘और जो सजा दी जाय उसे भुगतना भी होगा । यह भी कबूल है राव साहब ?’ मुस्कराकर साम्राज्ञीने कहा ।

‘वह भी स्वीकार है ।’

‘खुब सोच-समझकर बोलिए राव साहब !’

‘सोच-समझकर कहा है साम्राज्ञी !’

‘आप राजपूत हैं। यह मैं बखूबी जानती हूँ; आप लोग अपनी बात नहीं छोड़ते। चाहे जान भले ही चली जाय।’

‘जी हाँ; आपका ख्याल सही है। बताइए।’

‘अच्छा राव साहब !’ मुस्कराकर कहते हुए साम्राज्ञी वातावरण मादक बना डालनेकी कामनासे आगे बढ़ी और महाराजके अत्यधिक निकट जाकर उनके शरीरका स्पर्श करते हुए पुनः कहने लगी—‘राव साहब ! क्या कहूँ ? मैं आपसे बड़ी मुहब्बत रखती हूँ। मेरा मन आपके ऊपर पूरी तरह फिदा है। इसी वजहसे बार-बार आपको वचाती रही हूँ। एक बार आपको गले लगाकर दिलकी आह मिटाना चाहती हूँ। उठिए राव साहब ! मेरे दिलका अरमान पूरा कीजिए। मैं तड़प-तड़प कर रह जाती हूँ।’ हाथ पकड़कर अपनी ओर साम्राज्ञीने महाराज छत्रसालको खींचना चाहा।

महाराज छत्रसाल आसनसे उठकर खड़े हो गए। साम्राज्ञीने आगे बढ़कर उन्हें बाहुपाशमें कस लेना चाहा; किन्तु थोड़ा बगलने घूमकर वे पीछे हट गए और बोले—‘साम्राज्ञी ! ऐसा कदापि नहीं हो सकता !’ क्षमा करें देवि !’

‘क्षमा-वमा कुछ नहीं राव साहब ! सिर्फ एक बार मैं आपको गले लगाकर अपनी मुराद पूरी कर लूँगी।’

‘आखिर यह सब आप क्या कह रही हैं साम्राज्ञी ?’

‘क्यों आप डरते हैं ? डरकी कोई बात नहीं; मैं आपकी इज्जत करती हूँ राव साहब ! रुठिए मत ! सारी जिम्मेदारी इसमें मेरी है, आपके ऊपर कुछ भी नहीं राव साहब ! मैं आपको सारे आलमका ताजोतख्त भी अता कर सकती हूँ। सब कुछ मैं आपके लिए कर सकती हूँ, आपको भी मेरा ख्याल रखना चाहिए।’

‘ऐसा मैं कदापि नहीं कर सकता साम्राज्ञी ! मुझे क्षमा किया जाय ।’ दृढ़तापूर्वक महागज छत्रसालने निवेदन किया ।

‘आप मुझे जो कुछ भी हुक्म करेंगे, वह सब पूरा करनेका मैं वादा करती हूँ ।’

‘सब ठीक है साम्राज्ञी ! किन्तु ऐसी मुझसे कदापि आशा न रखें । ऐसे प्रस्तावोंका मैं किसी मूल्य पर समर्थन नहीं कर सकता ।’

‘मगर आपको मेरे हुक्मका पालन करना चाहिए यह क्यों भूलते हैं ।’

‘और आपको भी अपनी मर्यादाका पालन करना चाहिए । यदि आप अपनी मर्यादाके विरुद्ध कोई आदेश देती हैं, तो उसकी कोई कीमत नहीं हो सकती साम्राज्ञी !’

‘मगर मेरे हुक्मका पालन न करना, मौतके अधिक नजदीक पहुँचने के बराबर है ।’

‘किन्तु आपकी मर्यादाके विरुद्ध आज्ञा-पालन करना मृत्युसे भी बदतर है । दृढ़ता व्यक्त करते हुए छत्रसालने निवेदन किया ।’

‘जो भी हो, सोच-विचार लीजिए, फिर भी एक बार मैं आपको मौका देना चाहती हूँ ।’

‘मैंने इस संबंधमें भली-भाँति सोच-विचार कर लिया है । मैं किसी भी दशामें लोभसे, भयसे या आतंकसे आचरण-विरुद्ध कार्य नहीं कर सकता साम्राज्ञी ! आपका ध्यान इधर भी आकृष्ट कर लेना आवश्यक समझता हूँ ।’

‘ठीक है आपने मेरे दिलको ठेस पहुँचा दी है । मेरी भारी बेइज्जती की है, इसकी सजा मौत आपको भुगतनी पड़ेगी । शाहंशाहको आ जाने दीजिए, तो इस बेइज्जतीका फल आपको चखना होगा । अब भी कुछ नहीं बिगड़ा है । मैं आपको सब कुछ सौंपनेके लिए तैयार हूँ, अगर एक

बार भी मुझे आपने अपनी बाहोंसे कसकर गले लगा लिया रावसाहब! फिर-फिरसे सोच लें ।’

द्वार पर युवराज दाराशिकोह आ उपस्थित हुए, उन्हें आवश्यक कार्यसे साम्राज्ञीसे मिलना था । प्रतिहारिणीने उन्हें आदर प्रदान करते हुए अभिवादन किया । वे छत्रसाल एवं साम्राज्ञीकी बातें खड़े होकर ध्यानने सुनने लगे ।

छत्रसाल साम्राज्ञीके कथनका उत्तर दे रहे थे—‘सोच-समझ लिया है साम्राज्ञी ! मैं सम्राटके साथ विश्वासघात नहीं कर सकता । प्राणसे बढ़कर हम आचरणको महत्व देते हैं; अतः यह शृणित कार्य मुझसे न होगा साम्राज्ञी ! भले ही आप भी झूठा फरेब रचकर मेरे सामने प्राण संकट उपस्थित कर दें ।’

‘आप सिर्फ आचरणका बहाना करके मेरे दिलकी मुराद पूरी नहीं कर रहे हैं, अब जाइए आप जानिए और आपका काम जाने । आप नहीं जानते औरतोंमें जितनी ताकत किसीकी बचानेमें होती है, उससे ज्यादा बुराबाद कर देनेकी कूबत होती है ।’

‘यह तो मैं जानता हूँ साम्राज्ञी !’

‘मगर जानकर भी कोई मौतके मुँहमें नहीं जा सकता रावसाहब! सबको अपनी जान प्यारी होती है ।’

‘मगर हमें अपने आचरणका कम मोह नहीं है साम्राज्ञी !’

‘ठीक है । आपका आचरण मुझे देखना है । मौतके लिए आपको तैयार रहना है, जाइए ।’

महाराज छत्रसाल कक्षके बाहर आए । सामने द्वारपर युवराज दाराशिकोह उपस्थित । बूँदी-नरेशने उनको सम्मान प्रदर्शित किया । उसने बूँदी-नरेशसे कहा—‘राव साहब ! आइए आपको मौतसे डरनेकी कोई बात नहीं, जब तक मैं जिन्दा हूँ, आपका कोई बाल भी बाँका नहीं कर सकता ।’ कहते हुए पुनः छत्रसालको साथ लेकर युवराजने साम्राज्ञीके

कक्षमें प्रवेश किया। उसने साम्राज्ञीको संबोधित कर तीक्ष्ण स्वरमें पूछा—
‘क्यों अम्मीजान ! यही तुम्हारी चाल-चलन है। इसी बलपर रावसाहब
को सूलीपर चढ़वा दोगी ? मैंने तुम्हारी और राव साहबकी सभी बातें
सुन लिया है। अपना दिमाग ठीक करो, कभी राव साहबका बुरा
सोचनेकी कोशिश मत करना, नहीं तो तुम्हें बड़ी जिल्लत उठानी
पड़ेगी। जाओ, चली जाओ। मुँह छिपाकर चली जाओ। अपनी
हरममें। ज्यादा मैं कुछ नहीं कहना चाहता।’

मुमताज बेगम अपराधिनीकी भाँति निष्प्रभ हो गयी। उसका सिर
लज्जासे झुक गया।

‘रावसाहब ! आपकी नेक चाल-चलन तो मैं पहलेसे ही जानता हूँ।
इसी वजहसे मैं दरबारमें सबसे ज्यादा आपकी इज्जत करता हूँ। जितना
मैं आपके बारेमें जानता हूँ, उससे ज्यादा आपके ख्यालात ऊँचे हैं, यह
आज मैंने जाना है। जब तक मैं जिन्दा हूँ, आपका कोई कुछ भी नहीं
बिगाड़ सकता।’ युवराज दाराशिकोह बोला।

युवराज महाराज छत्रसालकी चरित्र-दृढ़ता देखकर बड़ा प्रभावित
हुआ। अनेक प्रलोभन और भय दिखाने पर भी वे सदाचारसे विचलित
न हुए। सोच-सोचकर युवराज उनके ऊपर प्रसन्न हो रहा था।

‘महाराज छत्रसाल मौन थे ? गम्भीर मुद्रामें वे स्थित थे। उनका
हाथ पकड़कर दाराशिकोह शाही उद्यानमें घूमने चला गया।



‘कहिए नवाब साहब ! कहाँ तक आपको कामयाबी हासिल हो
सकी ? शर्तनामेके दिन तो अत्यधिक निकट आ गए।’ अमेर-नरेश
जगत्सिंहने चिन्ता व्यक्त करते हुए पूछा।

‘अभी तक तो कोई खबर नहीं मिली महाराज ! एक बहुत चालाक कुटनी भेज दिया है, अगर वह कामयाब हो गयी तो, जिन्दगी बच जायगी, नहीं तो फाँसीपर तो चढ़ना ही होगा ।’

‘किन्तु हमें तो सफलतामें बड़ा सन्देह है नवाब साहब !’

‘क्यों महाराज ?’

‘वह बड़ी पतिव्रता स्त्री है और साथ ही बड़ी चालाक भी । वह किसी कुटनी-उटनीके चक्करमें आनेवाली नहीं है नवाब साहब ! हमारा तो प्राण उसी दिनसे व्यथित है, जिस दिनने आपने शर्त्त बदी थी, मैं तो भारी चिन्तामें पड़ गया हूँ । बैठे-बैठाए आपने अनावश्यक एक बखेड़ा मोल ले लिया; मुझसे तो कुछ भी नहीं कहते बन रहा है ।’ अत्यन्त विषाद प्रदर्शित करते हुए जगतसिंहने कहा ।

‘सभी कामोंमें कुछ-न-कुछ खतरा रहता ही है महाराज ! खतरेके डरसे कोई काम बन्द नहीं किया जा सकता । इसी काममें अगर काम-याबी हासिल हो गयी, तो हमारे एक जोरदार दुश्मनका खात्मा हो जायगा । बिना खतरा उठाए कोई बड़ा काम पूरा नहीं होता । वैसे तो कुटनी नसीबन बहुत होशियार औरत है और कभी फेल होनेवाली नहीं, और यदि फेल ही हो जायगी, तो देखा जायगा । मुझे बस एक ही बात की फिकर सता रही है, वह यही कि अभी तक कुटनी लौटकर वापस नहीं आयी । वक्त गुज़र जाने पर यदि वह कामयाब होकर लौटे, तब भी उससे कोई फयदा नहीं ।’

चिन्तामें दोनों व्यक्ति बड़े उद्विग्न दिखाई पड़ने लगे । उसी समय प्रतिहारिने कक्षमें उपस्थित होकर निवेदन किया—‘हुज़ूर एक औरत दरवाजे पर खड़ी है, जो आपसे मुलाकातकी इच्छाजत चाहती है ।’

‘भजो उसे ।’ नवाबने कहा ।

प्रतिहारीकी बातें सुनकर नवाब और जगतसिंहको कुटनीके प्रत्या-

गमन और उसकी सफलताकी आशा बँध गयी । वे दोनों बड़ी उत्सुकता से आगन्तुक महिलाकी प्रतीक्षा करने लगे ।

‘प्रतिहारिके साथ कक्षमें महिला प्रविष्ट हुई । उसने दोनों व्यक्तियों को मस्तक झुकाकर अभिवादन करते हुए सम्मान प्रदर्शित किया । शेरशाहने कहा —‘आओ बी साहिबा ! कहो कहाँ तक कामयाबी हासिल हुई; हमलोग अभी यहाँ बैठे-बैठे तुम्हारी जिक्र कर ही रहे थे, कि तू आ ही गई । बता; है तो खैरियत ?’

‘हुजूरकी मेहरबानी !’ कुटनीने कहा ।

‘हाँ, बता क्या-क्या कर आई, कुछ कामयाबी हुई ?’

‘हुजूर ! पहले जब मैं वहाँ पहुँची, तब अपनेको बादशाह शाह-जहाँकी बेगम बताया । महारानी मुझे बेगम राहतजान जानकर बहुत खुश हुई । मैंने शाही दरबारमें होनेवाली पैतरेबाजियों पर रोशनी डालते हुए कहा—‘महाराज ! छत्रसालको मैं बहुत ही मानती हूँ और उनकी तरफदारी हमेशा करते हुए बादशाह सलामतको मजबूर कर दिया करती हूँ । मेरी इन्हीं खूबियोंकी वजहसे छत्रसाल मुझे अपनी धर्म-बुआ मानते हैं ।’

‘वाह ! वाह !! तब क्या हुआ ? कुछ असर हुआ इसका ?’

‘असर तो बहुत हुआ हुजूर ! उसने मेरी सभी बातों पर पूरा यकीन कर लिया ।’

‘फिर क्या हुआ ?’

‘मगर सरकार ! वह बड़ी पाकीजा और पतीबरवा औरत है । वह किसीके बहकावेमें नहीं आ सकती । मैंने उसे टटोल लिया है ।’

कुटनीकी बातें सुनते ही शेरशाह और जगतसिंहकी आकृति म्ला हो गयी और विषादकी छाया झलकने लगी । घबराकर शेरशाह बोला—‘तब जान कैसे बचेगी ?’

‘यही तो मैं भी सोचता हूँ ।’ जगतसिंह बोले ।

‘मगर हुजूर ! मैंने रानी साहिबासे बहुत मेल बढ़ाचढ़ाकर जान

लिया है कि उनकी बायीं जाँघपर घुटनेके करीब एक इन्चके ऊपर चवन्नीभरका लेहसुनका निशान है, दाहिनी जाँघमें घुटनेके ऊपर एक फोड़ेका निशान है और उसके पास ही एक तिल भी है ।’

‘वाह ! वाह !! क्या खूब ! तुमने तो वाकई बड़े कमालका काम कर दिखलाया है । महाराज ! इनसे जो भी उम्मीद की जाए वह थोड़ी है । मैंने इनके बड़े-बड़े हैरत-अंग्रेज कारनामे सुन रखे हैं । शाबाश ! नसीबन शाबाश !! तो तुमने आखिरमें जान-बचानेका ढंग निकाल ही लिया । वाकई यह काबिलेतारीफ है ।’

‘दूसरी चीज भी साथ लाई हूँ हुजूर !’

‘वह क्या ?’

‘यह महाराज छत्रसालकी कटार है, जिसपर एक और महाराजका और दूसरी ओर महारानीका नाम खुदा है, आप पढ़ सकते हैं ।’ कटार दिखाकर कुटनीने निवेदन किया ।

‘वाह ! वाह !! यह तो तुमने गजब कर दिया नसीबन ! अब तो तुमने बहुत ही कामयाब बना दिया । बस इतने सबूत तो काफी हैं । दुश्मनका सफाया तो इतने ही से हो जायगा । क्यों महाराज ! आपका क्या ख्याल है ?’

‘हाँ प्रमाण तो जोरदार है नवाब साहब ! किन्तु यदि मान लिए जायें तो ?’ जगतसिंह बोले ।

‘इन सबूतोंको न मानकर ज्यादाती भले ही की जाय महाराज ! मगर वाकई ये पक्के सबूत हैं, इनको मानना ही चाहिए ।’ अपना विश्वास जमाते हुए शेरशाहने कहा ।

‘देखिए; मैं तो ईश्वरसे प्रार्थना करूँगा; ये सभी प्रमाण सम्राटकी दृष्टिमें भी प्रामाणिक मान लिए जायें ।’

‘अब तो कल ही दरबारमें मामला पेश होगा; आप तैयार होकर

चलियागा । आज तो मैंने आपका बड़ा समय लिया । चलिए आपको पहुँचा आऊँ ।’

‘जब तक फैसला नहीं हो जाता और आपकी इस मामलेमें जीत नहीं हो जाती, तब तक मेरी चिन्ता दूर नहीं हो सकती । मैं तो सोच-सोचकर चिन्तामें गला जा रहा हूँ नवाब साहब !’ उठते हुए जगतसिंह ने कहा ।

‘राजपूत होकर मौतसे इतना डरते हैं महाराज ! वह तो एक न एक दिन आएगी ही, तब उसकी फिक्र क्यों की जाए ?’

‘अपने लिए मुझे कोई फिक्र नहीं, किन्तु आपके लिए तो है ही, नवाब साहब ! आपही तो मेरे दुःख-सुखके सच्चे साथी हैं, मेरे लिए ही तो आपने यह मुसीबत मोल ले ली है, नहीं तो इस पचड़ेमें पड़कर आप कौनसा फायदा उठायेंगे ?’ सशानुभूति व्यक्त करते हुए जगतसिंहने मार्गमें मन्दगतिसे आगे बढ़ते हुए कहा ।

‘दोस्तका काम किया जाता है महाराज ! उसमें अपना फायदा सोचना गुनाह समझता हूँ ।’

‘इसमें तो कोई सन्देह नहीं कि आप मेरे बेमिसाल मित्र हैं, किन्तु प्राणोंकी बाजी बिना किसी खास जरूरतके लगा दी जाय, तो क्या वह चिन्ताका विषय न होगा ?’

‘मगर चिन्ता करनेसे फायदा ?’ शेरशाह बोला ।

‘चिन्ता करनेसे फायदा भले ही कुछ न हो, किन्तु बिना चिन्ता किए, रहा तो नहीं जाता । सबसे बड़ी महत्त्वकी बात तो यह है—कि चिन्ता ही किसी विषयके उत्तरकी जननी होती है और मनुष्यकी कार्य-प्रवृत्तिमें प्रेरक शक्ति भी वही है ।’ जगतसिंह बोले ।

‘मगर वह शक्ति चिन्ता नहीं है, महाराज ! उसे जागरूकता कह सकते हैं ।’ हँसते हुए शेरशाह बोला ।

‘ठीक है । आप बड़ी दूर चले आए; अब लौटिए । कल दरबारमें चलनेके लिए मैं आपके यहाँ आ जाऊँगा । तब साथही चला जायगा ।’

‘मैं इन्तजार करूँगा ।’ कहते हुए शेरशाह जगतसिंहको अभिवादन करके लौट पड़ा ।

२१

‘तहव्वरखाँ ? आगए तुम ?’ सम्राट शाहजहाँने अभिवादन करते हुए विनत प्रधानमंत्रीकी ओर दृष्टिपात कर पूछा ।

‘जी हाँ हुजूर ! अभी-अभी बन्दानवाजका हुक्म सुना है और सीधे जहाँपनाहकी खिदमतमें हाजिर हुआ हूँ ।’

शेरशाहको बूँदी गए बड़ा अरसा हुआ, मगर वह अभी तक लौटा नहीं ।’ कहते हुए सम्राट शाही उद्यानमें महाराज छत्रसालके साथ घूमते हुए आगे बढ़े ।

‘जी हाँ बन्दानवाज ! उनको गए तो आज अठ्ठाईस रोज हो गए, मगर उनकी कोई खैर-खबर नहीं मिली हुजूर ! देखिए वे कब तक लौटते हैं ?’ कहते हुए तहव्वरखाँ सम्राटके पीछे-पीछे चलने लगा ।

‘ठीक है, दो दिन और देखकर कानूनी कार्यवाहीके जरिए उन्हें दरबारमें जल्द हाजिर करो । दृढ़ता प्रदर्शित करते हुए सम्राट बोले ।

‘जो हुक्म जहाँपनाह !’

‘हाँ जाओ । इसीलिए तुम्हें बुलवाया था । मुझे इन्साफ करना है । कलको जिससे रियाया यह न कह सके कि शाहंशाह शाहजहाँने एक हिन्दू राजाके साथ नाइन्साफी की ।’

‘नहीं, नहीं हुजूर ! सारी दुनियाँमें आपका इन्साफ जाहिर है । जब कभी भी आपने किसी भी मामलेमें हिन्दू-मुसलमानका भेद मानकर न्यायमें पक्षपात नहीं किया; तब कोई कैसे कह सकता है, कि आपने हिन्दू राजाके साथ नाइन्साफी की है ।’ महाराज छत्रसालने कहा ।

‘इसीलिए तो मैं चाहता हूँ, हर काममें ईमानदारी बर्ती जाय और किसी भी मामलेमें नाइन्साफी न हो ।’

‘सम्राट ! आपसे ऐसा हो ही नहीं सकता; भला कौन आपको बदनाम करेगा ?’

तहव्वरखाँ अभिवादन कर चला गया । सम्राट छत्रसालके साथ कुछ देर तक घूमते रहे । बारह बजेके पश्चात् तैयार होकर छत्रसालके साथ सम्राट-भवनमें पहुँचे । सभी दरबारी भी आ-आकर अपने-अपने आसनों पर विराजमात् होने लगे । आमेर-नरेशके साथ शेरशाह भी आ पहुँचा । वहाँ द्वार पर ही उसने बुड़े मौलवीके छद्मवेशमें अँगूठी और कटार लानेवाली कुटनीको देखा । उसका वेश देखकर दोनों मित्र हँस पड़े । दोनों व्यक्तियोंको कुटनीने अभिवादन किया और वह भी मुस्कराकर उन दोनोंकी हँसीमें योग देने लगी ।

‘देखिए महाराज ! कौन इन्हें औरत कह सकता है ? क्या कमाल कर दिया है ।’ शेरशाह बोला ।

‘हाँ भाई इस कलामें तो यह बहुत चतुर है, सचमुच इस समय इन्हें कोई भी औरत नहीं मान सकता ।’ जगतसिंह बोले ।

कुटनी अपनी स्वांग-क्षमताकी प्रशंसा सुनकर मुस्करा पड़ी । उसने मुस्कराकर ही निवेदन किया—‘हुजूर इसी होशियारीकी बदौलत आप लोगोंकी खिदमत किया करती हूँ, नहीं तो हम नाचीजको कौन पूछ ही सकता है ।’

शेरशाह और जगतसिंह साथ ही शाही दरबारमें पहुँचे । उन्होंने सिंहासनारूढ़ सम्राट शाहजहाँको देखा । मस्तक झुकाकर दोनों व्यक्तियों ने उन्हें अभिवादन किया और उनकी ओर देखते हुए वे आदेशकी प्रतीक्षा करने लगे ।

‘आईए महाराज साहब; आपके साथ शेरशाह भी आ गए ?’ सम्राटने पूछा ।

‘जी हाँ सम्राट ! नवाब साहब आ तो गए ।’ जगतसिंह बोले ।

‘कहिए जनाब आप कब तशरीफ लाए ?’

‘जहाँपनाह ! कल ही आया हूँ बूँदीसे ।’

‘तुम्हारा काम पूरा हुआ ?’

‘शाहंशाहकी मेहरबानीसे जिस कामके लिए गया था, उसमें काम-याब हो गया ।’

सम्राट शाहजहाँ शेरशाहका कथन सुनकर आश्चर्यमें पड़ गए । उन्हें विश्वास न था, कि शेरशाहको कामयाबी मिल जायगी, क्योंकि उनकी दृष्टिमें किरणप्रभाका आचरण अत्यन्त पवित्र और महान् था, उसकी महनीयतामें विकार उत्पन्न कर देनेकी क्षमता शेरशाह जैसे लम्पट व्यक्ति में नहीं थी । वे शेरशाहके ऊपर दृष्टि स्थिरकर विचार-मग्न हो गए ।

महाराज छत्रसालकी दशा तो अत्यन्त गम्भीर हो गयी । उनकी आकृति म्लान हो गयी । उन्हें जैसे साँप सूँघ गया हो । वे सोचने लगे—यह कैसे संभव हो गया । सभी दरबारियोंकी दृष्टि शेरशाह और छत्रसाल पर जा पड़ी ।

‘मगर मुझे तुम्हारी इन बातों पर कयास नहीं हो रहा है शेरशाह !’ सबका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हुए सम्राटने कहा ।

‘नहीं जहाँपनाह ! अभी सब सबूत मैं आपकी खिदमतमें पेश करता हूँ ।’

‘बोलो क्या-क्या सबूत लाए हो । मैं जरूर सुनूँगा और देखूँगा । तुम्हें जरूर इस बातका सबूत देना होगा कि किरणप्रभा पतिवरता औरत नहीं है ।’

‘जी हाँ, हुजूर ! यही सबूत तो हम लाए हैं ।’

‘उन्हें हाजिर करो ।’

सबकी दृष्टि शेरशाह पर जा पड़ी । सभी दरबारी प्रतीक्षा करने लगे । शेरशाह बोला—‘जहाँपनाह ! कुछ न पूछिए; महारानी बूँदी तो

ग्राम औरतोंसे भी गयी गुजरी हैं। खुदावन्दने सोचा होगा—शायद पतिबरताकी जाँचमें हमें बड़ी मिहनत करनी पड़ी होगी; मगर सच मानिए बन्दानवाज ! मेरी थोड़ी-सी ही कोशिशसे वह मेरी मुहब्बतके चक्करमें फँस गयी, उसने मुझे अपना सब कुछ दीन-ईमान तक दे दिया जहाँपनाह ! वह मुझे बहुत मानने लगी है और वह मेरे ऊपर इतना अधिक फिदा है कि यह देख लीजिए हुजूर ! अपनी सबसे ज्यादा मुहब्बतकी चीज यह कटार जिसपर महाराजा साहबका एक और नाम खुदा है और दूसरी ओर महारानी साहिबाका, उन्होंने मुझे दे दिया ।' कटार सम्राटके समक्ष प्रस्तुत करते हुए शेरशाह बोला ।

सभी सभासदोंकी दृष्टि कटारपर चली गयी । कटार लेकर सम्राट देखने लगे । महाराज छत्रसालने भी बड़े ध्यानसे कटारपर दृष्टिपात किया । उनका हृदय धड़कने लगा ।

‘और दूसरी चीज हुजूर ! यह लीजिए महारानीने मुझे अँगूठी दी है । महाराज साहबसे पूछ लिया जाय हुजूर ! कि ये दोनों चीजें सही हैं या नहीं ?’ अँगूठी भी सम्राटके समक्ष उपस्थित करते हुए शेरशाह पुनः बोला ।

‘देखिए महाराज ! क्या वाकई ये दोनों चीजें दुरुस्त हैं; क्या आप इनको पहचानते हैं ? इनकी शिनाख्त कीजिए ।’ सम्राटने छत्रसालको सम्बोधित कर पूछा ।

महाराज छत्रसाल सम्राटके निकट चले गए । उन्होंने उन दोनों वस्तुओंको उलट-पलटकर देखा । सचमुच वे दोनों वस्तुएँ उन्हींकी थीं । महाराजके आश्चर्य और ग्लानिका ठिकाना न रहा । वे हतप्रभ हो गए । उनकी दृष्टि नीची हो गयी । वे स्तब्ध रह गए ।

‘ये दोनों चीजें शादीके मौके पर महारानी साहिबाको सुहाग-निशानीकी शक्ल में खुद आपने दी थी; बोलिए महाराज ! है न दुरुस्त ?’ शेरशाहने महाराज छत्रसालसे पूछा ।

‘देखिए महाराज साहब ! गौरसे देखिए, क्या वाकई शेरशाहकी बातें दुरुस्त हैं ?’

‘जी हाँ सम्राट ! ये सभी बातें सत्य हैं। विवाहोत्सवपर मेरे द्वारा ये दोनों-वस्तुएँ अवश्य ही दी गयी थीं।’ कुछ सोचकर छत्रमाल-ने निवेदन किया—‘किन्तु सम्राट ! जब तक बूँदी जाकर स्वयं मैं इसको जाँच न कर लूँ, तब तक इसे सही मान लेनेका विश्वास कैसे किया जा सकता है। हो सकता है, मेरी उन वस्तुओंकी तरह ये दूसरी बनवा ली गयी हों। या वही चोरीसे लायी गयी हों।’

‘हाँ बात तो सही है; जरूर बिना जाँच किए यह कैसे मान लिया जाए कि ये दोनों चीजें किरणप्रभाने ही शेरशाहको दिया था ? क्यों है न यह बात ? सभी सभासदोंकी ओर दृष्टिपात्कर सम्राटने सबका विचार जानना चाहा।

‘जी हाँ जहाँपनाह ! हुजूर ठीक ही फरमा रहे हैं। हर इन्साफ-पसंद आदमी इसे जरूर ही कबूल करेगा।’ सभासदोंकी ओरसे ध्वनि आ गयी।

‘मगर हुजूर ! इजाजत हो, तो एक अर्ज और करना चाहता हूँ।’ शेरशाह बोला।

‘अर्ज करो। क्या करना चाहते हो।’ सम्राट बोले—

‘बन्दानवाज ! गुस्ताखी माफ हो; महारानी साहिबाकी बायीं जाँघमें घुटनेके करीब एक इंच ऊपर एक चवन्नी भरके काले लहसुनका निशान है। दाहिनी जाँघमें घुटनेके ऊपर एक फोड़ेका निशान है और उसके पास ही एक तिल भी है। अब तो हुजूर ! जब कि मैं महारानी साहिबाके गुप्त जिस्मका निशान बयान कर रहा हूँ, तब महाराज साहबको यकीन होगा कि नहीं ? मान लेता हूँ, कटार और अँगूठी जाली हो सकती है; मगर जहाँपनाह ! ये निशानात तो जाली नहीं हो सकते। महाराजसे पूछा जाय हुजूर ! क्या वाक्यी यह सब दुरुस्त है ? महाराजसे दरियाफ्त किया जाय।’ शेरशाह बोला।

‘शेरशाह जो कुछ फरमा रहे हैं, क्या वह ठीक है महाराज ? इसी के ऊपर तो कैमला होगा ।’ सम्राटने पूछा ।

‘ठीक है सम्राट ! शेरशाह ठीक कह रहे हैं, यह बात सत्य है ।’ अत्यन्त लज्जित हो, ग्लानिके साथ अत्यन्त क्षीण स्वरमें दृष्टि नीचे किए महाराज छत्रमालने निवेदन किया ।

‘जब यह सही है जहाँपनाह ! तब महाराजको शर्त्तनामेके मुताबिक अपने वायदेको जल्द पूरा करना चाहिए ।’

‘शर्त्त तो आप महाराज साहब ! हार गए । शर्त्तनामे और वायदे के मुताबिक आपको सर कटाना ही होगा । मगर आप बूँदी जाकर अपनी रियासतका पूरा-पूरा इन्तजाम कर आइए । आपको एक महीने की मियाद दी जाती है ।’

‘मगर हुजूर ! ये अगर बूँदी तशरीफ ले गए, तो हो सकता है, दिल्ली वापस न आवें और साथ ही ये महारानी साहिबाको गुस्सेमें आकर न मालूम कौन-कौन-सी सजाएँ देंगे । हमारी वजहसे महारानी साहिबाको पता नहीं, कौन-कौन-सी मुसीबतें व परेशानियाँ उठानी पड़ें । इसी वजहसे मुझे दालमें काला दिखाई पड़ रहा है । आगे जहाँपनाहकी जैसी मर्जी ।’ शेरशाहने शंकित हृदयसे निवेदन किया ।

‘तुम बड़े नादान हो नवाब रहेला ! सभी बातें तुम नहीं समझ सकते । इस वास्ते खामोश रहो ।’

‘जो हुक्म जहाँपनाह !’

‘तो महाराज ! आप एक महीनेके लिए बरी किए जाते हैं, तब तक बूँदी जाकर आप आसानीसे लौट सकते हैं ।’

‘किन्तु सम्राट मैं बूँदी नहीं जाना चाहता । न तो मुझे वहाँका जल पीना है और न अन्न ग्रहण करना है । मुझे न तो महारानीको तकलीफ देनी है और न कोई बातचीत ही करनी है । अपनी शर्त्तके अनुसार मैं अपना मस्तक कटानेके लिए तत्पर हूँ । मैं बूँदी जाकर क्या करूँगा ।

इस गंदगीको उभाड़कर सारे संसारमें बदबू फैलायी जाय; क्या लाभ होगा ? जो होना था, सो हुआ, जो भाग्यमें बदा था, वह हुआ । मेरी इच्छा अब बूँदी जानेकी कदापि नहीं है ।’

‘मगर मैं इन्साफ-पसन्द इन्सान हूँ, इस वास्ते आपको मौका दिया जाना जरूरी है । आज नहीं तो कल रियाया आपसमें कहने लगेगी कि शाहंशाहने एक हिन्दू राजाके साथ नाइन्साफी की । मुझे आपके इस तरह मरनेसे वाकई बेहद अफसोस है ।’

‘आप ज़रा भी दुःख न मानें सम्राट ! होनीको कोई टाल नहीं सकता ।’

‘नहीं, नहीं; आपके ऊपर हमारे दिलमें बड़ा दुःख है । आप बूँदी जाकर सब इन्तजाम कर आवें ।

‘जो आज्ञा सम्राट !’

उस दिन सभाकी कार्यवाही समाप्त हो गयी । सभी सभासद अपने-अपने निवास-स्थान पर चले गए ।

महाराज छत्रसाल लज्जा, ग्लानि और मानसिक पीड़ासे अत्यन्त व्यथित थे । अन्यन्त तीव्र विषादके कारण उनके पैर आगेकी ओर नहीं पड़ते थे । इस समय वे किसीसे मिलनेमें बड़ी ही लज्जाका अनुभव करते थे । बहुत कुछ सोच-विचारकर उन्होंने एक विश्वासपात्र कर्मचारीको बूँदी भेजकर मंत्री महोदयको बुलवाया, मंत्रीने तत्काल दिल्लीको प्रस्थान किया और बूँदी-भवनमें महाराजसे मिलकर कुशल-क्षेम पूछा । आदिसे अन्त तक सारी घटनाओंसे महाराजने उसे अवगत किया । मंत्री महोदयने निवेदन किया—‘राजन् ! ऐसी कोई घटना बूँदीमें नहीं घटी है, जो आपकी प्रतिष्ठाके विपरीत हो । जहाँ तक मैं समझता हूँ, राज-भवनमें तो ऐसा नहाना हुआ था ।’

‘किन्तु वह सुहागका चिह्न कटार और मुद्रिका शेरशाहको कहाँसे मिली ?’

‘हो सकता है; ठीक वैसी ही उसने किसीसे बनवा ली हो।’

‘किन्तु कटार और मुद्रिका ही प्रमाणमें न देकर उसने रानीके गुप्त चिह्नोंको बताया है, वह तो भूठे नहीं हो सकते।’

मन्त्री विचार-मग्न हो गया। कुछ देर पश्चात् बोला—‘आजसे पन्द्रह-बीस दिन पहले बूँदीमें एक बहुत बड़े सौदागरके आनेकी बात छोड़कर और किसी भी नवाब या राजा आदिके आनेकी बात भी नहीं हुई है। मेरी समझमें तो यह सब जाल है।’

‘कुछ भी हो, मगर प्रमाण इतने अकाव्य हैं कि मानना ही पड़ेगा। हो सकता है, जिस सौदागरकी बात आप बता रहे हैं, वह छद्मवेशमें नवाब रूहेला शेरशाह ही रहा हो।’

‘मन्त्री चुप हो गया। उसने महाराजसे निवेदन किया—‘आपको बूँदी चलकर इसका पता लगाना चाहिए।’

‘पता तो लग ही गया है। मैं न तो बूँदी जाना चाहता हूँ और न तो रानीका मुँह देखना चाहता हूँ और न तो मैं यही चाहूँगा कि मेरा ही कोई मुँह देखे। बस जो कुछ होना था, सो हुआ। अब मैं बूँदी नहीं लौट सकना।’

महाराज छत्रसालकी बातें सुनकर मन्त्री अवाक् रह गया। सोच-विचारकर भी वह कुछ न कह सका।

‘अब आप जाइए। आपकी बातोंसे भी यही प्रमाणित होता है कि अवश्य ही नवाब रूहेला शेरशाह बूँदीमें एक व्यापारी वेशमें कुछ समय तक रहा और उसने अपने कार्यमें सफलता भी प्राप्त की। उसने जो कुछ प्रमाण प्रस्तुत किया है, वह सब सही है।’

‘किन्तु बूँदीकी जनता अपने महाराजका इस प्रकार अन्त नहीं देख सकती महाराज ! यदि मान लिया जाय महारानीमें कोई आचरण सम्बन्धी दोष आ ही गए हों, तो उनका आप भले ही परित्याग कर दें, किन्तु अपना प्राण आप क्यों गवाँ दें ? इसके लिए आपको युद्धकी-

घोषणा करनी चाहिए । सभी राजपूत वीर आपके लिए प्राण हथेली-पर रखकर युद्धके लिए तैयार हो जायेंगे ।’

‘बस; इन सभी बातोंसे कोई लाभ नहीं । जब अपनी पत्नीके ऊपर विश्वास करनेसे यह स्थिति उत्पन्न हो गयी, तब प्रजाके ऊपर, कैसे विश्वास किया जा सकता है ? और सबसे बड़ी बात तो यह है कि सम्राटका इसमें कोई दोष भी नहीं, दोष तो मेरा है । शर्तनामेके अनुसार सम्राट यदि न्याय करते हैं; तो उनका क्या दोष ? जाइए सन्तोष कीजिए, मोह त्यागिए, मरना एक न एक दिन है ही, कल नहीं, आज ही सही ।’

मन्त्री चुप होकर महाराजकी ओर देखता ही रह गया ।



२२

‘कुछ पता-वता चला महाराज !’ शेरशाहने जगतसिंहसे पूछा ।

‘अभी तो कुछ भी पता नहीं चला नवाब साहब ! मैंने तो यही सुन रखा है, छत्रसाल बूँदी गए ही नहीं ।’

‘बूँदी न जाना ही अच्छा होगा महाराज ! अगर बूँदी गए, तब तो सारा भंडाफोड़ ही हो जायगा ।’

‘मैंने पता लगानेके लिए जासूस नियुक्त कर दिया था, उसके द्वारा अभी तक जो समाचार प्राप्त हुए हैं, उसके अनुसार वे बूँदी जानेके लिष तैयार ही नहीं हो रहे हैं ।’

‘बादशाह सलामतने वाकई बड़ी सख्त गलती की, जो छत्रसालको बूँदी जानेका हुक्म दे दिया, अल्लाह जाने क्या होगा ।’ चिन्ता व्यक्त करते हुए शेरशाह बोला ।

‘किन्तु बूँदी-नरेश अपनी राजधानी जानेपर तैयार ही नहीं हो रहे

हैं। यदि वे बूँदी गए, तो अवश्य ही सारी घटनाओंपर प्रकाश पड़े बिना नहीं रह सकता और सभी बने बनाए काम बिगड़ जायेंगे।'

‘बस, अल्लाहतालासे मेरी कामयाबीके लिए दुआ कीजिए महाराज !’

प्रतिहारीने अपनी ओर ध्यान आकृष्ट करते हुए निवेदन किया—
‘हुजूर ! खुफिया पुलिसके एक हाकिम आए हैं। वे सरकारसे मिलना चाहते हैं। अगर इजाजत हो, तो उन्हें पेश किया जाय।’

‘हाजिर करो उनको।’

आगन्तुकने दोनों व्यक्तियोंको अभिवादन किया और वह उनके समक्ष खड़े होकर आज्ञाकी प्रतीक्षा करने लगा।

‘बैठो भाई, क्या खबर लाए ? अर्ज मारूज करो।’ गेरशाहने आगन्तुककी ओर दृष्टिपात करते हुए कहा।

‘महाराजा साहिब बूँदी नहीं गए हुजूर ! एक आदमी भेजकर उन्होंने अपने वजीरको बुलवाया था। वजीरने उनको बहुत समझाया-बुझाया, मगर फिर भी वे वहाँ जानेके वास्ते राजी न हुए।’

‘तब क्या हुआ ?’

‘वजीरको लाचार होकर बूँदी लौट जाना पड़ा।’

‘उसने कुछ कहा नहीं ?’

‘उसने महाराजाको बहुत समझाया और कहा—आप बूँदी चलकर सारे मामलेकी जाँच तो कर ही लीजिए।’

‘तब महाराजने क्या कहा ?’

‘महाराजने फरमाया—मैं जाँचकरके क्या करूँगा ? मान लेता हूँ; कटारवाली बात झूठी पड़ सकती है, अँगूठीवाली बात झूठी पड़ सकती है, मगर बदनके निशानोंवाली बात तो बिल्कुल सच है। ऐसी हालतमें जाँच पड़तालसे क्या फायदा ? जब बदनके निशानोंवाली सभी बातें सही हैं, तब कटार और अँगूठीवाली बात भी कैसे झूठी मानली जाय ?’

‘इसपर वजीरने कुछ नहीं कहा ?’

‘वह बोला हुजूर !’

‘क्या कहा ?’

‘उसने फरमाया सरकार ! मान लिया जाय महाराज ! सब बातें सही हैं, तो क्या आपको इस तरह बेगुनाह मरना चाहिए ? इसमें तो हुजूरकी कोई खता नहीं है । खता औरतकी और जान सरकार अपनी दें ? बूंदी राज्यकी रियाया हुजूरके लिए अपनी जान दे सकती है । अगर सम्राट आपको रिहा नहीं कर देते, तो हम बगावत करनेके लिए तैयार हैं ।’

‘तब छत्रसालने क्या कहा ?’

‘उन्होंने कहा हुजूर !—बात तो आपकी ठीक है और मुझे रियासतकी वफादार रियायापर भरोसा भी है; मगर मुझे फाँसीका हुक्म देनेवाले इन्साफ-पसन्द शाहंशाह शाहजहाँकी इसमें क्या गलती है ? जब उनकी कोई गलती नहीं, तब उनके खिलाफ हम क्यों बगावत करें ?’

‘फिर मंत्रीने क्या कहा ?’

‘उसने कहा हुजूर !—‘मगर महाराज ! इसमें आपका ही दोष क्या है ? यदि रानी साहिबामें कोई दोष आ ही जाय, तो आप उनका परित्याग भले ही कर दें; मगर दोष रानी साहिबाका और जान आप दें हुजूर ! मुझसे तो कुछ कहा नहीं जा सकता ।’

‘फिर क्या हुआ ?’

‘महाराज बोले—‘मैं आपकी बातोंसे सहमत नहीं हूँ मंत्री महाशय ! आप पूछेंगे—क्यों ? तो सुनिए—पहली बात तो यही है कि अपनी पत्नी के किए पापोंका उत्तरदायित्व पुरुषोंपर भी होता है । कोई भी व्यक्ति अपनी स्त्रीके द्वारा किए गए पुण्यका भागीदार भले ही न हो, किन्तु पाप तो उसे बँटाना ही होगा । हमारे धर्म-ग्रन्थोंमें ऐसा ही लिखा हुआ कुछ लोग मानते आ रहे हैं । इसलिए मुझे भी अपनी स्त्रीके दोषोंका फल भुगतना ही पड़ेगा । यह सब जो कुछ भी हो रहा है, उसमें सम्राटका

कोई दोष नहीं है। न तो जबरन उन्होंने मुझसे शर्त्त बदनेकी बात कही और न उस शर्त्तमें उन्होंने गला कटानेकी ही कोई बात कही। भला निर्दोष सम्राटके खिलाफ बगावत करके मैं क्या-क्या फायदा उठाऊंगा ? जब मैं वचन हार गया, तब जो दुःख-सुख पड़े, उसे सहन करना चाहिए।'

'तब मंत्रीने क्या जवाब दिया ?'

'मंत्री तो उस वक्त चुप हो गया हुजूर !'

'अरे फिर कोई परारथना-ओरारथना उसने नहीं की ?'

'कुछ भी नहीं हुजूर !'

'और छत्रसालने फिर नहीं कुछ कहा ?'

'नहीं सरकार वे भी चुप हो गए।'

'वे भी चुप हो गए ?'

'जी हाँ हुजूर !'

'हाँ, इसके आगे वे बेचारे कहते ही क्या ?' महाराज जगतसिंह बोले।

'नहीं, नहीं महाराज ! मेरे कहनेका मतलब है कि छत्रसालको अब सिर कटाना मंजूर है, या अभी उसके बारेमें कोई पैतरेबाजी करना चाहते हैं ?'

'जब आपके दिए हुए सभी सबूत उनके द्वारा पक्के मान लिए गए और उन्हें उसके बारेमें कोई उज्र नहीं है। तब कौन पैतरेबाजी करेंगे।' जगतसिंह बोले।

'इसके मानी हैं, अब वे अपना सर कटानेके लिए तैयार हैं। क्यों ? है न यही बात ?'

'हाँ हुजूर ! बात तो यही जान पड़ती है। अगर शर्त्तनामेके मुताबिक उन्हें फैसला कबूल न होता, तो भला एक महीनेकी मुहलत पाने-पर भी वे चुपचाप बैठे रहते ? ऐसा हरगिज नहीं हो सकता था। वे रात-दिन दौड़-भूपकर अपनी सारी ताकत लगा देते।'

‘हाँ, हाँ । इसमें कुछ भी सन्देह नहीं । आत्म-रक्षाके लिए तो हर आदमी प्रयत्न करता ही है । जगतसिंह बोले ।

‘मैं तो तुम्हारे ऊपर बहुत खुश हूँ । तुम्हारी वफादारी दयानतदारी काबिलेतारीफ है । इन्शाअल्लाह बूंदीका काम सँभाल लेनेके बाद मैं सोचता हूँ—जल्द ही तुम्हें ही अपना वजीर बनाऊँगा । जरा तसल्ली रखो । खुदासे मेरी कामयाबीके वास्ते दुआ करो ।’ खुफिया हाकिमसे शेरशाहने कहा ।

‘परवरदिगार हुजूरको कामयाबी अता फरमावे । मेरी यही दुआ है ।’

‘देखिए महाराज साहब ! खुदा जब कभी किसीको देता है । तो अनायास ही दे डालता है । उसकी मरजी तो देखिए । इसीको छप्पर फाड़ कर देना कहा जाता है । वाकई उसका कोई राज समझा नहीं जा सकता ।’

‘इसमें क्या संदेह नवाब साहब !’

‘मगर मेरे उस दिन मना करनेपर भी दोस्त तुमने ग़ौर नहीं किया और आखिरकार एक शरीफ आदमीके पीछे पड़कर जाल-फरेबमें उसे फाँसकर उसकी आबरू और जान लेनेपर उतारू ही हो गए ।’ शेरशाहके एक मित्र हसनखाने कहा ।

‘आपसे तो मैंने इसके बारेमें मददके लिए पहले ही अर्ज की थी, मगर बुजदिली और खोफकी वजहसे आपकी हिम्मत ही न पड़ी । अगर आपने जरा भी उस वक्त मेरी मदद की होती, तो वाकई मैं आपको निहाल कर देता । सारी जिन्दगी मौज उड़ाते ।’ शेरशाह बोला ।

‘मगर शेरशाह ! दुनियाँमें खुदाई खोफ व इन्साफ भी तो कोई चीज है ! मुझे बेईमानी और दगाबाजीसे मालामाल होना कबूल नहीं । मैं जलील इन्सान नहीं हूँ । मैं तो भूखों मर जाना अच्छा समझता हूँ, मगर इस तरह मालामाल होना ठीक नहीं समझता ? अगर हम किसी की मदद नहीं करते और नेकी नहीं करते, तो हमें उसका गला भी नहीं

काटना चाहिए । तुम्हें तो जहालतके परदेकी वजहसे कुछ सुझायी नहीं पड़ता । जो पागलोंकी तरह बूँदी-बूँदी करते रहते हो, उसका ख्वाब देखते रहते हो, सो इतना सरल नहीं है । खुदाके यहाँ देर जरूर है, मगर अन्धेर नहीं; समझे जनाबमन्द ! देखो क्या होता है ।' हसनखाँ-ने दड़तासे उत्तर दिया ।

‘यही होगा--देखिएगा--मैं बूँदीकी रिसायत पर बादशाह सला-मतके हुक्मसे कब्जा करूँगा । बस दो-चार ही दिनोंकी देर और है । बूँदी-नरेश छत्रसालको सर उतरवाना होगा । इन्शा अल्लाह...’

‘मेरा फर्ज था; तुम्हें समझाना । मानो या न मानो, तुम जानो; तुम्हारा काम जाने । मैं तो अत चला । माफ करना महाराजा साहब ! आदाबअर्ज !’ कहते हुए हसनखाँ चला गया ।



२३

‘क्यों महाराज साहब ! आप आ गए ?’ शाहजहाँने पूछा ।

‘जी हाँ सम्राट ।’ छत्रसालने निवेदन किया ।

‘बूँदी आने और जानेमें तो वाकई आपने कमाल कर दिया । मैं नहीं समझता था कि इतने थोड़े वक्तमें आप बूँदी जाकर लौट आवेंगे ।’

‘मैं तो बूँदी गया ही नहीं सम्राट !’

‘क्यों; आपसे तो मैंने कहा था, वहाँ जानेके लिए ।’

‘मैंने बहुत सोच-विचार कर देखा सम्राट ! वहाँ जानेमें कोई लाभ नहीं था । मैंने शेरशाहकी ही सभी बातें सच मान लीं ।’

‘मगर आपको तो इसकी जाँच वहाँ जाकर करनी ही थी ।’

‘वह तो इसकी जरूरत तब पड़ती सम्राट ! जब शेरशाहकी बातों में सन्देह होता ।’

‘अच्छा मान लीजिए शेरशाहकी सभी बातें ठीक थीं और शर्तनामे के मुताबिक आपका अपना सर उतरवाना भी हो, तब भी तो बूंदी जाकर अपने राज्यका बन्दोबस्त कर आना चाहिए ।’

‘मैंने इसकी भी कोई आवश्यकता नहीं समझी; इसीलिए बूंदी नहीं गया ।’

‘मगर आपको फिर भी ईत्मीनानुके लिए बूंदी जाकर पता लगाना चाहिए था—‘कटार जहाँ रखी गयी थी, वहाँ वह है, या नहीं ? अगर वहाँ है, तो कोई बात नहीं; लेकिन यदि वहाँ कटार नहीं है, तब भी तो यह पता लगाना ही चाहिए कि वहाँसे किसने उसे हटाया और कब हटाया वगैरह-वगैरह सभी बातोंकी तहकीकात तो करनी ही चाहिए । अगर आपकी खाहिश अब भी हो, तो दो हफ्तेका वक्त और भी दिया जा सकता है । आप बूंदी जाकर तहकीकात कर आवें ।’

‘नहीं सम्राट ! मैं कुछ भी तहकीकात नहीं करना चाहता ।’

‘फिर भी बूंदी जाकर अपनी रियासतका इन्तजाम तो कर आना ही चाहिए ?’

‘मगर जहाँपनाह ? जब महाराजा साहब शर्तनामेको मान कर अपनी खाहिशसे सब मंजूर करते हैं, तब उसमें हुजूर ! देर करनेकी कोई जरूरत नहीं ।’

‘मगर इन सब बातोंको तुम नहीं समझ सकते । जल्दबाजीका काम बुरा होता है । आज तो नहीं कलको दुनिया फिरकेदाराना जहर रियायामें बो देगी और सब लोग कहने लगेंगे कि शाहंशाहने एक हिन्दू राजाके साथ ज्यादाती की थी ।’

‘शेरशाह मौन हो गया ।’

छत्रसालने निवेदन किया—‘नहीं सम्राट ! आप कोई ज्यादाती नहीं कर रहे हैं । आप इन्साफ-पसन्द बादशाह हैं, आपको कोई बदनाम नहीं कर सकता । मैंने जो निश्चय कर लिया है, मैं उस पर अटल हूँ । मृत्युसे

मैं डरता नहीं, क्योंकि एक न एक दिन अवश्य ही मरना है, तो फिर आगा-पीछा सोचनेकी कोई आवश्यकता नहीं । अब शर्तनामेके अनुसार कार्यवाही करें । अब विलम्ब न करें ।'

'मगर आपके लिए मुझे बड़ा अफसोस है राव साहब !'

'सम्राट ! आप जरा भी इसके लिए अफसोस न करें; क्योंकि आदमी के वशकी कोई बात नहीं । सब बातें ईश्वरकी इच्छासे हुआ करती हैं ।'

'अगर आपकी यही मर्जी है, तो अब आप शाही कैदी हैं, हालाँकि ऐसा कहते मुझे बड़ा अफसोस है ।'

'कोई बात नहीं सम्राट ! मैं तो इस आज्ञाकी प्रतीक्षा ही कर रहा था ।'

'वाकई रावसाहब ! आपके समान ईमानदार और बातका पक्का और कोई नहीं है । तह्व्वर खाँ ?'

'जी हाँ हुजूर !'

'महाराजा साहबको शाही मुजरिमकी हैसियतसे कैदखाने भेजो; दो हफ्तेके बाद इनका सर धड़से अलग कर दिया जायगा ।'

'जो हुक्म हुजूर !'

'इन्साफको क्या किया जाय, मुझे तो महाराजपर बड़ा रहम है । लाचार हूँ कानूनसे ।' दुःख प्रकट करते हुए सम्राटने कहा ।

'जहाँपनाह ! महाराज साहिबने बड़ी गलती की, जो अपनी औरतकी बहादुरीमें शर्त बद दी । और भी लोग दरबारमें थे, मगर उन लोगोंने तो ऐसा नहीं किया । भला औरतोंका भेद कोई पाता है ? कौन कह सकता था कि महारानी किरणपरभा इतनी बदचलन औरत हो सकती है !'

'चुप रहो ज्यादा बात मत करो । तुम्हारी ये बातें मुझे अच्छी नहीं लगती ।' सम्राटने रोककर शेरशाहको शान्त कर दिया ।

सभा भंग हो गयी । सभी दरबारी उठकर चले गए । महामंत्री तह्व्वरखाने महाराज छत्रसालको बन्दी बनवाकर कैदखाने भेज दिया । बन्दी

महाराज छत्रसालने एकान्तमें सोचा—‘यही जीवन है। इसी प्रकार इसका अन्त होना था ! सब राज-पाट, सारे वैभव, सारी प्रतिष्ठा, अन्त-में एक भी साथ नहीं दे सकी। राजा-प्रजा, धनी-दरिद्र, परिणत-मूर्ख, सशक्त-दुर्बल सब यहीं समान हो जाते हैं। काल दुराधर्ष है, इसकी गति कोई अवरुद्ध नहीं कर सकता। किसी शूरवीरकी, बुद्धिमान्की, सम्पत्ति-शालीकी और किसी भी महान्से महान् व्यक्तिकी शक्ति अन्तमें यहीं फेल हो जाती है। यही जीवनका क्रम है। कितनी महान् सत्ता है यह ! जीवन और मरण ! जीवन चाहे भले ही न हो, किन्तु जीवनके पश्चात् मरण तो निश्चित ही है। मेरी मृत्युके केवल दो सप्ताह शेष हैं ? शेष जीवन प्रमादमें व्यतीत हो गया ? आश्चर्य है, खेद है; मैंने कभी भी बीते क्षणोंका मूल्य न समझा ! मैंने यों ही लापरवाहीमें ही अबतक सारा जीवन व्यतीत कर दिया। मैं तो अपने जीवनमें कुछ भी न कर सका। केवल पश्चात्तापके और कुछ भी हाथ नहीं लग रहा है ? अब क्या हो सकता है ? जब साधन था, अवसर था; तब कुछ करनेकी इच्छा नहीं थी और अब जब कुछ भी नहीं शेष रह गया, तब इच्छा हो रही है, और पश्चात्ताप हो रहा है। क्या आश्चर्यकी बात है। मनुष्य यह तो अवश्य ही जानता है कि एक न एक दिन उसे सब कुछ छोड़कर मरना है, कुछ भी साथ नहीं जायगा। साथ सबका छूटकर ही रहेगा। तब भी वह जागरूक नहीं होता, सजग नहीं होता। इससे बढ़कर आश्चर्यकी बात क्या हो सकती है ?’

‘और मेरी दशा ? कुछ भी नहीं कह सकता। मुझे क्या पता था कि विपत्तिका इस प्रकार पहाड़ मेरे ऊपर टूटनेवाला है। अकारण बैठे-बैठा यह बखेड़ा मोल ले लिया। मुझे मरनेकी चिन्ता तो नहीं है; क्योंकि वह तो अनिवार्य है ही; किन्तु बेइज्जती जो हो गयी, वह ऊपरसे और भी भोगनी पड़ी। सम्राट तो बड़े उदार हैं और न्यायप्रिय भी हैं। इस घटना में उन्हें बड़ा दुःख हुआ है। वे बेचारे मुझे तो बार-बार इससे बचनेके लिए प्रेरित करते रहे। एक बार मुझसे जो गलती हुई, वह तो हुई ही

थी; किन्तु दुबारा उससे भी बड़ी गलती हुई, जो हठपूर्वक मैंने सम्राट-की बातोंको माननेसे इन्कार कर दिया। मुझे उनकी बात अवश्य मान लेनी चाहिए थी। रानीमें तो यह दोष नहीं हो सकता, एक बार जगत-सिंहने जब उसका हाथ स्पर्श कर लिया था, तब वह उसे ही काटनेके लिए तैयार हो गयी थी। ऐसी दशामें कैसे मान लिया जाय कि उसके आचरणमें दोष उत्पन्न हो गया है। अवश्य ही मुझे इन सारी बातोंकी छानबीन करनी चाहिए थी। सारा रहस्य प्रकट हो जाता; किन्तु ये सभी विचार उस समय नहीं मनमें उठे, अब इनका उपभोग ही क्या ? जाओ रानी ! तुम्हारा कुछ भी दोष नहीं; दृढ़तापूर्वक मेरी अंतरात्मा कह रही है—तुम निर्दोष हो। फिर भी मैं मर रहा हूँ, सारा उत्तर-दायित्व मेरे ऊपर है और यही ईश्वरकी इच्छा भी है। तुम्हें तो इस बातका पता भी नहीं होगा कि इस प्रकार मैं मर रहा हूँ। यदि तुम्हें इसका पता चल जाता, तो भी मुझे बचानेका कोई न कोई प्रयत्न तू अवश्य ही करती। मैंने मंत्रीसे सारी बातें कह तो दिया था, किन्तु वह तुमसे इन गुप्त बातोंको प्रकट नहीं कर सकता।'

‘अचानक मेरी मृत्युकी सम्पूर्ण घटना सुनकर रानी बेचारी व्यथासे पागल हो उठेगी। अवश्य ही उसे इस घटनाकी सूचना दी जानी चाहिए थी; किन्तु यह क्या ? यह तो मैं फिर मोहजालमें फँसता जा रहा हूँ। इस समय मुझे आत्मस्थ हो चित्तवृत्तियोंको समाहित कर ईश्वरका ध्यान करना चाहिए, जो एक समान प्रत्येक अवस्थामें साथ देनेवाला है। यदि मेरा मरण निकट न होता, तो इन परिस्थितियोंमें मेरी ही विजय क्यों नहीं हो गयी। मरणकाल उपस्थित हो जाने पर कोई चालाकी काम नहीं दे सकती। अतः इस विषयमें अब कुछ भी सोचना-समझना व्यर्थ है। जो होना था, वह हो चुका। रे मन ! अब तू शान्त हो जा।’



प्रातःकालका समय था। सारी जनताका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हुए एक राजकर्मचारी ढोल पीट-पीटकर कह रहा था—‘मुल्क बादशाहका, हुक्म सरकारका सारी रियायाको वाकिफ किया जाता है कि बूंदी-नरेश महाराजा छत्रसाल, नवाब रुहेला शेरशाहसे शर्तमें हार गए। शेरशाहने शाही दरबारमें शर्तनामेके मुताबिक सब सबूत पेश कर दिया; इस वजहसे कल शामको चार बजे महाराजा साहबको फाँसी दी जायगी। तमाम रियायाको इत्तला दी जाती है कि वक्तपर वह किलेमें हाजिर हो।’ एक मुहल्लेसे दूसरे और वहाँसे तीसरे, चौथे और इसी प्रकार आगे ढोल पीट-पीटकर राज्याज्ञा घोषित करते हुए वह बढ़ा जा रहा था।

कितने ही नागरिक जो महाराज छत्रसालसे परिचित थे, राज्याज्ञाकी घोषणा सुनकर स्तब्ध रह गए। कितने ही लोग पश्चात्ताप करने लगे। कितने ही आपसमें कहने लगे—‘यह बुरा हुआ, बहुत बुरा। बेचारे भले मानसकी इस तरह मौत बदी थी। क्या किया जाय ? किन्तु किसीका इसमें बश तो है नहीं। हुक्म ही कानून है।’

दूसरे दिन दोपहरको सम्राट शाहजहाँका दरबार लगा था। सभी दरबारी उपस्थित थे। आज ही महाराज छत्रसालको फाँसी होगी, प्रसंगानुसार इस संबंधमें वार्ता छिड़ी थी। सम्राटका दिल दुःखी हो गया। ‘बेगुनाह बेचारेको फाँसी हो जायगी।’ दुःख व्यक्त करते हुए सम्राटने सभामें कहा।

‘औरतोंका माजरा ऐसा ही होता है जहाँपनाह ! कोई भी अक्ल-मन्द आदमी औरतोंका इस तरह यकीन नहीं कर सकता। और ज्यादा क्या अर्ज करूँ हुज़ूर !...।’ शेरशाह बोला।

‘मगर कुछ भी हो, मुझे इस वाकियेसे बहुत रंज है, क्या करूँ, इन्साफकी बात सोचकर मैं खामोश हो जाता हूँ।’ शाहजहाँने कहा।

‘जहाँपनाह ! आपकी खिदमतमें एक औरत हाज़िर होना चाहती है, हुक्मकी इन्तज़ारीमें वह बाहर खड़ी है।’ कहकर प्रतिहारीने सभा और सम्राटका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया।

‘हाज़िर करो।’ आदेश हुआ।

‘जो हुक्म हुज़ूर !’ कहकर प्रतिहारी बाहर चला गया।

‘थोड़ी देरमें एक स्त्रीको उसने सभामें उपस्थित कर दिया। दरबारियों और सम्राटकी दृष्टि उस स्त्रीकी ओर केन्द्रित हो गयी। स्त्रीने मस्तक झुकाकर सम्राटको अभिवादन करते हुए सम्मान प्रदर्शित किया।

‘अर्ज करो, क्या चाहती हो?’

स्त्रीने बड़ी विनम्रतासे निवेदन किया--‘हुज़ूर ! मैंने सुना था कि शाहज़ादा साहबकी सालगिरह नज़दीक है इसीलिए जलसेमें हम भी शरीक होकर अपनी खुशी ज़ाहिर करें, ऐसा करनेसे हमलोगोंको बाद-शाह सलामतकी पेशीमें अपना हुनर दिखानेका मौका मिलेगा।’

‘मगर सालगिरहका जलसा तो बीत गया।’

‘क्या करें हुज़ूर ! बड़ी दूरसे हम लोगोंका आना हुआ है।’

‘तुम्हारा आना कहाँसे हुआ है?’

‘फिलहाल हुज़ूर हम लोग बूंदीसे आ रही हैं।’

‘और कहाँकी रहनेवाली हो?’

‘जहाँपनाह ! हम लावतनकी रहनेवाली हैं। हुज़ूर ! हमारे गिरोहमें दो कमसिन नाचने-गानेवाली हैं, जो अपने हुनरमें कमाल पैदा कर देती हैं।’ नर्तकियोंकी स्वामिनीने आकर्षण पैदा कर दिया। सारे सभासदोंकी दृष्टि इस सुन्दरीकी आकृतिपर जा पड़ी। स्वयं सम्राट शाहजहाँ भी उसके रूपपर मुग्ध हो गए। बार-बार उसकी ओर देखते हुए सम्राट पुनः बोले--‘हालाँकि हमारी तबियतको इस वक्त बड़ा रंज है और हम कोई जलसा या महफिल नहीं कराना चाहते, मगर

इतने दूरसे तुम लोगों के आनेसे दिल बहलावके लिए एक घण्टेका वक्त दे देता हूँ। तुम्हें जो हुनर दिखाना हो, दिखाओ।'

‘जो हुक्म सरकार !’

नर्तकीने शाही आज्ञाका तत्काल पालन किया। थोड़ी ही देरमें वह अपने समग्र साज-सामान एवं सभी स्त्री-पुरुष पात्रोंके सहित दरबारमें आ उपस्थित हुई। दरबारियोंकी उत्सुकता तीव्र हो उठी। नृत्य और संगीत प्रारम्भ हुआ। स्वर तंत्रीने अस्फुट ध्वन्यास्फालन प्रस्तुत किया—
‘स र प — — — — प ध सं’ उन्हीं स्वर तालोंके समानान्तर गायिका ने गीतको आरोहित कर दिया—‘जी ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ व न जी ऽ ऽ ऽ ऽ ऽ व न गं — — — — गं रं स ध प ग र न जी ऽ ऽ ऽ ऽ व न जी ऽ ऽ व न वी ऽ ऽ णा ऽ ऽ के म — — — — स रे प — — — — के ऽ ऽ बँ धे ऽ ता ऽ ऽ ऽ र ऽ। जी ऽ ऽ ऽ व न।’ संगीत के इन ‘स्थायी बोलों’ के अनन्तर अविरामवर्णोंकी ‘अन्तरा’ की ध्वनि-धारा बह चली—
‘व्यथा औ ऽ र सु ऽ ख ऽ की ऽ रागनियाँ ऽ ऽ याँ ऽ फू ऽ टा ऽ करतीं ऽ ऽ ता ऽ ल सँभा ऽ ऽ ऽ र। जी ऽ ऽ ऽ व न।’ इन बोलोंके अवसानके साथ ही नर्तकीके नूपुर-बद्ध पैर गतिशील हो गए—शास्त्रीय भावभंगि-माओंके साथ—‘त त्-त त् धून्-धून्। तिद्धा, दिग्-दिग् थेई ऽ ऽ — — तिद्धादिग्दिग् थेई तिद्धा। दिग् दिग् थेई तिद्धा दिग्-दिग्।’ वाद्य-धारा भी नृत्यकी इन शृंखलाओंको मर्मस्पर्शी ‘संगति’ दे रही थी—
ता-त-किनक धिन् ता-त-किनक धिन्-ता, त्रिटकिन्-त्रिटकिन् ता; धीन् ता। ता।’ गीतिके आयाम आगे बढ़े—‘नियति नटी ऽ ऽ ऽ के ऽ भा ऽ ऽ व नृत्यमें ऽ ऽ ऽ सदा ऽ ऽ बहे ऽ ऽ ऽ ये ऽ दो ऽ ऽ प्रवा ऽ ऽ ह। जी ऽ ऽ ऽ व न ०।’ और इसी क्रममें गीतिकी अवशिष्ट शृंखलाएँ संगीतके ‘सप्तग्राम’ और ‘ऊनचास मूर्च्छनाओं’ में तैरने लगीं। नृत्य, वाद्य एवं गीतका अद्भुत समाहार, संगीत-सहायिनी (गानेवाली स्त्रियों) के रूप और यौवनका उन्माद, गीतिकी आत्माके अनुरूप

उनकी भाव-भीनी वक्रचितवन, सुरीली राग इत्यादिकने एक साथ ही मिलकर दर्शकोंको मुग्धकर लिया । इतनी उत्कृष्ट शास्त्रीय नृत्य-कला-का साक्षात्कार कभी भी दरबारियों समेत सम्राटने नहीं किया था । गीतके चरण इस प्रकार थे—

‘जीवन-वीणाके कसे तार ।’

व्यथा और सुखकी रागनियाँ फूटा करतीं ताल सँभार ।

नियति - नटीके भाव - नृत्यमें सदा बँधे ये दो प्रवाह ।

क्रान्ति - शान्तिके दो कूलोंमें फैले हैं ये स्वर प्रकार ।

विश्व गीतिशाला, गायक नर, जीवन - मृत्यु चढ़ाव - उतार ।

हँसी और आँसूके स्पन्दन्; कौन असत् है कौन यथार्थ ?’

गीतिकी भावनात्मक गम्भीरताको नृत्यकी भंगिमाएँ एक ऐसी सशक्त ऊर्जा दे रही थीं कि दरबारका कण-कण एवं उसमें विद्यमान सम्राट सहित समस्त दरबारियों एवं पहरेदारों तककी हृदयस्थलीका कण-कण संगीतमय हो उठा । कोई गीतके अर्थोंमें डूब रहा था, तो कोई भावभंगिमाओं एवं स्वर-वाद्य-पद्धतिपर ही मोहित था ।

सम्राटकी दृष्टि नर्तकीके ऊपर ही लगी रह गयी । सारा वातावरण मादक हो उठा । सम्राट स्वयं यह निर्णय न कर सके कि ये नर्तकियाँ मानवी हैं, या स्वर्गकी अप्सराएँ । सभी लोग अपनी सुध-बुध भूल गए ।

नृत्य समाप्त हुआ । चारों ओरसे ध्वनि आयी—वाह ! वाह !! बहुत खूब !!! हुस्नके साथ-साथ गाने और नाचनेमें वाकई कमाल कर दिया । इनकी गानेकी तर्ज तो बहुत बेहतरीन है ।’

‘वाकई तुम्हारे नाच-गान और हुनरने तो जादूका काम कर दिया । तुम्हारी खूबसूरती तो वाकई काबिलेतारीफ है । मेरी तबियत तुम्हारे हुस्नको देखकर बड़ी खूश हुई है । मैं दिलसे तारीफ करता हूँ । तुमको जो इनाम माँगना हो माँग लो ।’

‘जहाँपनाह ! हमें आपकी दया चाहिए । हमारे पास किसी चीज की कमी नहीं है । हम तो शाहजादा साहबकी बरसगाँठकी खुशीमें अपना हुनर दिखाकर अपनी खुशी जाहिर करने आयी थीं । वह काम पूरा हुआ ।’ नर्तकीने बड़ी विनम्रतासे निवेदन किया ।

‘बात ठीक है । मगर शाहंशाहसे इनाम न माँगना दरबारको तोहीन करना है ।’

‘जहाँपनाहका हुक्म सिर आँखों पर । अगर हुजूर इनाम देना ही चाहते हैं तो ...’

‘हाँ, हाँ तुम्हारी जो खाहिश हो, मेरी जान, शाही इज्जत, ताज व तख्तके अलावा चाहे जो माँग लो ।’

‘हुजूरकी मेहरबानी ।’ नर्तकी बोली ।

‘शेरशाह !’ सम्राट बोले ।

शेरशाह उठकर खड़ा हो गया । उसकी जैसे तन्द्रा भंग हो गयी । विनीति स्वरमें उसने निवेदन किया—‘जी हुजूर !’

‘क्या वक्त है ?’

‘हुजूर ! दो बज रहे हैं । वक्त हो गया, जहाँपनाह !’

‘कैसा वक्त ?’ सम्राटने पूछा ।

‘वही हुजूर ! शाही हुक्मसे लाखों इन्सान हाज़िर हो गए हैं । अब सिर्फ आपको तशरीफ़ ले चलना बाकी है हुजूर ! किलेके पास तो सारी रिआया आकर जमा हो जहाँपनाहकी इन्तज़ार कर रही है । हुजूरका इन्साफ़ देखनेके लिए बड़ा मजमा जमा हो गया है ।’ शेरशाहने निवेदन किया ।

सम्राट शेरशाहकी बातोंमें प्रवृत्त हों, इसके प्रथम ही नर्तकीने निवेदन किया—‘जहाँपनाह ! सिर्फ पाँच मिनटका वक्त लगेगा, हमारा बखेड़ा भी खतम कर दीजिए सरकार ! क्योंकि अब हमारा काम पूरा हो गया, हम किसी दूसरे शहरमें चली जायँगी ।’

‘हाँ, हाँ। माँगो; क्या माँगती हो। मैं तुम्हारी खातिर जरूर पूरी करूँगा। पहले तुम्हारा काम ही खत्म कर दिया जाय। जल्द अर्ज करो।’

‘हुजूर ! अभी दस दिनों के करीब हुए कि आपके सामने ये जो नवाब रूहेला शेरशाह मौजूद हैं, किसी कामसे बूँदी गए थे, हाँला कि उस वक्त वहाँके महाराजा साहब वहाँ मौजूद नहीं थे, मगर उन दिनों हमलोगोंका डेरा वही था, वहाँ इन्होंने किसी कामके लिए हमसे सात हजार रुपए कर्ज लिया था और उसे एक ही हफ्तेमें लौटा देनेका वादा किया था। हुजूर ! इतना ही नहीं, इन्होंने मुझे धोखा देकर मेरा दीन-ईमान भी खराब कर दिया। इस तरह इन्होंने मेरा धन-दौलत सब कुछ लेकर मुझे कंगाल बना दिया और मेरा धर्म-ईमान लूटकर वहाँ भाग गए हैं। इन्हें खोजते-खोजते मैं परेशान हो गयी हूँ। अचानक इन्हें आज हुजूरकी पेशीमें पाया है। जहाँपनाह ! इसीका इन्साफ इनाममें चाहती हूँ।’

‘क्यों क्या बात है शेरशाह ? सुन रहे हो ?’

‘जी हुजूर ! सुन रहा हूँ जहाँपनाह !’ शेरशाह घबराकर बोला।

‘क्या माजरा है ? तुमने ऐसा किया है ?’

‘नहीं, नहीं हुजूर ! सरासर ग़लत बयान है, जहाँपनाह ! मैंने ऐसा कभी नहीं किया।’

‘नहीं जहाँपनाह ! ये हज़रत सरासर झूठ बोल रहे हैं। हुजूर ! यक़ीन कीजिए। इन्होंने मुझे जबरदस्त धोखा दिया है।’

‘नहीं हुजूर ! हरगिज नहीं। यह नटिनी झूठे फरेबमें मुझे फँसा रही है हुजूर ! इससे तो मुझसे कभी भी भेंट-मुलाकात ही नहीं हुई है। या खुदा ! मैंने तुम्हारी कभी शक्ल तक नहीं देखी है। मुझे अल्लाहके नाम पर मुआफ़ करो।’

‘क्या मैं झूठ कहती हूँ, तुम आजसे दस-पन्द्रह दिन पहले बूँदीमें नहीं मिले थे ? मेरे यहाँ तुम नहीं रहे थे ? मुझसे सात हजार रुपए

नहीं लिए थे । शर्म आनी चाहिए तुम्हें हुजूरके सामने झूठ बोलनेमें ।’

‘ऐ नेक औरत ! तुमको किसीने धोखा दिया है । मैं तो तुम्हें पहचानता भी नहीं । हो सकता है, तुम्हें मेरे नाम पर किसीने धोखा दे दिया हो । वर्ना मैं सच-सच कह रहा हूँ कि कसम रसूल पाककी, मैं कावे शरीफ की कसम खाकर कहता हूँ, मैंने तुम्हें कभी देखा तक नहीं है, मैं इधर काफी समयसे बूँदी गया भी नहीं हूँ रुपया लेना और ईमान-धर्म लूटना तो दर-किनार ।’

‘नहीं, नहीं जहाँपनाह ! मुझे धोखा नहीं हो रहा है । अभी ये हुजूरके सामने कबूल करेंगे कि इनसे मेरी काफी दिनोंसे जान-पहचान है और इन्होंने रुपए भी मुझसे उधार लिया है ।’

‘यदि तुमने मुझे रुपया दिया है और मैंने तुम्हारा ईमान लूटा है, तो जरूर ही तुम्हें अपना इलाज कराना चाहिए । तुम पागल हो गयी हो । तुम्हारी अकल दुरुस्त नहीं है । जब मैं कुरान लेकर कसम खा रहा हूँ कि मैंने तुम्हें कभी भी अपनी आँखोंसे नहीं देखा है और रुपया लेना तो दर-किनार रहा, तो भी तू बराबर मुझे ही झूठ-मूठका फाँसती जा रही है, तब क्या तू पागल नहीं है ?’

‘यहाँ बादशाह सलामतके सामने तुम्हारी धोखेबाजी नहीं लग सकती, समझे जनाब ! कायदेसे सब जो कुछ तुमने किया है; कबूल कर लो, इसीमें खैरियत है, नहीं तो तुम जानो, तुम्हारा काम जाने ।’

‘साफ-साफ बोलो शेरशाह ! यदि तुमने यह गलती की है, तो कबूल क्यों नहीं करते ।’ सम्राटने तीक्ष्ण ध्वनिमें कहा ।

‘नहीं हुजूर ! मैं कसम कुरानकी । सही-सही बता रहा हूँ । इनको मैंने कभी दूरसे भी नहीं देखा है, फिर ईमान-धर्म लूटने और रुपए कर्ज लेनेका कोई सवाल ही नहीं उठता । इनसे-मुझसे किसी भी वक्तसे न तो जान-पहचान है और न कोई सरोकार ही है । ये सरासर झूठ कह रही हैं, बन्दानवाज ! मैंने इनकी कोई चीज नहीं ली है, कलामे पाककी

हजारों-लाखों कसम खाकर जहाँपनाहके रूबरू सच-सच बयान करता हूँ । हुजूर ! इसका दावा सरासर झूठा है । मैं बूँदी गया ही नहीं था ।’

‘अगर मैं सबूत दूँ और बादमें यदि बिना किसी दबावके आप कबूल कर लें, कि मैंने इनका दीन-ईमान लिया है, इनका सामान लिया है, इनसे-हमसे खूब जान-पहचान है, तब क्या होगा ? अभी तो आप कुरान वगैरह ले-लेकर कसम खाते जा रहे हैं और कहते जा रहे हैं कि मैंने इनसे कोई चीज नहीं ली है, इनका दीन-ईमान नहीं लूटा है । इनसे मेरी कोई किसी वक्तसे जान-पहचान नहीं है । ये इस वक्त होश-हवास दुरुस्त होकर बातें कर रहे हैं, मगर जब सबूत पेश करूँगी; तब इसी दरबारमें और शाहंशाहके रूबरू आप बड़ी खुशीसे हमारी अपनी दोस्ती कबूल कर लेंगे, हमारी दी हुई चीजें भी लेना कबूल कर लेंगे; हमारे पास सारा सबूत मौजूद है ।’ नर्तकीने निवेदन किया ।

‘लाहौल विलाकूवत ! या खुदा, या परवर दिगार ! इतना झूठ ? खुदावन्द ! मैं आपके सामने अर्ज करता हूँ, कि अगर यह औरत अपने किसी भी सबूतके ज़रिए यह साबित कर दे कि हमारी और इसकी जान-पहचान भी कभी हुई हो, मैंने इसे कहीं देखा हो, इसका धर्म-ईमान लूटा हो और इसकी, रुपया ही नहीं; कोई चीज भी लिया हो, तो मैं मुलज़िम मान लिया जाऊँ और मुझे मौतकी सज़ा दी जाये । यह सब मैं होश-हवाससे दुरुस्त होकर कह रहा हूँ; तुम सबूत पेश करो ।’ उल्लेखनामें आकर शेरशाह बोला ।

‘ठीक है, यही मान लिया जाता है । इस मामलेका सारा फैसला तुम्हारे ही मनके मुताबिक मान लिया जाता है । बोलो नटिनी ! तुम्हारे पास क्या-क्या सबूत हैं; पेश करो ।’ सम्राटने शेरशाह और नर्तकीसे कहा ।

सारी सभामें सम्राट छ्वा गया । सबकी दृष्टि नर्तकीकी ओर जाकर रुक गयी । नर्तकीने निवेदन किया—‘आप होश-हवास दुरुस्त हैं ?’

‘हाँ हाँ कह तो दिया; एक बार नहीं हजार बार कह दिया ।’

‘देखिए जहाँपनाह ! जब इन्होंने न तो मुझे कभी देखा और न तो कोई जान-पहचान व सरोकार ही है और न तो मेरे हाथसे इन्होंने कोई चीज कभी भी लिया ही है, और न ये बूँदी गए, तो इनको मेरी कटार और अँगूठी कहाँसे मिल गयी ? जब कभी इन्होंने मुझे कहीं देखा ही नहीं और कभी भेंट ही नहीं हुई, तो मेरी जाँघमें लेहसुन, तिल और कोड़ेका निशान इन्होंने कहाँसे देख लिया ? जब इन्होंने मेरे शरीरको कभी छुआ तक नहीं, तो इन्होंने मेरा धर्म-ईमान कैसे लूट लिया । आप इसे खुद समझ लें जहाँपनाह; नहीं, नहीं धर्मपिता सम्राट शाह-जहाँ ! मैं बूँदी-नरेश महाराज छत्रसालकी पत्नी किरणप्रभा हूँ ।’

शेरशाह प्राण-विहीन हो गया । उसके शरीरमें रक्तकी जैसे एक भी बूँद नहीं रह गयी; उसके सारे अंग ढीले हो गए । उसकी जैसे सारी चेतना लुप्त हो गयी; घबराकर वह बोला—‘हुज्जूर !’ और पुनः विक्षिप्तोंकी भाँति पागलसा हो उठा; फिर कुछ कहनेका प्रयत्न करने लगा; किन्तु कुछ भी बोल न सका । वह थर-थर थर-थर काँपने लगा ।

सारे दरबारमें सम्राट छ्वा गया । सब आश्चर्य-चकित रह गए । किरणप्रभाका नाम सुनते ही सबकी दृष्टि उसकी सुन्दरता देखनेके लिए दौड़ पड़ी । आपसमें दरबारी एक दूसरेसे कहने लगे—‘सचमुच यह गजबकी औरत है; इतनी खूबसूरत, अक्लमन्द और बहादुर औरत कभी देखनेको कौन कहे सुना भी नहीं गया । यह सती ही नहीं महासती औरत है, इतनी पाक-साफ औरतको बेइज्जत करना चाहा ? वाकई शेरशाहने बहुत बड़ी गलती की है । हद कर दी । ऐसा तो इसे हरगिज नहीं करना चाहिए । बेचारीकी आबरू खराब करनेके लिए इस नालायकने कोई कोर-कसर नहीं रखी । जरूर इसको सजा मिलनी चाहिए ।’

किरणप्रभाने सम्राटको धर्म-पिता कहकर बहुत प्रभावित कर दिया था, किरणप्रभाकी सभी बातें शाहजहाँने ध्यान देकर सुनीं । सारा

रहस्य जान लेने पर उनकी उत्तेजना और क्रोधका ठिकाना न रहा । तीव्र स्वरमें उन्होंने शेरशाहसे पूछा—‘क्यों बत्तमीज, नापाक कुत्ते ! एक इज्जतदार पठान खानदानमें पैदा होकर तूने यह क्या हरकत की है ? कमीने कहींके ! या खुदा ! यह क्या सुन रहा हूँ; मैं तो दंग रह गया हूँ । खैर, जो तूने मेरे दोस्त और भले आदमी महाराजा छत्रसालकी आबरू बिगाड़नेकी कोशिश की है और उनको जाल-फरेबसे नेस्तनाबूद करना चाहा है; मेरी भी आँखोंमें धूल डालकर कामयाब होनेकी कोशिश की है; उसकी सजा तुम्हें जरूर दी जायगी । यह तो खुदा शुक्र है, अपने-आप दूधका दूध और पानीका पानी हो गया । तुम्हें सच्चाए मौत दी जा रही है । मगर मरनेके पेशतर वह सारा दास्तान बता—कैसे-कैसे फरेब करके इसमें तू कामयाब हुआ !’

शेरशाहने आदिसे अन्त तक अपने समग्र क्रिया-कलापों पर प्रकाश डाला ।

सम्राट बोले—‘तहव्वर खाँ !’

‘जो हुजूर !’

‘उस शैतानकी बच्ची कुटनीको गिरफ्तार कर जेलमें हमेशाके लिए बन्द कर दो ।’

‘जो हुक्म सरकार !’

‘और इस दगाबाज कमीने शेरशाहको ही महाराजा साहबकी जगह फाँसीके तख्ते पर लटकाया जायगा लिहाजा, इसे शाही कैदी बनाकर सारी रिआयाको आगाह किया जावे और फौरन छत्रसालको जेलसे रिहा किया जावे । इसमें देर करनेकी जरूरत नहीं । इससे (शेरशाहके) सारे कागजात मेरे नज़र किए जायें । अभी जल्द इन्तजाम करो । महाराजा साहबको फौरन इज्जतके साथ दरबारमें पेश करो ।’

‘जो हुक्म हुजूर !’

शेरशाह तत्काल बन्दी बना लिया गया । कुटनीकी गिरफ्तारीके

लिए कर्मचारी नियुक्त कर दिए गए। ससम्मान महाराज अन्नसाल दरबारमें उपस्थित किए गए। सभी जनताको शाही आदेशकी घोषणा सुना दी गयी।

महाराज छत्रसाल दरबारमें पहुँचे, वहाँ उन्होंने सम्राटको अभिवादन किया। सम्राटने खड़े होकर उन्हें हृदयसे लगा लिया। छत्रसालकी दृष्टि किरणप्रभापर पड़ी। वे आश्चर्य-चकित हो उठे। किरणप्रभाने आकर उनके चरणोंमें प्रणाम किया और उनके समक्ष वह अत्यन्त दीनतासे खड़ी हो गयी।

शेरशाहने मस्तक झुकाकर निवेदन किया—‘महाराजा साहब और महारानी साहिबा ! मुझे माफ करना। मैंने बहुत बड़ी गुस्ताखी की है। मुझे बेहद अफसोस है।’

‘बेवकूफोंको गलती कर लेने पर ही अक्ल होती है।’ सम्राटने कहा।

‘किन्तु सम्राट ! पश्चात्ताप करने पर अपराध हल्का हो जाता है। मेरी रायसे शेरशाहको क्षमा किया जाय।’ छत्रसाल बोले।

‘ऐसा हरगिज नहीं हो सकता महाराजा साहब !’

‘नहीं, नहीं धर्म-पिता ! आपका हृदय विशाल है। अवश्य ही शेरशाहको क्षमा कर दीजिए।’ किरणप्रभाने भी निवेदन किया।

‘सारी सजा तो हरगिज नहीं माफ की जा सकती। मगर यदि बेटी ! तुम माफ ही करना चाहती हो, तो शेरशाहको मौतकी सजासे बरी किया जाता है, लेकिन जुरमानेके रूपमें दो लाख रुपए तुम्हारी इज्जत बढ़ानेके लिए शेरशाहको देना पड़ेगा। क्यों शेरशाह मंजूर है ?’

‘मंजूर है जहाँपनाह ! आजसे महारानी साहिबा मेरी हमशिरा धर्म-बहन हैं; मुझे दो लाख रुपए उन्हें देनेमें कोई उज्र नहीं है, मैं इन्हें अपनी धर्म-बहन मानकर हमेशा कुछ-न-कुछ देता रहूँगा।’

‘और बेटी किरणप्रभा ! तुमको हमारे यहाँ आनेमें जो तकलीफ

हुई है; उसके लिए मैं खुद एक बड़ी जागीर देकर तुम्हारी इज्जत बढ़ाना चाहता हूँ ।'

‘सम्राटकी कृपाके लिए हम कृतज्ञ हैं ।’

सभी दरबारियों और जनतामें हर्ष छा गया । परन्तु जगतसिंहकी आशाओंपर पानी फिर गया ।



२५

‘दिन जाते देर नहीं लगती । काफी समय बीत जानेपर भी लगता है—यह तो कलकी बात है । यहीं महाराव छत्रसालको इन्साफके लिए शाही बन्दी बनाकर कैदखानेमें मेरे द्वारा डाला गया था, वही क्यों ! कितने ही लोग बन्दी बना-बनाकर यहाँ रखे गए, सजा भोगे और छोड़ दिए गए; किन्तु मैं बादशाहे हिन्दोस्तां ! मैं तो इन्साफ भी नहीं पा सकता । मैं तो ताजिन्दगी कैदमें पड़ा सड़ूँगा । वह भी अपने बेटेके जरिए । बेगम मुमताज ! अच्छा हुआ, तुम मेरे इन दिनोंको देखनेके लिए इस दुनियाँमें नहीं हो । तुमने इसकी कल्पना नहीं की होगी । तुमको मेरा शाही शान-शौकत ही हमेशा-हमेशाके लिए सच ज्ञान पड़ा होगा । तुम्हारी निगाह मेरी जिन्दगीके इस कैदी तस्वीरपर न पहुँच पायी होगी । तुम्हारी यादगारका और मेरी मुहब्बतका निशान ताज-महल है और मेरे लिए तेरे बेटेकी मुहब्बतका यह कैदखाना ही निशान बनेगा । मुहब्बतके ये दो पैगाम दुनियावी वसूलोंके बीच पलेंगे । पूरा हिन्दोस्तां मेरे इस जिन्दगीके जज़्बातका गवाह रहेगा ! लाहौर बिला-कूत ! खानेके लिए एक ही किस्मका अन्न—सिर्फ चना ! एक ही काम ! इसमें भी ‘मेरी बादशाहत नहीं छूटी ?’ पढ़ाना बादशाहत है ? ऐसा क्या कोई भी बेटा अपने वालिदके साथ बर्तावकर सकता है ?’

सोचते हुए उस शाही कारागारके एकान्तमें भारत सम्राट शाहजहाँके हृदयमें जिनके बन्दी जीवनका आज दूसरा दिन है, कठुणाकी धारा फूट पड़ी। आँखोंमें आँसू आ गए। गला भर आया। सम्राटने पुनः सोचा— 'औरंगजेब हमारे साथ हमदर्दी रखनेवालोंको कठोर सजा दे रहा है। भला कौन ऐसा आदमी है, जो हमारे लिए सिर पर बवाल लेगा ? इस तूफान और गर्दिशमें कोई साथी नहीं हो सकता, किसीकी जुर्रत नहीं, जो औरंगजेबके सामने मुँह खोल सके। आमेर-नरेश जगतसिंह और नवाब रहेला शेरशाह औरंगजेबके ही साथी हो गए। कल जब पहली दफा शाही कैदीके रूपमें वे नमकहराम मुझे देखे, तो कैसे खुश-हाल नज़र आ रहे थे ! मुगल-सल्तनतके 'कोनिश-अदायगी' का खान-दानी रिवाज़ भी भला एक ही रातमें वे भूल गए ! उलटे मेरी परवाह न कर बगलसे गुजर गए ? खिन्दगीकी हकीकत भी कितनी दर्दनाक होती है !!!' सोचते-सोचते सम्राटका हृदय व्यथित होता जा रहा था।

उधर सम्राट शाहजहाँका उत्तराधिकारी दाराशिकोह प्रयत्नवान् था—शासनसूत्र प्राप्त करनेमें। वह पूरे साम्राज्यमें अपने हिमायती राजाओं एवं सैनिकोंको अपने समर्थनमें प्रेरित कर रहा था। इसी उद्देश्यसे वह बूँदी भी पहुँचा। महाराज छत्रसालने जब सुना—दाराशिकोह मिलनेके लिए उपस्थित हुआ है, तब वे तत्काल राज-भवनसे बाहर आकर उसकी अगवाणीके लिए उपस्थित हो गए और युवराज दाराशिकोहको ससम्मान अतिथि-भवनमें लेकर चले गए।

दाराशिकोहको अकस्मात् बूँदीमें देखकर महाराज छत्रसाल चकित हो उठे थे। उन्होंने बड़े विनम्रभावसे पूछा—'शाहजादा साहब; बिना पूर्व सूचनाके आपका शुभागमन देखकर मेरे मनमें बड़ी घबराहट पैदा हो रही है; कुशल तो है ?'

'कुशल क्या है, रावसाहब ! खबर शायद आपको अभी नहीं मिल

सकी है। कल पौ फटते ही शाहंशाहको औरंगजेबने जेलखानेमें कैद करा लिया है और यदि वह मुझे पा जाए, तो तुरन्त कत्ल करा दे।

‘क्या कहा आपने ? शाहंशाहको कैद करा लिया है ?’ महान् आश्चर्य व्यक्त करते हुए महाराज छत्रसालने पूछा।

‘जी हाँ। हुक्मतकी बागडोर कल जुमाके दिनसे ही इस समय उसके हाथमें है।’ दाराशिकोहने उत्तर दिया।

महाराज छत्रसालकी दृष्टि नीचे हो गयी। दाराशिकोहकी ओर दृष्टि फेरते हुए गहरे निःश्वासके बीच उन्होंने कहा—‘इसका मुझे बिल्कुल पता नहीं।’

‘मैं मददके लिए आपकी खिदमतमें हाज़िर हूँ महाराज ! आपका इस बारेमें क्या विचार है ?’ दाराशिकोह बड़ी दीनतासे बोला।

‘मददके लिए ? मुझसे पूछते हैं ? मैं तभी जिन्दा रहूँगा, जब शाहंशाहको कैदसे मुक्त किया जाय और हुक्मत आपके हाथों सौंप दी जाय। यदि ऐसा नहीं होता, तो मैं बगावत करूँगा। युद्धमें या तो आपके शत्रुको मारूँगा या लड़ते-लड़ते खुद मरूँगा। बादशाह समामत की यह दशा ? यह मैं कदापि सहन नहीं कर सकता।’ कहते-कहते महाराज छत्रसालका मुखमण्डल तमतमा उठा। हाथकी शिराएँ खिंच उठीं; दृढ़ संकल्पकी रेखाएँ उभर आयीं।

‘यही तो हमें यकीन भी था।’ दाराने कहा।

‘आमेर-नरेश जगतसिंह और नवाब रुहेला शेरशाह किस ओर है ?’ महाराज छत्रसालने पूछा।

‘वे लोग तो औरंगजेबका साथ दे रहे हैं।’

‘उन लोगोंसे दूसरी आशा ही क्या की जा सकती है ? खैर, पहले आप आराम कर लें और कुछ खा-पीकर थकावट मिटा लें। हमारी बूँदी सेवाके लिए सदैव तत्पर रहेगी। मैं अपनी मन्त्रि-परिषद बुलाने का आदेश जारी करता हूँ। आप निश्चिन्त होकर आराम करें। आगे

क्या करना है ? इसपर विचार करना हम लोगोंका काम है ।'

बूँदी-मन्त्रि-परिषदने महाराज छत्रसालकी इच्छानुसार दारा-शिकोहकी ओरसे युद्ध करनेका निश्चय किया । युद्धकी तैयारी आरंभ हो गयी । युवराज दाराशिकोहको जीतकी आशा बँध गयी । बूँदीकी वीरतापर उसे पूर्ण विश्वास था ।

इधर औरंगजेबके गुप्तचरोंने दाराशिकोहका पीछा किया, जिससे दाराशिकोह तथा छत्रसाल दोनों ही अनभिज्ञ थे । गुप्तचर लौटकर दिल्ली पहुँचे और उन्होंने औरंगजेबसे दाराशिकोहकी गतिविधिका पूरा विवरण प्रस्तुत किया । औरंगजेब भी रातों-रात दस सहस्र मुगल सैनिकोंको, जो तोप एवं भयंकर अस्त्र-शस्त्रोंसे सुसज्जित थे, नवाब रहेला शेरशाहके नेतृत्वमें बूँदी भेजा । गुप्तचरोंसे जब छत्रसालको पता चला कि औरंगजेबके सैनिक दाराशिकोहको गिरफ्तार करने बूँदी आ रहे हैं, तो उन्होंने किलेका प्रमुख द्वार बन्द करा लिया । प्राचीरके अनेक स्थानोंपर तोपें ठीक करा दी । युवराज दाराशिकोहको भी सुरक्षित स्थानपर पहुँचा दिया, जिसकी रक्षाका भार विश्वासपात्र व्यक्ति की हैसियतसे किरणप्रभाने सँभाला । प्रबलवेगसे उमड़ती हुई औरंगजेब की सेनाने बूँदी घेरकर पड़ाव डाल दिया । एक सैनिक द्वारा औरंगजेब का आदेश-पत्र महाराज छत्रसालके पास भेजा गया, जिसमें दाराशिकोहको सलतनतके हवाले कर देनेकी हिदायत थी । छत्रसालने प्रस्ताव ठुकरा दिया । नवाब रहेलाने युद्धकी घोषणा की । प्रबल वेगसे औरंगजेबके सैनिक किलेपर दृढ़ पड़े । किन्तु किला बड़ा ही सुदृढ़ था ; फलतः तोपचियोंको आगे किया गया, किन्तु पलीतेमें वे बारूद भरें कि छत्रसालके युद्ध-कुशल तोपंदाजोंने तोप दागनेकी पहल की । कई तोपें इस प्रकार मुगलोंकी व्यर्थ हो गयीं । वे अभी दूसरा रास्ता सोच ही रहे थे कि बूँदीके रणोन्मत्त वीर भयंकर बाण-वर्षा करने लगे । दो-एक जहरीले गोले भी मुगलोंपर छोड़े गए, जिससे उनके पाँव डग-

मगा उठे। बादल धिरे थे, तबतक मूसलाधार वृष्टि भी संगोगवश प्रारम्भ हो गयी। पानी एवं आगके इस आकस्मिक प्रवाहने मुगल सैनिकोंकी रही-सही आशाको बहा दिया। नवाब रहेला बन्दी बना लिया गया।

अपनी इस हारका समाचार पाते ही औरंगजेब बोखला उठा। उसने पुनः एक लम्बी कुमुक बूँदीकी ओर भेजा। इधर महाराज छत्र-सालने युद्धकी व्यापक सिरेसे पुनः तैयारी की। इस बारकी व्यवस्थामें नवीनता यह थी कि युवराज दाराशिकोहको किरणप्रभाके संरक्षणसे हटाकर बूँदी न रख इन्द्रगढ़ (अपने भाई मौकमसिहके पास) आवश्यक निर्देशके साथ अपने भतीजेके नेतृत्वमें भेज दिया। मुगल वीर भी पुनः बूँदी विजित करनेके उद्देश्यसे आ पहुँचे। इस बार बड़ा ही भयंकर युद्ध हुआ। महाराज छत्रमालने छापामार मिश्रित नयी रण-नीतिसे काम लिया, जिसमें किलेकी रक्षाका दायित्व महारानी किरणप्रभापर छोड़, पाँच सहस्र सैनिकोंको लेकर, गुप्त द्वारेसे किलेके बाहर मुस्लिम वेशमें आ गए। मुगलोंके तत्कालीन शाही कुमुकके भेजे जानेके भ्रमने पासा पलट दिया। निकट आकर वे पाँच सहस्र मुस्लिमवेशी राजपूतोंने भयंकर रक्तपात मचाया। मुगल पीछे हटे कि महारानी किरणप्रभाके आदेशसे बूँदीके वीर गोलंदाजी करने लगे। अन्ततः अठारह घण्टेके घोर युद्धमें मुगल दुबारा बुरी तरह हारे।

इन दो हारोंने केन्द्रीय शक्तिको एक बहुत बड़ी चुनौती दी। अमेर-नरेश जगतसिंह ने औरंगजेबको सूचित किया कि विश्वस्त सूत्रों-से उसे पता चला है कि युवराज दाराशिकोह बूँदीसे हटाकर इन्द्रगढ़ भेजे जा चुके हैं। औरंगजेबने उत्तेजित होकर दस सहस्र सैनिक इन्द्रगढ़ और अठारह सहस्र सैनिक बूँदी साथ ही भेजा। एक ओर केन्द्रीय अथाह शक्ति और दूसरी ओर महाराजके रणोत्साहित प्रबल सैनिक ! एक ओर अत्याचार, देश-द्रोहियोंका संगठन और दूसरी ओर न्याय

चाहनेवाली राजपूती आन ! प्रबल युद्ध हुआ, दोनों ही जगह भीषण रक्तपात मचा; किन्तु मुगलोंको तीसरी बार भी हारना पड़ा। हाँ, बूँदीको इस बारके युद्ध जीतनेमें भारी संकटका सामना करना पड़ा। महारानी किरणप्रभा भी घायल हो गयी थी, जिनकी चिकित्सा उत्तम श्रोषधियोंसे होने लगी। महाराज छत्रसाल इस बार कुछ चिन्तितसे लग रहे थे। दो घण्टे तक किरणकी मूर्च्छानि उन्हें घबरा दिया था। राजवैद्यकी जागरूकनाने किरणप्रभाको कुछ ही घड़ियोंमें चैतन्यकर दिया। महाराज छत्रसालके पूछे जानेपर वैद्यने बताया—‘महारानीजी-के स्वस्थ होनेमें चार-पाँच दिनका आराम आवश्यक है। अभी महाराज छत्रसाल महारानी किरणप्रभाके विश्राम-कक्षसे स्वस्थचित्त हो बाहर निकले ही थे कि घबराए हुए दूतने आकर निवेदन किया—‘औरंगजेब-ने इन्द्रगढ़पर भी हमला कर दिया है। महाराज छत्रसाल गम्भीर हो गए, उन्होंने मन्त्रि-परिषद्की आपत्तिकालीन बैठक बुलायी, जिसमें निश्चय हुआ कि जब तक महारानी किरणप्रभा स्वस्थ न हो जायँ, तब तक हम लोगोंको, यदि पुनः कोई मुगल-कुमुक आती है, तो युद्धकी पहल नहीं करनी चाहिए। महाराज छत्रसालने एक प्रस्ताव रखा कि पन्द्रह सहस्र सैनिकोंको लेकर मैं मौकमसिंहसे मिलूँ। इधर सेनापति एवं महामन्त्रीके नेतृत्वमें मुगलोंका मुकाबला बूँदी-वीर मेरी अनुपस्थिति में करें। महारानीके स्वस्थ होनेपर सेनाके ये दोनों विश्वासपात्र नायक उनकी सलाहसे युद्ध जारी रखें; जो सर्वसम्मतिसे पास हो गया। यह गोष्ठी अभी समाप्त नहीं हो पायी थी कि इन्द्रगढ़से दूसरा दूत महाराज से विशेष भेंटके लिए उनकी कार्य-कारिणी परिषद्में उपस्थित हुआ। उसने निवेदन किया कि महाराज मौकमसिंहने मुगलोंको पराजित कर दिया है और वे युवराज समेत सकुशल हैं। इस सूचनासे सबके अंग फड़क उठे। ‘महाराज छत्रसालकी जय’ से पूरी परिषद निनादित हो उठी। महाराज छत्रसाल भी सन्तोष एवं गर्वकी अनुभूति करने लगे।

साम्राज्यवादी औरंगजेबकी तीनों बारकी गहरी पराभवकी सूचना विशिष्ट गुप्तचर द्वारा भारतके भूतपूर्व सम्राट शाहजहाँको कैदखानेमें ही मिली । वे अपने दुर्दिनमें महाराज छत्रसालकी सद्भावनाकी इन मार्मिक अभिव्यक्तियोंसे बड़े प्रभावित हुए । पूरा अतीत उनके सामने गतिशील हो उठा । महाराज छत्रसालके गंभीर व्यक्तित्वके संस्मरण एवं उन्हें फाँसी देनेकी घटनाएँ कल्पना-पटपर उभरने-मिटने लगीं । ईश्वरसे वे युवराजदारा और महाराज छत्रसालकी कुशलता मनाने लगे । रूँधे कण्ठसे वे अस्पष्ट आवाजमें ऊपर देखते हुए बोले—‘परवरदिगारे आलम ! भारत सम्राट शाहजहाँ नहीं, नहीं; शाही कैदी शाहजहाँ आपसे एक ही अर्ज करता है, चाहे तख्त दाराशिकोहको मिले या न मिले; मेरी आँखोंके सामने उसे बेमौत मारा न जाय । दर-दरकी ठोकरें न खानी पड़ें । महाराज छत्रसालजी ! वे दिन भी थे, जब कि आपको आपत्तिग्रस्त देखकर सैनिक सहायता एवं न्याय मैं खुद किया करता था, किन्तु आज मैं गदिशमें हूँ; कुछ भी कर सकनेमें मजबूर हूँ ।’ उनका चित्त व्यथासे आन्दोलित था । न जाने वे और क्या-क्या कहते रहे, जिसे मूक दीवारें भी नहीं सुन पा रही थीं ।

उधर महाराज छत्रसालभी इन्द्रगढ़की गतिविधियोंसे परिचित होनेपर औरंगजेबके गुप्तचरोंकी जागरूकतासे दंग रह गए थे । तुरन्त युवराजके संरक्षणकी पूर्ण व्यवस्था भंगकर इन्द्रगढ़से हटाकर उन्हें सामू-गढ़ भेजनेकी योजना बनाते हुए वे महारानी किरणप्रभाके सम्मुख उपस्थित हुए । किरणप्रभाको पता चला—महाराज आ रहे हैं, वह उठना चाहती थी, किन्तु घावकी पीड़ासे उठ न सकी । महाराजने उसे लेटै रहनेका ही संकेत किया और पूछा—‘तुम्हारा स्वास्थ्य अब कैसा है ? घावकी क्या स्थिति है ?’

किरणप्रभा ने मुस्कराकर निवेदन किया—‘मैं तो बिलकुल ठीक

हो गयी हैं। मेरी चिन्ताकी कोई बात नहीं, शत्रुओंकी चिन्ता करें। शत्रुओंकी गतिविधिका पता चला ?'

किरणप्रभाकी आकृति एवं उसकी स्वस्थ चेतना देखकर महाराज संतुष्ट हुए तथा एक बल प्राप्त करते हुए बोले—'इन्द्रगढ़पर भी मुगलोंका आक्रमण हुआ था, जो मौकमसिंहने व्यर्थकर दिया। किरणप्रभाके प्रसन्नताकी सीमा न रही। उसने पूछा—'युवराजके संबंधमें अब क्या सोच रहे हैं, क्योंकि अब इन्द्रगढ़ उनके लिए निरापद नहीं है।'—

महाराज छत्रसालने कुछ देर सोचकर कहा—'यदि दाराको सामू-गढ़ भेज दिया जाय, तो कैसा होगा ?'

किरणप्रभाने सहमति प्रकट करते हुए निवेदन किया—'विचार तो ठीक है, किन्तु सावधानीकी विशेष अपेक्षा है। आश्चर्य है कि हमारी गुप्तसे गुप्त युवराजकी सुरक्षा-व्यवस्थासे औरंगजेब अवगत हो जाता है, जब कि यही नहीं होना चाहिए। हाँ, देवरजी मौकमसिंहके पास भी पर्याप्त सैनिक हैं, या नहीं। इसपर भी गम्भीरतापूर्वक विचार होना चाहिए।'

महाराज बोले—'उसके लिए तो कार्य-कारिणी परिषदने निश्चय किया है कि मैं १५ सहस्र सैनिकोंसे इन्द्रगढ़ जाऊँ और मेरी अनुपस्थितिमें यहाँ की सुरक्षा-व्यवस्था सेनापति एवं आम्रात्य महोदय देखेंगे। तुम्हारे स्वस्थ हो जानेपर ये तुम्हारे आधीन हो जायेंगे।'

'कार्य-कारिणी परिषदने तो निश्चय ठीक ही किया है, किन्तु मेरा अनुमान है, अपने यहाँ की भी सैनिक व्यवस्था कुछ कमजोर हो गयी है, जिसकी आपूर्तिके लिए मेरे पिताजीको पत्र रूपनगर देना चाहिए।'—

'किन्तु ज्योतिप्रभाके कारण सम्भव है, तुम्हारे पिता जब कि जगतसिंह औरंगजेबके साथ है, ऐसी दशामें वे न तो मेरा साथ देंगे और न औरंगजेबका ही। वे तटस्थ रहना अधिक पसन्द करेंगे।'

'किरणप्रभा गम्भीर हो उठी, उसने जीवनमें पहली बार अपनेको पितासे परायेपनका अनुभव किया। आसूके बीच उसने पुनः निवेदन

किया—‘जगतसिंहपर कोई आपत्ति नहीं है। हमारा युद्ध उनसे न होकर मुगलोंसे है। क्या एक पिताका रक्त बेटीको आपत्तिमें देखकर खोल नहीं उठेगा।’

‘यदि तुम्हारी इच्छा हो, तो पत्र देकर देख लो ! मैं आज ही इन्द्रगढ़ जाना चाहता हूँ। मेरी शुभकामनाएँ तुम्हारे एवं पूरी बूँदीकी जनताके साथ हैं।’

‘यहाँकी चिन्ता छोड़कर आप जा सकते हैं। ईश्वरसे मेरी यही विनती है कि आप सकुशल रहते हुए अपने पवित्र लक्ष्यमें सफल हों। अगर यहाँ हम और आप जीवनके इस विलक्षण संघर्षमें सकुशल रहे, तो एक-दूसरेका अभिनन्दन करेंगे।’ कहते-कहते देवि किरणप्रभाके नेत्र सजल हो उठे।

महाराज छत्रसाल भी करुणासे प्रभावित हो उठे, किन्तु उन्होंने अपनी कातरता छिपानेका प्रयास किया, जो किरणप्रभाकी भावुकतासे सफल न हो सका। बड़े ही धैर्यसे महाराजने कहा—‘प्रिये ! ‘वीर-भोग्या वसुन्धरा’ न चाहते हुए वीरोंको समय-समयपर अपनी वीरता एवं पराक्रम प्रदर्शित करनेके लिए बाध्य होना पड़ता है। इस कार्यमें तुम्हारा रणोत्साह देखकर मैं गद्गद हो उठता हूँ। जीवनमें कर्त्तव्य एवं कलाके मिलन-बिन्दुमें सजे तुम्हारे विराट व्यक्तित्वकी मैं अभ्यर्थना करता हूँ, किन्तु असफल हूँ। तुम्हारे सक्रिय योगदानसे मुझे वह शक्ति-पुञ्ज प्राप्त हुई, जो सर्वथा अजेय है, दूराधर्ष है। श्रीरंगजेबके पास वह शस्त्र नहीं है, जो मेरे इस लक्ष्यको बुझा सके।’ किरणप्रभा अपनी प्रशंसा सुनकर पहले तो लज्जित हो गयी, किन्तु दूसरे ही क्षण वह गम्भीर हो गयी। उसने पुनः सींचते हुए निवेदन किया—‘श्रीर भारत सम्राट शाहजहाँके प्रति हम लोगोंकी यही सच्ची श्रद्धांजलि भी होगी।’

प्रतिहारिणी द्वारा तिलक सामग्री स्वर्णपात्रमें मँगाकर लेते ही लेते किरणप्रभाने महाराज छत्रसालको मस्तकपर मन्त्रोच्चारण करते

हुए तिलक लगाकर, दोनों हाथोंसे चरण छूकर, प्रणाम करते हुए भाव-भीनी विदा दी। उसका हृदय आज स्थिर नहीं था।



२६

मनुष्य सोचता कुछ है, किन्तु हो जाता कुछ है। महाराज छत्र-सालने जिस सामुगढ़को निरापद समझ रखा था, औरंगजेबकी क्रूर एवं तीक्ष्ण दृष्टिसे वह बच न सका। उसने महाराज छत्रसालसे भी पहले गुप्तचरोंका पूरा जाल उनसे संबंध रखनेवाले समस्त स्थानोंपर बिछा दिया था। इस योजनामें बूँदी इन्द्रगढ़ एवं रूपनगर तीनों जगहकी प्रत्येक गतिविधि जाननेकी पूरी व्यवस्था उसने कर दिया था। यद्यपि मौकमसिंहने बड़ी ही सावधानीपूर्वक युवराज दाराको सामुगढ़ पहुँचा दिया था और वहाँकी सुरक्षाका भार स्वयं ले लिया था, किन्तु इन समस्त योजनाओंका पता औरंगजेबको चल चुका था। महाराज छत्रसाल मौकमसिंहकी अनुपस्थितिमें इन्द्रगढ़की रक्षाका धार संभालते हुए भी सामुगढ़की सहायताके लिए हर क्षण तैयार थे। औरंगजेबने इस बार त्रिकीणात्मक संघर्ष चालू किया था, जिसमें बूँदी, इन्द्रगढ़ एवं सामुगढ़ तीनों स्थानोंमें एक साथ ही अपने सैनिकोंको उतारकर उसने युद्ध छेड़ दिया।

सामुगढ़में सेनाका संचालन औरंगजेबके छोटे भाई मुरादने संभाला।

महाराज छत्रसालके गुप्तचर समूचे भारतके इस निर्यायिक संघर्षमें लोगोंकी आँखें गड़ी थीं। कुछ लोग, जो शाहजहाँके प्रति सम्बेदना रखते थे, अफवाहें फैला देते थे—‘महाराज छत्रसालकी सेना विजय

प्राप्त करते हुए दिल्ली तक पहुँच रही है।' जानकार सूत्र सही सूचना प्राप्तकर भावी मानचित्रकी पूरी उत्सुकतासे प्रतीक्षा कर रहे थे। उधर बूँदीके संघर्षमें योजनानुसार महामन्त्री एवं सेनापतिके नेतृत्वमें मुगलीं-का सामना राजपूत वीर कर रहे थे। महारानी किरणप्रभा रोग-शैया-पर पड़ी हुई भी व्यस्त थीं। उनका ध्यान कभी छत्रसालपर, कभी मौकमसिंहपर, कभी सामूगढ़में स्थित युवराज दाराशिकोहपर, तो कभी पिताजीके ऊपर दौड़ रहा था। राज्यवैद्यके अनुसार उन्हें अभी दो दिन और पूर्ण विश्राम करना चाहिए। घाव प्रायः ठीक हो चुका था, परन्तु औषधिका क्रम अभी बन्द नहीं किया जा सकता था।

महाराज छत्रसालको, जो इन्द्रगढ़में युद्ध-रत थे। २७ मई १६५८ को सायंकाल गुप्त सूचना मिली कि मौकम सिंहने सैनिक टुकड़ी मँगाया है। सामूगढ़में शत्रु प्रवल पड़ रहा है। छत्रमालजी दुर्गकी सुरक्षाका भार अपने भतीजोंपर पाँच सहस्र अतिरिक्त सैन्य-व्यवस्थाके साथ छोड़कर, दश सहस्र सैनिक स्वयं लेकर, सामूगढ़की ओर चल पड़े।

युद्धका यह दूसरा दिन था। पहले दिन दोनों पक्षोंकी बराबर हानि हुई। मौकमसिंह आज स्वयं युद्धमें उतर पड़े थे। महाराज छत्रसाल युद्धभूमिमें थे ही। किलेकी ओरसे मौकमसिंह, बीचमें मुगल सैनिक एवं किलेसे सटी दक्षिण घाटीमें महाराज छत्रसाल युद्धका संचालन कर रहे थे। मुगल सेना चौथी बार पुनः प्राण-संकटमें पड़ चुकी थी। दुहरी मारका सामना उसे करना पड़ रहा था; तभी एक मुगल तोपचीके गोलेसे किलेकी एक दीवार उड़ गयी। पूरे राजपूतोंमें हाहाकार मच गया। युवराज दाराकी सुरक्षा-व्यवस्था छिन्न-भिन्न हो गयी। मौकमसिंहने बुद्धिमानीसे काम लिया। सर्वप्रथम युवराज दाराशिकोहको किलेके गुप्त द्वारसे कुछ सैनिकोंकी देख-रेखमें बूँदी भेज दिया और तब निश्चिन्त होकर युद्धमें सक्रिय हुए।

युद्धका रूप अब बदल चुका था। औरंगजेबके सैनिक किलेमें घुसने

को प्रयत्नशील थे। महाराज छत्रसाल पीछेसे उनके इस प्रयत्नको विफल कर रहे थे, किन्तु दीवाल टूट जानेसे उनकी भी स्थिति सुदृढ़ नहीं रह गयी थी। मौकमसिंहका प्रयास भी सराहनीय होते हुए भी मुगलोंके सामने उखड़ रहा था, तभी एक निर्णायक गोली चली जो मौकमसिंहके सीनेको छेदती हुई पार हो गयी। मौकमसिंह धराशायी हो गए। कुछ ही क्षणोंमें उनका पार्थिव शरीर जटपटाकर सदाके लिए शान्त हो गया। थोड़े परिश्रमके बाद मुगल किलेमें प्रविष्ट ही गए। महाराज छत्रसाल भी विजय एवं जीवनसे निराश हो चुके थे। अब मौकमसिंहकी जगह मुगल किलेका लाभ उठाते हुए महाराज छत्रसालका सामना करने लगे। उनकी एक सैनिक टुकड़ीने किलेके समस्त गुप्त-स्थानोंको छान डाला, परन्तु युवराज दाराका पता नहीं लगा।

महाराज छत्रसाल रणोन्मत्त होते जा रहे थे, अब तोपों एवं बाणोंकी सीधी मार हो रही थी। महाराज हाथीपर सवार थे, किलेसे एक दूसरी गोली धड़ाकेसे ध्वनि करती हुई आयी, जो महाराजको लक्ष्यकर छोड़ी गयी थी, किन्तु वह उन्हें न लगकर हाथीके मस्तकमें आकर लगी। चिंघाड़ मारते हुए हाथी भगा। महाराज उसमे कूदकर नीचे आ गए। ललकारते हुए उन्होंने कहा—‘मेरा हाथी युद्ध-भूमि छोड़कर भाग सकता है, किन्तु मैं युद्ध-भूमि नहीं छोड़ सकता।’ वगलके एक सैनिकके घोड़ेपर चढ़कर वे आगे बढ़े। इस आपत्तिकालमें भी पूरे राजपूत महाराजके इस कार्यसे प्रेरणा लेते हुए महाकालकी तरह हंकारकर किलेमें घुसनेका प्रयास करने लगे। तीन तोपें साथ दगी, जिससे एक लश्बी-दीवाल उड़ गयी। ये रणबाँकुरे रक्तरंजित किलेमें दौड़ पड़े। उनके इस उत्साहसे मुगलसेना चकित हो गयी। दो घड़ी में ही युद्धका रूप पुनः बदल गया। मुगलसेना मोर्चा सँघालनेके लिये किला छोड़नेको विवश हो गयी। किलेपर पुनः महाराज छत्रसालका अधिकार हो गया। युद्ध जारी रहा।

तभी एक गुप्तचरने आकर सूचना दी कि इन्द्रगढ़में शत्रु परास्त हो गया है, किन्तु दोनों भतीजे शहीद हो गए हैं। महाराजके नेत्र अश्रु-पूरित हो गए। उस भीषणतामें भी महाराज मौकमसिंह एवं उनके दो पुत्रोंके बलिदानने उन्हें विचलित कर दिया। 'मैं युवराजको बचाने-में इन तीनोंकी रक्षा न कर सका। राजबालाके समक्ष मुँह कैसे दिख-लाऊँगा।' महाराजने सोचा। युद्ध चल रहा था, महाराजके हृदयमें भी भीषण युद्ध छिड़ा था। आजके युद्धमें मुगल हारे, जीत महाराज छत्रसालकी रही। दूटी दीवालके समानान्तर तीन तोपोंकी व्यवस्थाकर वे पूरे किलेका निरीक्षण कर रहे थे कि एक गुप्त स्थानसे किसीने छिपकर एक बरछा फेंका—महाराजके शरीरको लक्ष्य बनाकर। शिर-स्त्राणसे टकराकर वह विफल हो गया; वे सम्हलें कि इसके पूर्व ही कई सैनिक उनपर दूट पड़े। इनके अंगरक्षक भी सन्नद्ध हो चुके थे। थोड़ेसे युद्धके पश्चात् महाराज बचा तो लिए गए, किन्तु वे घायल हो चुके थे। वे विश्रामके लिए युद्ध-भूमिसे शिविरमें ले जाए गए जहाँ उनकी चिकित्सा होने लगी। गुप्तचरोंसे बूंदीकी विजय एवं महारानी किरणप्रभाके स्वास्थ्यका समाचार भी इसी समय उन्हें प्राप्त हुआ। पहरा कड़ा था, एक यजनवी दूत शिविरके द्वारपर उपस्थित हुआ, उसने कहा—'महाराजीजीने एक गुप्त सूचना महाराजके लिए भेजी है, जिसे एकान्तमें निवेदन करना चाहता हूँ।'

'महाराजने उसे बुलाया। शिविर खाली कर दिया गया। वे लेटे थे, वह पहुँचा। रात्रिके अन्धकारमें उसके हाथमें एक धड़ाकेकी आवाज हुई, जो विद्युत्गतिसे महाराजके मस्तकमें घुस गयी। महाराज चीख उठे, किन्तु सब व्यर्थ था। सैनिक दौड़े, आगन्तुक बन्दी बना लिया गया। वैद्यने परीक्षण किया और गम्भीर स्वरमें कहा—'महाराज अब नहीं रहे।' * किलेका ध्वज शोकमें झुका दिया गया। सैनिकोंने

* यह युद्ध २८ मई सन् १६५८ में हुआ था।

अन्तिम बार तोपें दागकर महाराजका सम्मान किया ।

किरणप्रभाकी चचेरी बहन राजबालाको सूचना मिली—महाराज एवं उसके पति मौकमसिंह सहित दोनों बच्चोंके मृत्युकी । पहले तो वह मूर्छित हो उठी । चैतन्य होनेपर उसने अपना कर्त्तव्य सँभाला और जीवित ही सती हो गयी ।

औरंजेबको तीनों जगहोंकी हार एवं महाराज छत्रसाल, मौकमसिंह और उनके दोनों भतीजोंकी मौतका समाचार मिला । दारा अब भी हाथ नहीं आ पाया था । बूँदीने उसे बहुत परेशान कर रखा था, किन्तु था वह बहुत ही जिद्दी स्वभावका मनुष्य । एक बार उसने विचार किया कि दाराको छोड़ ही क्यों न दिया जाय, किन्तु उसका हृदय बदल गया । दाराको अभी प्रारम्भमें ही वह कैदी नहीं कर पा रहा है, तो जब उसके पैर मजबूत हो जायँगे तब क्या दशा होगी ? इसका कोई विकल्प नहीं था ।

सामुगढ़, इन्द्रगढ़ और बूँदी—तीनों स्थानोंपर उसने नयी सेना भेजी । इधर महारानी किरणप्रभाको भी महाराज छत्रसाल, मौकमसिंह एवं भतीजोंके बलिदानका हृदय-विदारक समाचार प्राप्त हो चुका था । पूरी बूँदी शोक-मग्न थी । महारानी किरणप्रभाकी दशा बड़ी ही कारुणिक हो गयी थी । वह मौन थी । कुछ समय तक वह कुछ भी नहीं सोच पा रही थी कि क्या किया जाय । उसका चित्त अस्थिर हो उठा । उसने सोचा—‘महाराजसे मुझसे कभी फिर भेंट न होगी । न मैं कभी उनकी प्रिय बातें हो सुन पाऊँगी । हमेशा-हमेशाके लिए सारी बातें स्वप्न हो गयीं !’ उसका हृदय धड़कने लगा । थोड़ी देरमें उसने पुनः सोचा—‘अब मैं किसे युद्धमें भेजने के लिए उत्साहित करूँगी ।’ भावुकतामें वह पागल हो उठी । होती भी क्यों न, वह बेचारी ? आज उसके हृदय-दीपकी जीवन-वर्तिका निर्वाणके कगारपर पहुँच भी तो चुकी थी । किसीका स्नेहभी सूख ही चुका था । आज उसकी अश्रुकणि-

काएँ महाराज छत्रसालके कर-कोरकोंसे ही पुँछना चाह रही थीं। भवनके एक-एक स्थल, जहाँ महाराज छत्रसाल एवं उसके कलहास गूँजे थे, मिलनके संगीत फूटे थे, जहाँ जीवनके अनेक मार्मिक प्रसंगोंकी उद्भावनाएँ हुई थीं, वहाँ पहुँच-पहुँचकर स्मृतियाँ सिसक रही थीं। अब वेदना ही उसकी संगिनि थी। अभावोंकी अवली ही उसका स्वागत कर रही थी। उसके हृदय-स्थलपर धू-धू धधकती नियतिकी चितापर उसके जीवनके सुखोंकी अर्थी चढ़ा दी गयी थी। उसको आज सूने क्षितिजपर दर्शनके सारे सिद्धान्त सूनेसे दीख रहे थे। गगन-शून्यताकी तहें खोल रहा था। न जाने कब उसका क्रन्दन बन्द हो गया। अब वह गम्भीर हो उठी। धीरे-धीरे उसकी गम्भीरता बदलने लगी, वह प्रचण्ड हो उठी। क्षत्राणी जो थी ! तलवार एवं चूड़ियों—दोनोंकी खनक उसके हाथोंमें अब भी थी। प्रतिशोधकी ज्वाला भड़क उठी। स्वाभिमानका रक्त उस सिहिनीके रंग-रंगमें दौड़ गया। महाराजको जाते समय दिया गया आश्वासन उसे स्मरण हो आया। 'आप जायें, यहाँमे निश्चिन्त रहें।' उसने अपने उत्तरदायित्वकी गुरुताकी अनुभूति की। महाराजके स्वप्नको जीवित रहते वह पूरा करनेमें कुछ न उठा रखेगी; कार्य-कारिणीकी बैठक उसने आमंत्रित की। सर्व सम्मतिसे निश्चित हुआ—'युद्ध बन्द न होगा। संचालन-सूत्र स्वयं किरणके हाथोंमें होगा।' पिताके यहाँसे सहायता मिलनेकी कोई आशा नहीं रह गयी थी।

औरंगजेबके सैनिक पाँचवीं बार बूँदी पहुँचे। सामूगढ़का सैन्य-संचालन महाराज छत्रसालके एक मात्र पुत्र कुमार भरतसिंहने अपने हाथोंले लिया था। महारानी किरणप्रभा ने महामात्यको इन्द्रगढ़ सँभालने भेज दिया था। दाराकी रक्षाका भार सेनापतिको सौंप दिया गया था। तभी रूपनगरसे दूत आया। महारानीने उसे तुरन्त बुलवाया। उसने सूचना दी—'आठ सहस्र सैनिकोंको महाराज रूपनगरने बूँदीकी

सहायतार्थ भेज दिया है, जो कुछ ही घण्टेमें यहाँ पहुँच रहे हैं ।’

किरणप्रभाको उससे बड़ा बल प्राप्त हुआ । वह अपनी रणवाहिनी लिए किलेके बाहर निकलकर तत्काल मुगल सैनिकोंपर दूट पड़ी । उसे महान आश्चर्य हुआ । यह जानकर कि शत्रु-सेनाका संचालन जगतसिंह कर रहा है । क्रोधमें वह उग्र हो उठी । दोनों ही पक्षके सैनिक प्राणों-का मोह त्यागकर प्राणोंके भूखे थे ।

किरणप्रभा और जगतसिंह—दोनों ही एक दूसरेपर प्राण-घातक संहार कर रहे थे । किरणप्रभाका पुराना घाव हरा हो गया था, उसमें रक्तके कई स्रोत फूट चले थे; किन्तु शत्रु उससे अनभिज्ञ था ।

महारानीपर जगतसिंहने पूरे वेगसे तलवार चलायी, किन्तु ढालपर उसने वह वार सह लिया, तलवार दूट गयी । अब क्या था, अपना ही ऋटका सहनेमें असमर्थ जगतसिंह हड़बड़ाकर घोड़ेसे नीचे आ गिरा; किरण भी अपने घोड़ेसे कूद पड़ी और जगतसिंहके सीनेपर तलवारकी नोक बड़ी फुर्तीसे गड़ा दी । वह तलवार घुसना ही चाहती थी कि तब तक वहन ज्योतिप्रभाके सिन्दूरका स्मरण हो आया । वह काँप उठी । तलवार उसने हटा ली और बोली—‘नीच ! विश्वासघातक ! जा आँखोंसे दूर हो जा । आज ज्योतिप्रभाके कारण तू बच रहा है ।’ वह विद्युत्गतिसे घोड़ेपर जा बैठी और सैनिकोंके व्यूहमें अदृश्य हो गयी । मुगल सैनिकोंके हृदय दहल उठे, हाड़ा सरदारोंके युद्ध-पद्धतिकी विलक्षणता देखकर । महारानी किरणप्रभा भी अब शिथिल पड़ती जा रही थी । घाव अब बढ़ गया था । घायल शरीरसे ही द्वन्द्व युद्धकर महाराज छत्रसालने एक वार कुमारी किरणका वरण किया था । वैसे ही घायल दशामें आजकी किरणप्रभाके पूरे मुगलोंको चुनौती दे दी थी; किन्तु अब वह पस्त हो चुकी थी । घावमें पीड़ा बढ़ने लगी थी । शिथिल होकर वह घोड़ेपरसे नीचे आ गयी और युद्ध-भूमिमें ही मूर्च्छित हो गयी । सैनिकोंने बन्दी बना लिया । युद्ध चलता रहा । पाठक युद्ध-

भूमिका विवरण सुननेकी अपेक्षा महारानीके विवरणको जाननेके विशेष उत्सुक होंगे । अतः पाठकोंका ध्यान दिल्लीकी ओर आकृष्ट किया जाता है ।

+

+

+

दिल्लीका किला । महारानी किरणप्रभा राजबन्दिनी होकर यहाँ लायी गयी है । उसके मानस-पटलपर रूपनगरके स्वयंवरसे लेकर आज तककी घटनाएँ—एकके पश्चात् दूसरी अंकित होती गयीं । जीवनकी निस्सारता, क्षणभंगुरता, जय-पराजय, आसक्ति, उदासीनता, सुख-दुःख, हानि-लाभ तथ्य रूपमें उसे आज दिखायी पड़ने लगे । किसीके भी प्रति अब उसके अन्तःकरणमें राग-द्वेष न था । किसीके भी प्रति कोई आकर्षण नहीं था । वह शुद्ध-बुद्ध मौन हो उठी थी, गम्भीर थी । उसकी दृष्टि जहाँ पड़ती, वहीं स्थिर हो जाती और वह सोचने लगती । उसे घावकी पीड़ा कभी-कभी विचलित कर देती; किन्तु वह भी वह सहन करती जा रही थी । इसी समय ज्योतिप्रभाका आगमन हुआ, वह किरणप्रभाको प्रणाम करते हुए आँखोंमें आँसू भरे कुछ बोल नहीं पायी । ज्योतिप्रभाने स्वतः अपनेको एक अपराधिनीकी भाँति उसके समक्ष उपस्थित किया ।

‘कहो ज्योति ! मेरी प्यारी बहन ! तुम्हारा शुभागमन ?’ कहते हुए किरणप्रभाका मन आन्दोलित हो उठा ।

ज्योतिप्रभाने मौन होकर दृष्टि नीचे कर लिया ।

किरणप्रभाके हृदयमें ज्योतिके लिए स्नेह जागा । उसने पूछा—
‘आखिर तू आकर यहाँ उपस्थित हो ही गयी ? मेरे अन्तिम क्षणोंमें तुम्हारा उपस्थित होना ठीक ही है । मेरे पार्थिव शरीरका उत्तराधिकारी कोई तो हो ?’

ज्योतिप्रभा मौन ही रह गयी ।

‘जगतसिंह स्वस्थ तो हैं ? उन्होंने तुम्हें कैसे आने दिया ?’
किरणप्रभाने पूछा ।

‘आपसे युद्ध कर वे कुशल ही हैं । न जाने क्या सोचकर उन्होंने मुझे आनेकी अनुमति दी ।’ सिसकते हुए ज्योतिप्रभाने उत्तर दिया ।

कुछ देर तक दोनों मौन थीं । सन्तरीने समय-समाप्तिकी सूचना दी । ज्योतिप्रभाने चरणोंपर गिरकर प्रणाम किया । किरणप्रभाने उसे आशीर्वाद देकर कहा—‘मेरा प्रणाम पिताजीसे कहना और बूँदी-की जनतासे मेरी शुभकामनाएँ ।’

सन्तरीके साथ धीरे-धीरे ज्योतिप्रभा दो-एक बार पीछे मुड़-मुड़कर देखते हुए कारागारके बाहर चली गयी ।

बन्दिनी किरणप्रभाका न्याय होगा । न्याय तत्कालीन भारत-सम्राट औरंगजेब स्वयं अपने प्रमुख व्यक्तियोंके समक्ष करेगा ।

दरबारेखासमें आयोजन था । सभी आमंत्रित प्रमुख व्यक्ति धीरे-धीरे उपस्थित होने लगे थे । अब सम्राटके आगमनकी प्रतीक्षाकी जाने लगी । प्रहरी सतर्क थे, कुछ ही क्षणोंमें सम्राट दरबारमें पहुँचना चाहते हैं । प्रतिहारी एवं सभासद् सावधान हो गए ।

लम्बी काया, गम्भीर व्यक्तित्व, सहज ही क्रूर स्वभावका प्रतीक, उन्नत ललाट, संयम-नियम एवं स्फूर्तिकी प्रत्यक्ष मूर्ति भारत-सम्राट औरंगजेब आमेर-नरेश जगतसिंहके साथ इधर-उधर दृष्टि फेंकते हुए सामने चला आ रहा था । दरबारमें उसके पहुँचनेके प्रथम ही आतंक छा गया था । वह निकट आया । प्रतिहारियोंने अत्यधिक विनीत होकर अभिवादन किया । सम्राटने बिना रुके, बिना कुछ बोले, दरबार में प्रवेश किया । सभी सभासद् उठकर खड़े हो गए और सबोंने मस्तक झुकाकर अभिवादन किया । सभामें सम्राट छुटा गया । सम्राट सिंहासनपर विराजमान हुआ । उससे थोड़ी दूर हटकर कुछ नीचे दूसरे आसनपर जगतसिंह जा बैठा ।

सम्राटने सबका ध्यान आकृष्ट करते हुए कहा —‘सन्तरी ?’

‘जी हुजूर !’ दौड़कर निवेदन करते हुए प्रतिहारी मस्तक झुकाकर आज्ञाकी प्रतीक्षा करने लगा ।

‘कैदी महारानी किरणप्रभाको दरबारमें हाज़िर किया जाय ।’

‘जो हुक्म जहाँपनाह !’ कहते हुए प्रतिहारी आगे बढ़ा ही था कि पुनः आज्ञा हुई—‘सन्तरी, मुनो !’

‘जी हुजूर !’ कहते हुए वह दूसरे आदेशकी प्रतीक्षा करने लगा ।

‘मेरे वालिद शाहंशाहको भी दरबारमें पेश किया जाय ।’

‘जो हुक्म हुजूर !’ कहते हुए प्रतिहारी बाहर चला गया ।

वन्दिनी किरणप्रभा एवं भूतपूर्व सम्राट शाहजहाँ दरबारमें तत्काल उपस्थित किए गए । भूतपूर्व सम्राट शाहजहाँको सबसे अलग बैठनेका आसन दिया गया । सभासदोंने मौन रहकर और सभी लोगोंने खड़े होकर सम्मान प्रदर्शित किया । किरणप्रभा कैदियोंकी भाँति सम्राट औरंगजेब के समक्ष उपस्थित की गयी । सबकी दृष्टि उसकी ओर पहुँच गयी । वह घावोंकी पीड़ासे व्यथित थी । एक बार उसकी दृष्टि सभासदोंकी ओर गयी और दूसरी बार औरंगजेब तथा जगतसिंहको देखते हुए भूतपूर्व सम्राट शाहजहाँपर उसने दृष्टि डाली । जो उसकी ओर अश्रु-पूरित नेत्रोंसे देख रहे थे ! उसकी दृष्टि वहाँ कुछ काल तक रुकी रह गयी, किरणप्रभाने दूरसे ही उन्हें हाथ जोड़कर प्रणाम किया । सम्राट ने मौन होकर ही उसे आशीर्वाद दिया ।

किरणप्रभाके साथ ही ज्योतिप्रभा भी दरबारमें पहुँच गयी थी । सामान्य कैदियोंकी भाँति महारानी किरणप्रभाको न्यायके लिए सम्राटके समक्ष खड़े होनेमें ज्योतिप्रभाने असमर्थ समझा । अतः उसने सबका ध्यान अपनी ओर आकृष्ट करते हुए सम्राट औरंगजेबसे निवेदन किया—‘हुजूर शाह ! न्याय करनेके पहले मैं कुछ प्रार्थना करना चाहती हूँ ।’

‘यह औरत कौन है ?’ पूछा औरङ्गजेबने ।

‘हुजूर; यह मेरी पत्नी है ।’ किसीके बोलनेके प्रथम ही जगतसिंह बोल उठा ।

‘यह आपकी औरत है ? यहाँ ये किस गरजसे आ गयीं हैं ? सन्तरी !’ दौड़कर प्रतिहारीने निवेदन किया—‘जी हुजूर !’

‘पहले महारानी साहिबा जगतसिंहको बैठनेका इन्तजाम करो ।’

‘जो हुक्म सरकार !’ कहते हुए सन्तरीने दौड़कर कुर्सी उपस्थित कर दी ।

‘मुझे ताज्जुब है जगतसिंह ! आपकी महारानी साहिबा यहाँ कैसे आ गयीं ?’

‘बन्दिनी किरणप्रभाकी वह सगी छोटी बहन है हुजूर !’

सम्राट औरङ्गजेबकी भावनाएँ बदलीं, उसने नम्र होकर ज्योति-प्रभासे कहा—‘महारानीसाहिबा ! आप क्या हुक्म फरमाना चाहती हैं ?’

‘मैं हुजूरसे प्रार्थना करना चाहती हूँ कि महारानी किरणप्रभाजी शरीरमें लगे घावोंसे अत्यन्त पीड़ित हैं, जो अभी यहाँ खड़े रहकर अपना न्याय करानेमें असमर्थ हैं; अतः जब तक वे स्वस्थ न हो लें, कुछ दिनोंकी मुहलत दे दी जाय तथा उनकी चिकित्साकी पूरी व्यवस्था की जाय ।’

‘न्याय आज ही होगा । विलम्ब नहीं किया जा सकता । रह गयी घावकी पीड़ाके कारण उपस्थित रहनेमें असमर्थताकी बात ! उसकी व्यवस्था हो सकती है ।’ जगतसिंहने कहा ।

औरङ्गजेबने कहा—‘आपका कहना बिलकुल दुरुस्त हैं राव साहब !’

‘सन्तरी !’ औरङ्गजेब पुनः बोला ।

‘जी सरकार !’

‘एक और कुर्सीका इन्तजाम करो ।’

सन्तरी सम्राटको सम्मान प्रदर्शित करते हुए एक और कुर्सी उठा ले आया । किरणप्रभा उसपर विराजमान हो गयी ।

‘महारानी साहिबा किरणप्रभा !’ कहा औरङ्गजेबने ।

महारानी किरणप्रभाने औरङ्गजेबकी ओर दृष्टिपात् किया । सभी सभासदोंकी दृष्टि किरणप्रभा एवं औरङ्गजेबपर जा पड़ी । सम्राट शाहजहाँकी दृष्टि नीचेकी ओर ही रही, वे गम्भीर हो गए ।

‘मैं आपका आदर करता हूँ । मुगल सलतनतकी बूँदीसे बड़ी कूबत मिली है, मगर महाराव साहबने मेरे खिलाफ बगावतकर उसपर पानी फेर दिया; शाही जान-मालका बड़ा नुकसान हुआ । मुझे अफ-सोस है, आप लोगोंने अक्लसे काम नहीं लिया ।’ औरङ्गजेब कह रहा था ।

‘वैसे मुगल हुक्मतकी वफादारी आप लोगोंकी काबिलेतारीफ है, मगर सलतनतका बहुत नुकसान हुआ देखकर गलती गवारा कैसे की जा सकती है ? फिर भी अगर आप हमारे दुश्मनका साथ छोड़ दें और हमारी हुक्मतकी वफादारीके लिए प्रतिज्ञा करें, तो सब माफ किया जा सकता है, नहीं तो इन्साफ करना होगा ।’ औरङ्गजेब बोला ।

किरणप्रभा एवं सभी उपस्थित सभासदोंने ध्यानसे सुना । लोगोंकी उत्सुकता प्रबल हो उठी । सभी किरणप्रभाकी बातोंकी प्रतीक्षा करने लगे ।

किरणप्रभा बोली—‘ओ भारत सम्राट ! मेरा न्याय होगा ? मैं तो चाहती हूँ मेरा ही नहीं, आपका न्याय हो, युवराज दाराशिकोहका न्याय हो और सबके सामने उपस्थित इन्साफ-पसन्द शाहंशाह आपके पिता श्रीमान् शाहजहाँका भी इन्साफ हो । मैं सबके इन्साफको देखना चाहती हूँ । इसी न्यायके लिए बूँदीने अपना सर्वस्व स्वाहा कर दिया है ।’

सम्राट शाहजहाँ मौन थे । उनके नेत्रोंमें आँसू आ गए । महारानी

किरणप्रभाके प्रति कुछ भी करनेमें वे अपनेको असमर्थ पा रहे थे । बूंदीकी कुर्बानियोंका मूल्य वे नहीं चुकता कर सकते थे । वे मन मसोस कर रह गए ।

औरङ्गजेब बीखला उठा । एक बार उसने जगतसिंहकी ओर घूरकर तीक्ष्ण दृष्टिपात् किया और दूसरी बार किरणप्रभाकी ओर दृष्टि दीड़ते हुए सम्राट शाहजहाँ एवं सभी उपस्थित सभासदोंकी ओर देखकर दृष्टि नीचे करते हुए घोर लज्जा एवं अपमानका अनुभव किया । औरङ्गजेबने अपने पिताको इसी उद्देश्यसे सभामें उपस्थित कराया था कि वे अपनी आँखों मेरी मुखालफत करनेवालोंकी हालत देखें, किन्तु सम्राट शाहजहाँने यह भी देखा कि औरङ्गजेबके सामने मुँह खोलकर उसके अत्याचारोंका भी कथन करनेवाली कोई शक्ति है ।

जगतसिंह बोला—‘जहाँपनाह ! आपको इस औरतका इन्साफ करना ही होगा ।’

‘मगर यह जो आपके महारानीकी बड़ी बहन है ? क्या इसका ख्याल मुझे नहीं है ? मैं इन्साफ करता, लेकिन आप....।’

‘दूरके सम्बन्धको न देखकर पहले तुम अपने पिता और भाईके संबंधमें विचार और इन्साफ करो आलमगीर ! रही मेरे इन्साफकी बात ! उसके लिए तुम्हें कष्ट सहन नहीं करने पड़ेंगे । मैं स्वयं इन्साफ जानती हूँ, करूँगी भी ।’ गम्भीरतापूर्वक किरणप्रभा बोली ।

प्रज्वलित अग्निमें महारानीकी वाणीने श्रुतका कार्य किया । औरङ्गजेबका क्रोध भड़का, वह बोला—‘महाराजा साहब ! यह क्या सुन रहा हूँ ?’ जगतसिंहकी ओर देखकर वह प्रतीक्षा करने लगा ।

औरङ्गजेबके क्रूर स्वभावसे सभी परिचित थे । ज्योतिप्रभाका हृदय काँपने लगा । उसे भयंकर परिणामकी कल्पना होने लगी । सभी सभासद् सहित जगतसिंह सहम गए । किरणप्रभा घावकी पीड़ा सहन करते हुए निर्भय थी ।

जगतसिंह बोला—‘ओ मन्दमति नारी ! वाणी संभालकर निकाल, किसके समक्ष बोल रही है, ध्यान रख; इतनी छूट नहीं दी जा सकती। बहुत हो चुका !’

‘मेरे द्वारा जीवनदान पानेवाला पामर जगतसिंह ! तुझे बोलनेका कोई अधिकार नहीं। मैं भारत सम्राट, नहीं, नहीं; पिता एवं भाईके रक्तके प्यासे उद्दण्ड एवं अत्याचारी दस्यु श्रीरंगजेबसे बोल रही हूँ।’

‘किन्तु सम्राटके समक्ष बोलनेका यही ढंग है ?’ तीव्र ध्वनिमें जगतसिंहने पूछा।

‘ढंग नहीं, न्यायकी अपेक्षा है, न्यायकी। मुझे न्याय कराना है। मैं निर्भय हूँ। मुझे भय या लोभ दिखाकर विचलित नहीं किया जा सकता।’ किरणप्रभा बोली।

‘किन्तु यह गुस्ताखी है।’ जगतसिंहने पुनः कहा।

‘चाटुकारोंकी दृष्टिमें हो सकती है; किन्तु न्याय प्राप्त करने और करानेमें बूँद देने अपना सर्वस्व बलिदान कर दिया है; अतः मुझे विरत नहीं किया जा सकता, इसे क्यों भूले जा रहे हो ?’ किरणप्रभा ओजस्वी वाणीमें बोली।

‘किन्तु इसका परिणाम जानती हो ?—प्राणदण्ड है।’

‘जिसका मुझे कुछ भी भय नहीं।’

‘हो सकता है, तुम्हें कुछ भी भय न हो, किन्तु यह उद्दण्डता काबिले बर्दाश्त नहीं है। यदि तुम्हें इसका दण्ड नहीं दिया जाता, तो दूसरे लोगोंकी इसी तरह बातें करनेकी जुर्रत हो सकती है, जो शाही इज्जतके विरुद्ध है। तोहीनी खुद एक अपराध है।’ जगतसिंहने कहा।

भूतपूर्व सम्राट शाहजहाँका रक्त खौल उठा; फिर भी वे जगतसिंहकी इन बातोंको रोक पानेमें अपनेको असमर्थ पाए।

‘मैं इन्साफ चाहती हूँ, जब तक इन्साफ नहीं होगा; तब तक हमारी बग़ावत जारी रहेगी।’ दृढ़ता व्यक्त करते हुए किरणप्रभा बोली।

‘किन्तु तुम्हें या तो शाही हुक्मतके प्रति वफादारी दिखानी होगी, या प्राणदण्ड भोगना होगा। दो में एक, जिसे तुम चाहो, वरण कर लो। अधिक समय नहीं दिया जा सकता।’ जगतसिंहने कहा।

जगतसिंहकी बातोंका समर्थन करते हुए औरंगजेबने कहा—‘ठीक कहते हो महाराज साहब !’

‘बोलो क्या चाहती हो ?’ जगतसिंह पुनः बोल उठा।

‘मैं तुमसे वार्त्ता नहीं करना चाहती जगतसिंह ! जो कुछ भी पूछता हो, वह औरंगजेब मुझसे स्वयं पूछे, क्योंकि युद्ध मेरे और उसके बीचमें हुआ है। तुम उसके एक साधारण सैनिक हवलदार हो, जो उसकी दी गयी रोटीपर पलते हो; जब तक तुम्हारे मालिक मौजूद हैं, तुम्हें तब तक तो नहीं ही बोलना चाहिए; क्या इतनी भी तुम्हें सैनिक-शिक्षा नहीं मिली ? यही अनुशासन है ?’

जगतसिंहका स्वाभिमान् आहत हो उठा, उसने सँभलकर पुनः कहा—‘किन्तु यह पूछनेकी मुझे शक्ति प्रदानकी जा चुकी है। मुझे सम्राटने हुक्म दिया है। मैं बार-बार हिदायत देता जा रहा हूँ, किन्तु मेरी बातोंपर तुम्हारा ध्यान नहीं जा पा रहा है। सावधान !’ डाटकर जगतसिंह बोला।

ज्योतिप्रभाका हृदय काँप उठा और सम्राट शाहजहाँ भी आन्दोलित हो उठे। ज्योतिप्रभा न तो किरणप्रभाको मनाकर पा रही थी और न जगतसिंहको। उसके हृदयमें द्वन्द्व मचा था। उसने अन्तमें अधीर होकर निवेदन किया—‘बहन किरणप्रभा पीड़ासे अत्यधिक व्याकुल हैं, अतः उनकी बातोंपर विशेष ध्यान न दिया जाकर क्षमा किया जाय।’

‘क्षमा-वमा कुछ नहीं हो सकता। उसे दण्ड दिया जायगा, समझी !’ कहते हुए जगतसिंह तलवार लेकर उठ खड़ा हुआ।

किन्तु युद्ध-भूमिमें मेरे नामपर बहन किरणप्रभाने आपको जीवन-

दान दिया है। यदि वे चाहतीं तो, आपका मस्तक काट लिए होतीं। इसे नहीं भूलना चाहिए।' ज्योतिप्रभा उत्तेजित होकर उबल पड़ी।

ज्योतिप्रभाके ऊपर कड़ी दृष्टिसे घूरते हुए, उसकी बातें अनसुनी-कर जगतसिंह आगे बढ़ा और झटका देकर ज्योति प्रभाको धकेल दिया। वह लड़खड़ाकर गिर पड़ी। जगतसिंह आगे बढ़कर बंदिनी किरणप्रभासे बोला--'तुमने क्या निश्चय किया? शाहंशाहके प्रति वफादारी या बगावत।' हाथमें उसके नंगी तलवार चमक रही थी। शाहजहाँकी दृष्टि भी ऊपर उठी। औरंगजेब मौन होकर देखने लगा।

'मैं अपना मत प्रकट कर चुकी हूँ।' आँचल सँभालकर जगतसिंहको अपने निकट देखकर कुछ सावधान होकर किरणप्रभाके संक्षिप्त उत्तर दिया।

'अर्थात् बगावत? क्यों यही न?' तीव्र ध्वनिमें जगतसिंह बोला। सभी सभासद् काँप रहे थे। भूतपूर्व सम्राट शाहजहाँ अपनेको भारी असमर्थ पा रहे थे, अतः मौन थे।

'खुब सोच-समझ लो। यह तलवार तुम्हारा केवल एक क्षण और प्रतीक्षा करेगी। बोलो--'हाँ' या 'नहीं'।

जगतसिंहकी इस अशिष्टतासे सम्राट शाहजहाँके नेत्र लाल हो उठे। उनकी करुणा एकके बाद दूसरी अशिष्टताओंसे समाप्त होती जा रही थी।

किरणप्रभा निर्भय थी। उसे न तो औरंगजेबका भय था और न जगतसिंहका। उसने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया--'तलवार लपलपाकर भयभीत करना चाहता है पामर! यदि तेरी युद्धकी इच्छा हो, तो मुझे भी तलवार ले लेने दे।'

तभी ज्योतिप्रभा दौड़कर दोनोंके बीच आ पहुँची। उसने फटकारते हुए जगतसिंहसे कहा--'मैं अपनी आँखोंसे यह दृश्य नहीं देख सकती, तुम्हारी तलवारका सामना पहले मेरा मस्तक करेगा तभी...'।

किरणप्रभा अपने घावकी पीड़ा सहन करते हुए शीघ्रतासे उठकर खड़ी हो गयी, ज्योतिप्रभाका हाथ अपने घायल हाथसे थामकर उसने दूर करते हुए फटकारा—‘इसीके सिन्दूरने तुम्हें अनेक बार प्राणदान करनेके लिए मुझे बाध्य किया है, नहीं तो मैं तुम्हारा पुरुषार्थ जानती हूँ। अब तक तुम्हारी वीरता बुझ चुकी होती।’

जगतसिंह उग्ररूप धारणकर तीव्र स्वरमें तड़पा और बोला—‘ठीक है, अब तुम्हें कोई शक्ति नहीं बचा सकती। मृत्युके लिए तैयार हो जाओ।’ उसके हाथकी तलवार चमकते हुए ऊपर उठी और किरणप्रभापर गिरना ही चाहती थी कि एक ओरसे हृदय दहला देने-वाली प्रचण्ड हुंकार सुनाई पड़ी—‘जगतसिंह ! पीछे हटो।’ जगतसिंह की तलवार स्तम्भित हो उठी। चौंककर उसने ध्वनि ग्रानेवाले स्थानकी ओर दृष्टिपात किया। सारी सभा सहित किरणप्रभाकी भी दृष्टि उसी ओर जा मुड़ी। सबोंने देखा—यह सम्राट शाहजहाँ ही थे, जिनके होठ क्रोधमें फड़क रहे थे। पूरा शरीर महाकालकी तरह उग्र हो उठा था। नेत्रोंसे क्रोधाग्निकी ज्वाला धधक रही थी। मानों जगतसिंहको वह भस्मसात् कर देना चाहती हो। ‘वत्तमीज कहीं के ! औरत के ऊपर हाथ उठाता है ? यदि कोई इन्साफ-पसन्द मद होता, तो तुम्हारी चमड़ी उधेड़ लेता।’ सम्राट गरज रहे थे। सभी सभासद सम्राट शाह-जहाँकी बातोंसे बड़े प्रभावित हुए। लगता था, सबकी दबी हुई उत्तेजनाको सम्राटने पूरीकी पूरी अभिव्यंजित कर दी है।

जगतसिंह सहम गया था, ज्योतिप्रभा जो क्षणभर मूर्च्छित थी, चैतन्य होनेपर समझ नहीं पा रही थी। वातावरण और उग्र होता जा रहा था। तभी औरंगजेबने हस्तक्षेप करते हुए कहा—‘महाराव साहब; आप शान्त होकर यहाँ बैठें। मैं इस बगावत्का इन्साफ करता हूँ।’

जगतसिंह निष्प्रभ लौटकर बैठा । उसके इस अपमानसे सभी दरबारी मन ही मन बड़े प्रसन्न हुए ।

‘हाँ महारानी साहिबा ! आप ध्यान देकर शाही शर्त्तनामेको सुनें । आपके सामने दो रास्ते हैं—अब्वल यह कि आप दाराको सल्तनतके हवाले कर दें और मैं अपनी पूरी सेना आपके यहाँसे हटाकर मेल कर लूँ, जिससे आपके हमारे बीच पहले जैसा ही रिश्ता बरकरार रहे । दोयम् यह कि अगरच आप अपनी जिद्दपर कायम रहकर बगवतको बढ़ावा देती रहेंगी, तो आपकी इन्कलाबी हस्ती खत्म करनेके लिए शाही ताकत पूरी कोशिश करेगी । बोलिए, आप क्या चाहती हैं ?’ सम्मान प्रकट करते हुए औरङ्गजेब बोला ।

‘आप अपनी बातें, जो एक बार कही गयी हों; राजनीतकी तुच्छ स्वार्थ-सिद्धिके लिए पलट सकते हैं, किन्तु एक बार जो मैंने कह दिया । उसपर दृढ़तापूर्वक आचरण करनेकी शक्ति भी रखती हूँ । आप अपनी ताकत, अपना इन्साफ जो भी दिखाना चाहें, दिखा सकते हैं । मैंने अपनी स्थिति अनेक बार स्पष्ट कर दी है ।’ किरणप्रभा बोली ।

‘ठीक है, आपको पूरा मौका दिया गया । कई बार हिदायत दी गयी, मगर आप अपनी जिद्दपर कायम हैं, जिसका मुझे बड़े अफसोस-के साथ यह फैसला करना पड़ता है कि कल तड़के ही आपको फाँसी-की सजा दी जाय । तब तकके लिए आप शाही कैदीकी शक्लमें जेल-खानेमें बन्द रहेंगी । बस अब आजकी कारंवाई खत्म होती है ।’* कहते हुए औरङ्गजेब खड़ा हो गया । उसके सम्मानमें समस्त दरबारी उठकर खड़े हो गए । धीरे-धीरे सारा दरबार खाली होने लगा । केवल महारानी किरणप्रभा एवं भूतपूर्व सम्राट शाहजहाँ सैनिक घेरेमें

२१ सूबोंमें भारत विभक्त था। प्रस्तुत उपन्यासमें आया 'कासिमखान' शाहजहाँ-समयके २२ सूबोंमेंसे ही एक सूबेका सूबेदार था।

'मनसबदार'—यह तैतीस श्रेणियोंकी पदवी थी। सबमे नीचे-का मनसब दसका और सबसे ऊँचे का मनसब बारह हजारका होता था। पाँच हजार के ऊपरके मनसब राजकुमारोंको प्रदान होते थे। किन्तु बादमें सात हजार तककी मनसबदारी कुछ व्यक्तियोंको उनकी राजकीय सेवाके अनुसार प्रदानकी जानेकी व्यवस्थाकी गयी। इनको सम्राट मनोनीत करता था।

उपन्यासके पात्र 'जगतसिंह' एवं 'छत्रसाल' 'सप्तहजारी मनसबदार' ही थे। समस्त मनसबदारी दो भागोंमें बँटी थी; जो दरबारमें उपस्थित रहते थे और जो प्रान्तोंमें रहते थे। जगतसिंह संभवतः दर-बारी मनसबदार हीं थे।

'डाक चौकीका दारोगा — इसमें संवाद-लेखक, संदेश-वाहक एवं गुप्तचर आदिकी व्यवस्था थी। उपन्यासमें इस विभागके गुप्तचरोंका दल विशेष सक्रिय है।

कवि भूषणके छत्रसाल एवं प्रस्तुत उपन्यासके छत्रसाल—भूषणके छत्रसालका विवरण-सूत्र इस प्रकार है—प्राचीनकालमें 'गहिरवंशीय' राजा 'वीरभद्र' के पुत्र 'हेमकर्ण' काशीसे बहिष्कृत होकर मध्यभारतके पूर्ववर्ती यमुना, विन्ध्याचल एवं मालवकी त्रिपुरीमें विध्यवासिनीदेवीकी उपासना करने लगे। सिद्धके समय इनके रक्तकी बूँदोंके गिरनेसे बुन्देल-खण्डके नामका संबंध जोड़ा जाता है। कालान्तरमें इसी कुलके चंपत-रायजी जागीरदारके परिवारमें मोरपहाड़ीके जंगलमें सं० १७०६ में छत्रसालका जन्म हुआ, यह ई० सन् के अनुसार १६४६ था, जो मेरे उपन्यासमें वर्णित नहीं है। उपन्यासके छत्रसाल शाहजहाँके समयमें ही रहे, जो उसे बड़े प्रिय थे, इनकी मृत्यु १६५८ ई० में—युद्धमें हुई। हाँ, भूषणके छत्रसालभी बड़े धर्मप्रेमी, वीर एवं उदार थे, उनका राज्या-

भिषेक सं० १७४४ में योगिराज प्राणनाथके आदेशसे हुआ । तब तक प्रस्तुत उपन्यासके छत्रसाल मर चुके थे । 'भूषण'के छत्रसाल औरंगजेबकी मृत्यु सं० १७६४ के बाद भी २७ वर्षोंकी लम्बी अवधिमें सं० १७९१ तक जीवित रहे । प्रस्तुत उपन्यासके छत्रसाल तो शाहजहाँ एवं औरंगजेबके जीवनकालमें ही सामूगढ़के युद्धमें सन् १६५८ में मर चुके थे, जब कि 'भूषण'के छत्रसाल ८५ वर्षकी अवस्थामें बीमार होकर मरे । इस प्रकार दोनों छत्रसालोंको एक मान बैठना उचित नहीं ।

आश्चर्य एवं दुःखकी बात है कि बूंदीके महाराज छत्रसाल एवं महारानी किरणप्रभा (जो प्रस्तुत उपन्यासके प्रमुख पात्र हैं) का बलिदान समयके प्रवाहसे इतिहासविज्ञोंकी दृष्टिसे ओभल रहा है । आज उनके ध्वंसावशेषभी लगभग मिट चुके हैं, अतः ऐसी स्थितिमें प्रस्तुत उपन्यासका लक्ष्य है कि इतिहासविज्ञ महानुभाव खण्डहरोंमें दबे इस इत्तवृत्तके वैज्ञानिक खोजकी ओर प्रवृत्त हों ।



